नेहरूकी वाणी

अर्थात्

[पं० जवाहरलाल नेहरूके अबतकके व्याख्यान
और लेखोंका महत्वपूर्ण संग्रह]

सम्पादक

श्री गिरीशचन्द्र जोशी

प्रकाशक —
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१६, अहियापुर,
इलाहाबाद।

प्रथम संस्करण] फरवरी १९४७ [मूल्य २।)

प्रकाशक—
सुशीलकृष्ण शुक्ल
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१६, अहियापुर, इलाहाबाद।

Printed by S. B. Bubna.
at
National Literature Press,
106 Cotton Street,
Calcutta.

विषय सूची

—::o::—

नेहरूजीकी वाणी

भारत और विश्व

मुझे और मेरे साथियोंको भारत सरकारमें ऊंचे पदोंपर बैठे हुए आज छः दिन हो गये हैं। उस दिन इस प्राचीन देशमें एक नई सरकारका जन्म हुआ, जिसे अन्तःकालीन या अस्थायी सरकार कहते हैं और जो पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेकी सीढ़ी है। संसारके सभी भागोंसे और हिन्दुस्तानके हर कोनेसे हमें शुभ कामनाके हजारों सन्देश मिले। फिर भी हमने इस ऐतिहासिक घटनाके मनाये जानेके लिये नहीं कहा बल्कि लोगोंके जोशको दबाया, क्योंकि हम चाहते थे कि वे यह महसूस करें कि हमें अभी और चलना है और हमारे उद्देश्यकी प्राप्ति अभी नहीं हुई। हमारे रास्तेमें बहुत मुश्किल और रुकावटें हैं और हो सकता है मंजिल

इतनी नजदीक न हो जितनी हम समझते हैं। अब किसी भी तरहकी कमजोरी या ढीलापन हमारे उद्देश्यके लिए घातक होगा।

कलकत्तेकी भयानक दुर्घटना और भाईसे भाईकी निरर्थक लड़ाईके कारण हमारे दिलोंपर बोझ भी था। जिस स्वतन्त्रताकी हमने कामना की थी और जिसके लिये हम पीढ़ियोंसे कष्ट और मुसीबतें झेलते आये हैं, वह हिन्दुस्थानके सब लोगोंके लिए है, किसी एक गुट या वर्गके या किसी एक धर्मके लोगोंके लिये नहीं। हमारा लक्ष्य सहयोगिताके आधारपर एक व्यवस्था कायम करना है, जिसमें बराबरके साझेदारकी हैसियतसे सभीको जीवनकी जरूरी चीजोंमें हिस्सा मिले। फिर यह झगड़ा, यह आपसी संदेह और डर क्यों ?

आज मैं आपसे सरकारी नीति या भविष्यके कार्यक्रमके बारेमें नहीं --वह तो फिर कभी बताया जायगा --बल्कि उस प्रेम और स्नेहके लिये जो आपने हमें उदारतासे भेजा है आपको धन्यवाद देनेके लिये बोल रहा हूँ। इस प्रेम और सहयोगकी भावनाका हम कद्र करते हैं। किन्तु हमारे सामने जो कठिन दिन है उनमें हमें अधिक जरूरत पड़ेगी। एक मित्रने मुझे यह सन्देश भेजा है। "मेरी प्रार्थना है कि आप सब विपत्तियोंपर विजय पायें। राष्ट्रके जहाजके प्रथम चालक! मेरी शुभ कामना आपके साथ है।" कितना अच्छा सन्देश है। पर हमारे आगे अनेक तूफान हैं और हमारा जहाज पुराना, घिसा हुआ

और धीमे चलनेवाला है। इसलिये तेज रफ्तारके इस जमाने के वह लायक नहीं है। हमें इसे फेंककर दूसरा जहाज लेना होगा परन्तु जहाज कितना ही पुराना और चालक कैसा ही कमजोर क्यों न हो जब करोड़ों दिल और हाथ अपनी इच्छासे सहायता देनेको तैयार हैं, हम समुद्रके झकोले सह सकते हैं और भविष्य का भरोसेके साथ मुकाबला कर सकते हैं।

उस भविष्यका आगे ही निर्माण हो रहा है और हमारा पुराना और प्यारा देश हिन्दुस्तान दुख दर्दके बीच एक बार फिर ऊपर उठ रहा है। उसमें आत्म विश्वास है और अपने लक्ष्यमें उसकी श्रद्धा है। वह फिरसे जवान हो गया है और उसकी आंखोंमें चमक है। मुद्दतों वह एक तंग संसारमें रहा है और आत्म-चिन्तनमें खोया सा रहा है। पर अब उसने विशाल दुनियांपर नजर डाली है और संसारकी दूसरी कौमोंकी तरफ दोस्तीका हाथ उठाया है, यद्यपि संसार अभी भी संघर्ष और लड़ाई के विचारोंमें उलझा है।

अन्तःकालीन सरकार बड़ी योजनाका एक भाग है। उस योजनामें विधान परिषद् शामिल है जो आजाद और स्वाधीन हिन्दुस्तानका विधान बनानेके लिये जल्दी ही बैठनेवाली है। पूर्ण स्वराज्यके जल्द मिलनेकी आशाके कारण ही हमने यह सरकार बनायी है और हमारा इरादा है हम इस तरह काम करें कि आन्तरिक और विदेशी दोनों मामलोंमें हम व्यवहारमें क्रमशः आजादी हासिल कर सकें। हम अन्तर्राष्ट्रीय कांफ्रेंसोंमें पूरा

हिस्सा लेंगे, और यह काम हम किसी दूसरे राष्ट्रके पुछल्लेके रूप में नहीं बल्कि एक आजाद राष्ट्रकी हैसियतसे और अपनी ही नीतिसे करेंगे।

X हमारा इरादा दूसरे राष्ट्रोंसे सीधे और गहरे मेल-मिलाप बढ़ाने और दुनियाकी शांति और आजादीके लिये उनसे सहयोग करनेका है। जहांतक हो सके हम गुटोंकी शक्ति -- राजनीतिमें जो एक दूसरेके खिलाफ होती है और जिसके कारण संसारको और भी बड़े संकटमें धकेल सकती है, दूर रहना चाहते हैं। हमारा विश्वास है कि शांति और आजादी अविभाज्य है। कहीं भी आजादीका अभाव किसी और जगह शांतिको खतरेमें डाल सकता है और लड़ाई तथा संघर्षके बीज बो सकता है। उप-निवेशों और पराधीन देशों और उनमें रहनेवालोंकी आजादीमें हमारी खास दिलचस्पी है। सिद्धान्त रूपसे और व्यवहारमें सब जातियोंको बराबर मौका मिले, इसमें भी हमारी दिलचस्पी है। जातीयताके नाजी सिद्धान्तका हम तीव्र खंडन करते हैं चाहे वह कहीं भी और किसी भी रूपमें प्रचलित हो। हम किसी पर कब्जा जमाना नहीं चाहते और न ही दूसरी कौमोंके मुकाबिलेमें खास रियायतें ही चाहते हैं। मगर हम अपने लोगोंके लिये चाहे वे कहीं भी जायं सम्मानपूर्ण और बराबरीका बर्ताव जरूर चाहते हैं। हम उनके खिलाफ भेदभाव नहीं सह सकते।X

आन्तरिक संघर्षों क्लेशों और प्रतिद्वन्द्वोंके बावजूद संसार अनिवार्य रूपसे निकटतर सहयोग और संसार व्यापी राष्ट्रमण्डल

की स्थापनाकी ओर बढ़ रहा है। ऐसे राष्ट्रमण्डलकी स्थापनाके लिये आजाद हिन्दुस्तान कार्य करेगा—वह राष्ट्रमण्डल जिसमें स्वतन्त्रता सहयोग और प्रेम हो और जिसमें कोई वर्ग या गुट दूसरे गुटका शोषण न करे।

संघर्षों से भरे अपने पिछले इतिहासके बावजूद हमें आशा है कि हिन्दुस्तानके साथ इङ्गलैंड और ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके देशोंसे मैत्रीपूर्ण और सहयोगपूर्ण सम्बन्ध होंगे। परन्तु राष्ट्रमण्डलके एक भागमें आज जो हो रहा है उसपर नजर डालना ठीक ही होगा। दक्षिणी अफ्रीकामें वहांकी सरकारने जातीयताके सिद्धान्तको अपनाया है और वहां एक जातीय अल्पमतके अत्याचारके विरुद्ध हिन्दुस्तानी वीरतासे मोर्चा ले रहे हैं। अगर यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया तो यह दुनियाको व्यापक संघर्षों और संकटोंकी ओर ले जायगा

अमेरिकाके लोगोंको, जिन्हें विधिने अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें निर्णायक स्थान दिया है हम अपनी शुभ कामनाएं भेजते हैं। हमारा विश्वास है कि यह महान दायित्व सब जगह मानवीय शांति और आजादीकी उन्नतिका आधार बनेगा। संसारके उस महान राष्ट्र सोवियत यूनियनको भी जिसका दायित्व भी नव संसारके निर्माणमें कम नहीं है—हम शुभ कामनाएं भेजते हैं। रूस और अमेरिका एशियामें हमारे पड़ोसी हैं और अनिवार्य रूप से हमें बहुतसे काम मिलकर करने हैं और एक दूसरेसे व्यवहार करना है।

हम एशियावासी हैं और एशियावाले औरोंकी अपेक्षा हमारे अधिक निकट हैं। भारतकी स्थिति ऐसी है कि वह पश्चिमी, दक्षिणी, पूर्वी एशियाकी धुरी है। बीते कालमें भारतकी सभ्यता का बहाव इन सब देशोंकी ओर रहा और उनका प्रभाव भी भारत पर कई तरहसे पड़ा। वह पुराना सम्बन्ध फिर कायम हो रहा है और आगे भारत और दक्षिण-पूर्वी एशिया और भारत अफगानिस्तान, ईरान और अरब राष्ट्रोंसे फिरसे नाता जोड़ने जा रहा है। इन आजाद देशोंके परस्पर सम्बन्धको हमें और बढ़ाना चढ़ाना चाहिये। इंडोनेशियाके स्वतंत्रता-संग्राममें भारत की गहरी दिलचस्पी रही है और आज हम उस देशको अपनी शुभ कामनाएं भेजते हैं।

हमारा पड़ोसी चीन, वह बड़ा देश, जिसका अतीत महान था, सदासे हमारा मित्र रहा है। अब यह दोस्ती और भी बढ़ेगी और निभेगी। हमारी यह दिली इच्छा है कि चीनमें वर्तमान झगड़े जल्दी ही खत्म हो जायें और शीघ्र ही उस देशमें एकता और लोकतन्त्र कायम हो ताकि चीन संसारमें शांति और प्रगति के कार्यमें हाथ बटा सके।

मैंने घरेलू नीतिके बारेमें कुछ नहीं कहा है और न ही इस समय कुछ कहनेकी मेरी इच्छा है, परन्तु हमारी घरेलू नीतिका आधार भी वे ही सिद्धान्त होंगे जिन्हें हमने सालोंसे अपनाया है।

हम बिसराये हुए जन साधारणका ख्याल करेंगे और उसे मदद देना व उसके जीवनके स्तरको ऊंचा करना हमारा काम

होगा। छुआछूत और हर तरहकी जबरन लादी हुई असमानता के खिलाफ हमारी लड़ाई चलेगी और हम खासकर उनकी सहायता करनेकी कोशिश करेंगे जो आर्थिक या किसी दूसरी तरहसे पिछड़े हुए हैं। आज हमारे देशमें करोड़ों अन्न भूखे, नंगे और बेघर हैं और बहुत सारे भुखमरीके द्वारपर हैं, इस तात्कालिक अवश्यकताको मिटाना हमारा जरूरी और कठिन काम है और हमें आशा है कि दूसरे देश अनाज भेजकर हमारी सहायता करेंगे।

इतना ही जरूरी काम हमारे लिये उस कलहको मिटाना है जिसका आज हिन्दुस्तानमें बोलबाला है। आपसकी लड़ाईसे आजादीके उस भवनका हम निर्माण न कर सकेंगे, जिसका हम देरसे सपना देखते रहे हैं। राजनीतिक मंचपर चाहे कुछ भी घटनाएं घटती रहें, हम सबको यहीं रहना है और यहीं मिलकर गुजर करनी है। हिंसा और घृणासे यह आधारभूत बात बदली नहीं जा सकती और न ही इससे भारतमें होनेवाले परिवर्तन रुक सकते हैं।

विधान परिषद्के दलों और गुटबन्दीके बारेमें बहुत गर्मागर्म बहस हुई है। हम उन दलोंमें बैठनेको बिल्कुल तैयार हैं—और हम इस बातको स्वीकार भी कर चुके हैं—जिसमें गुटबन्दी के प्रश्नपर विचार होगा। अपने साथियों और अपनी ओरसे मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि विधान-परिषद्को हम ऐसा अखाड़ा नहीं समझते जहाँ जबर्दस्ती किसीके ऊपर कोई मत लादा जाय। संगठित और सन्तुष्ट भारतके निर्माणका यह मार्ग नहीं है। हमारी तलाश तो ऐसे सच्चे हल ढूढ़नेकी है जिनके पीछे

बहुमतकी सहमति और सद्भावना हो। विधान-परिषदमें हम इसी इरादेसे जायेंगे कि हम विवादग्रस्त मामलोंमें भी समान आधार ढूँढ़ सकें और इसी लिये जो कुछ हुआ है और जो कुछ कठोर शब्द कहे गये हैं, उनके बावजूद भी हमने सहयोग का द्वार खुला रखा है। हम उन्हें भी, जिन्हें हमसे मतभेद है दावत देते हैं कि वे हमारे बराबरके साथी बनकर विधान-परिषद में आयें। वे किसी भी तरह अपनेको बंधा हुआ न समझें। हो सकता है जब हम मिल कर समान कार्योंमें जुटें तो मौजूदा अड़चनें दूर हो जायें।

हिन्दुस्तान आज आगे बढ़ रहा है और पुराना ढांचा बदल रहा है। बहुत देर तक हम दूसरोंकी कठपुतली बने जमानेकी रफ्तारको बेबस हुए देखते रहे। आज हमारी जनताके हाथमें ताकत आ गई है और हम अपना इतिहास अपनी इच्छाके अनुकूल बना सकेंगे। आइये हम सब मिलकर इस महान् कार्यमें जुटें और हिन्दुस्तानको अपने दिलका तारा बनायें—वह हिन्दुस्तान जो राष्ट्रोंमें महान् और शान्ति तथा प्रगतिके कामोंमें सबसे आगे होगा। द्वार खुला है और भविष्य हम सबको बुला रहा है। हार और जीतका तो सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि हम सबको मिल कर साथियोंकी तरह आगे बढ़ना है। या तो सबकी साथही जीत होगी, नहीं तो सभी गड्ढेमें गिरेंगे। असफलताका क्या काम? आइये हम सब मिलकर सफलताकी ओर, पूर्ण स्वराज्यकी ओर ४० करोड़ जनताके कल्याण और आजादी ओर बढ़ें। जयहिन्द!

साम्राज्यवाद को चुनौती
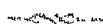
पिछले ४४ वर्षोंसे राष्ट्रीय कांग्रेस भारतकी स्वाधीनताके लिये संग्राम करती आ रही है। इस कालमें कुछ स्थिरता किन्तु दृढ़ता पूर्वक इसने राष्ट्रीय आत्म-चेतना जाग्रत की है और राष्ट्रीय आन्दोलन गठित किया है आज हम संक्रान्तिकालमें एकत्र हुए हैं, हम अपनी ताकत और दुर्बलतासे परिचित हैं आशा तथा आशंका से भविष्यकी ओर देख रहे हैं। ऐसे अवसर पर यह स्वाभाविक है कि हम उनकी याद करें जिन्होंने बिना किसी पुरस्कारकी आशा के अपने प्राणोंकी बलि दे दी ताकि जो उनके पथपर चलें वे सफलताका आनन्द उठा सकें। बहुतसे पुराने स्वाधीनताके योद्धा आज हमारे साथ नहीं हैं, और हम उनकी महान् सृष्टिके सम्मुख खड़े हैं। संसारका यही काम रहा है किन्तु स्वतन्त्र भारतकी नींव डालनेका उन्होंने जो महान् कार्य किया है, उसे हममेंसे कोई नहीं भूल सकता और न हममें से कोई भी उन्हें भूल सकते हैं, जिन

स्वाधीनता-प्रेमी स्त्री-पुरुषोंने बिना परिणामकी चिन्ता किये अपने नव-जीवनोंकी बलि चढ़ा दी या विदेशी आधिपत्यके विरोध स्वरूप अपनी आशाभरी जवानियोंको होम दिया। बहुतसे शहीदोंके नाम तक भी हम नहीं जानते। उन शहीदोंने बिना जन-प्रशंसा की उम्मीदके देशका काम किया और यातनाएं भोगी और उन्होंने अपने हृदयके रक्तसे भारतकी स्वतंत्रताके नवजात पौधेको सींचा हममें से बहुत भावापन्न हो गये और समझौतेके चक्करमें पड़ गये, पर वे हिमालयकी तरह अड़े खड़े रहे और भारतकी जनता की स्वाधीनताकी शंखध्वनि करते रहे, उन्होंने संसारमें घोषित कर दिया कि बुरे दिनोंमें भी भारतमें जीवन-ज्योति बाकी है, क्योंकि भारतने दमन और दासता अस्वीकार कर दी है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनकी इमारत, एकके बाद एक ईंट रखकर बनायी गयी है और बाज-बाज वक्त भारतको अपने नौनिहाल शहीदोंकी लाशोंपर बढ़ना पड़ा है। वे हमारे साथ भले ही न हों, मगर उनका अपूर्व साहस हमारे साथ है। और भारत अभी भी यतीन्द्रनाथ और विजाया जैसे शहीद उत्पन्न कर सकता है।

इसी महिमामय पीढ़ीके हम उत्तराधिकारी हैं, और आप मुझे उसीका इनचार्ज बना रहे हैं। मैं जानता हूं मैं इस सम्मान पूर्ण पदपर संयोगवश पहुंच गया हूँ। आप उनको इस आसनपर बैठाना चाहते थे जो आजकी दुनियामें सर्वोपरि हैं, और उनसे बढ़कर उत्तम चुनाव नहीं हो सकता था। लेकिन मेरा भाग्य और वे महापुरुष एक साथ मिल गये और आपकी तथा मेरी इच्छाके

खिलाफ महान् उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर मुझे बिठा दिया। क्या इस स्थितिमें पहुंचानेके लिये मैं कृतज्ञता प्रगट करूं ? आप बहुतसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय विषयोंपर विचार विमर्श करेंगे जो इस समय आपके सामने उपस्थित हैं, और आपके निर्णय भारतीय इतिहास की धारा बदल दे सकते हैं, लेकिन स्मरण रखिये, आप ही अकेले नहीं हैं जिनके सामने समस्याएं उपस्थित हैं, तमाम दुनिया ही आज एक महान् प्रश्न बना हुआ है, हर देश और हर देशवासीके सामने समस्याएं हैं। विश्वासका युग जिसमें आराम और स्थायित्व रहता है—बीत चुका और हर विषयमें सवाल पैदा हो गया है, हमारे पुरुषोंको वह चाहे जितना सनातन और पवित्र लगता रहा हो। हर जगह सन्देह और बेचैनी है और राज्य तथा समाजकी जड़ें हिल गयी हैं। स्वाधीनता, न्याय, सम्पत्ति तथा परिवार सम्बन्धी पूर्व प्रतिष्ठित विचारोंपर आक्रमण हो रहा है और परिणाम अधरमें लटक रहा है। हम प्राचीन इतिहासके अन्तःकालमें हैं जब कि सारा संसार ही संक्रान्तिकालमें जो कि एक नये आर्डरको जन्म देना है।

यह कोई नहीं कह सकता कि भविष्यमें क्या होगा, लेकिन हम विश्वास पूर्वक कह सकते हैं कि एशिया और भारत भी संसार की भावीनीतिमें निर्णायक पार्ट अदा करेगा। युरोपियन आधिपत्यके दिनका अवसान हो रहा है। अब युरोप संसारकी गतिविधि और दिलचस्पीका केन्द्र नहीं रह गया। भविष्य एशिया और अमेरिकाके हाथमें है। झूठे और अपूर्ण इतिहासके कारण बहुतसे

सोचने लगे कि युरोपने हमेशा ही बाकी संसारपर आधिपत्य रखा, हम भूल गये कि भारत ही है जिसने महान् सिकन्दरकी सैनिक शक्ति छिन्न-भिन्नकी थी। विचारोंमें एशिया - खासकर भारत हमेशा महिमामय रहा है विचारोंकी तरह कामोंमें भी एशियाका इतिहास उत्तम रहा है। लेकिन हममें से कोई नहीं चाहता कि एशिया या युरोप संसारके देशोंको फिर रौंदे।

भारत आज विश्वान्दोलनका भाग है। सिर्फ चीन, टर्की फारस और मिस्र ही नहीं, पश्चिमके देश भी इस आन्दोलन में भाग ले रहे हैं, भारत इस आन्दोलनसे अपनेको अलग नहीं रख सकता। हमारी अपनी सख्त और उलझी हुई समस्याएं हैं। और हम उन्हें छोड़कर संसार पर असर डालनेवाली समस्याओं का आश्रय नहीं ले सकते। लेकिन अगर हम संसारकी उपेक्षा करें तो यह मुमकिन नहीं है। आजकी सभ्यता किसी देश या जाति की सृष्टि नहीं है और न उस पर किसी एकका एकाधिकार है। इसमें सभी देशोंका दान है और इसे विभिन्न देशोंने अपनी आवश्यकताके अनुसार अपनाया है। अगर भारतको संसारको कुछ सन्देश देना है, जैसा कि मैं मानता हूं कि देना है तो उसे, अन्य जातियों से भी बहुत कुछ लेना और सीखना होगा।

जब कि सब कुछ बदल रहा है, भारतीय इतिहासकी धाराका स्मरण रखना उत्तम होगा। हजारों वर्षोंके परिवर्तन, संघर्ष और अनेक विदेशी प्रभावका मुकाबिला करता हुआ भारतका सामाजिक ढांचा जिस स्थिरतासे खड़ा रहा वह जितना आश्चर्य

जनक है, उससे भी आश्चर्य जनक बहुत सी बातें इतिहासमें हैं। समाज इसलिये बना रहा है कि वह बराबर या तो विदेशी प्रभाव को हजम करता गया या उसे सहता गया। उसका उद्देश्य विभिन्न संस्कृतियोंका विनाश नहीं, सामञ्जस्य था। आर्य और अनार्य एक दूसरेकी संस्कृति अधिकाधिक स्वीकार कर एक जगह बस गये। और पारसियों जैसे बाहरसे आनेवाले लोगोंका भी स्वागत हुआ और उन्हें भी स्थान मिल गया। मुसलमानोंके आगमनसे उस सामञ्जस्यमें बाधा पहुंची किन्तु भारतने सामञ्जस्य स्थापित करनेकी चेष्टाकी और बहुत हद तक सफलता प्राप्त की। दुर्भाग्यवश पूर्ण सामञ्जस्य स्थापित होनेके पहले ही राज नैतिक ढांचा टूट गया, अंग्रेज आ गये और हम हार गये।

स्थायी समाज निर्माणमें भारतकी सफलता महान् थी किन्तु एक महत्वपूर्ण विषयमें वह सफल न हो सका और इसीलिये वह हार गया और विजित पड़ा रहा। सामानताकी समस्याका कोई हल नहीं निकाला गया। भारतने समानताकी जान बूझ कर उपेक्षा की और असमानतापर अपने समाजकी इमारत बनायी, इस नीतिके परिणाम स्वरूप कल तक करोड़ों जनता दबी पड़ी थी जिसे विकाशका नाममात्रका अवसर प्राप्त था।

जिस समय युरोपमें धर्मके नामपर युद्ध हो रहे थे और ईसाई ईसाके नामपर एक दूसरेका गला काट रहे थे, भारत सहिष्णु था यद्यपि आज सहिष्णुता बहुत कम है। कुछ धार्मिक स्वाधीनता पानेके बाद, युरोपने राजनैतिक स्वाधीनता तथा राजनैतिक तथा

कानूनी समानता प्राप्त की इसके बाद युरोपने अनुभव किया कि आर्थिक स्वाधीनता और समानताके बिना यह सब नगण्य है। इसलिए, आजकल राजनीतिका विशेष महत्त्व नहीं है, सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न सामाजिक और आर्थिक समानताका है।

भारतको भी इस समस्याका समाधान करना है, जब तक भारत समस्याका समाधान नहीं कर लेता, तबतक भारतकी राजनैतिक और सामाजिक इमारत स्थायी नहीं हो सकती। इस समाधानके लिये दूसरे देशका अनुकरण करना आवश्यक नहीं है। यह समाधान भारतके विचार और संस्कृतिके अनुकूल होना चाहिये। जब समस्याका समाधान हो जायगा तो विभिन्न जातियोंके मतभेद जो हमें परेशान करते हैं और हमारी स्वाधीनताको पीछे रखते हैं, अपने आप अदृश्य हो. जायंगे।

यद्यपि वास्तविक मतभेद मिट चुके हैं, फिर भी पारस्परिक भय अविश्वास सन्देह बना हुआ है जो अनैक्य (Discord) के बीज बोता है। हमारे सामने फर्कोंको हटानेकी समस्या नहीं है। वे रह सकते हैं और बहुमुखी संस्कृतिको समृद्धकर सकते हैं। समस्या यह है कि भय और सन्देह कैसे मिटाया जाय? पिछले साल सर्व दल सम्मेलन द्वारा प्रयत्न किया गया था और बहुत कुछ सफलता भी मिली थी लेकिन हमें मानना पड़ेगा कि पूर्ण सफलता नहीं मिली। बहुतसे सिख और मुस्लिम बन्धुओंने समाधानोंका विरोध किया और आंकड़ों तथा प्रतिशतोंपर भावुकता प्रगट की गयी। भय और अविश्वास भगानेमें तर्क और कारण, कमजोर

हथियार हैं। विश्वास और उदारतासे ही भय और अविश्वास भगाया जा सकता है। मैं आशा करता हूं कि विभिन्न जातियों के नेताओंमें विश्वास और उदारता काफी होगी। हम अपने सम्प्रदायके लिये क्या पा सकते हैं, जबतक कि हम गुलाम देशमें गुलाम बने हुए हैं। और अगर हम एक बार गुलामीकी जंजीरें हटाकर स्वतंत्र वातावरणमें सांस ले सकें तो क्या खो बैठेंगे? क्या हम अपने थोड़ेसे अधिकारों और सुविधाओंकी रक्षाके लिये बाहिरीको चाहते हैं, जो हमारा नहीं है और जिसने हमे बंधन में रखा है। जो हमारे स्वाधीनताके हकको अस्वीकार कर रहे हैं? कोई बहुमत हद अल्पमतको नहीं दबा सकता और व्यवस्थापिका सभाओंमें सीटें बढ़ा देनेसे ही किसी अल्पमतको अच्छीतरह रक्षा नहीं हो सकती है। हमे याद रखना चाहिये कि आजकल प्राय हर जगह अल्पमतके पास समृद्धि और शक्ति है और बहुमत पर आधिपत्य जमाये हुए है।

धार्मिक अन्ध भक्ति या सम्प्रदाय या वाद मैं किसी रूपमें पसन्द नहीं करता। मैं नहीं समझ सकता कि राजनैतिक और आर्थिक अधिकार, धर्म या जातिपर आश्रित क्यों हो? धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रताका हक मैं मान सकता हूँ, जब कि भारतने हमेशा धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतन्त्रता स्वीकार की है तब उसका जारी रखना कुछ मुश्किल नहीं है। हमे सिर्फ भय और अविश्वासको भगानेका रास्ता पाना है, जो हमारे क्षितिज पर छाया हुआ है। गुलाम देशकी राजनीति भय और घृणाके

आधार पर खड़ी रहती है, हम बहुत समय तक गुलाम रहे हैं, इस लिये आसानीसे उससे छुटकारा नहीं पा सकते।

मैं हिन्दू पैदा हुआ हूं लेकिन कह नहीं सकता कि कहांतक मैं अपनेको हिन्दू कह सकता हूँ और हिन्दुओंकी तरफसे बोल सकता हूँ लेकिन भारतमें अभी भी जन्मका महत्व है और जन्मके अधिकारसे मैं हिन्दू नेताओंसे कहता हूँ कि वे उदारतामें आगे बढ़ें। उदारता, सिर्फ नैतिक गुण ही नहीं, बल्कि यह अच्छी राजनीति भी है। फिर मैं यह अनुमान भी नहीं कर सकता कि स्वतन्त्र भारतमें हिन्दू शक्ति हीन होंगे। जहांतक मेरा सम्बन्ध है मैं अपने मुस्लिम और सिख मित्रोंसे प्रसन्नतासे कह सकता हूं वे जो चाहे ले सकते हैं। मैं जानता हूँ, वह समय आनेवाला है जब ये केवल नगण्य अर्थ रखेंगे और हमारे संग्राम आर्थिक आधार पर होंगे। इस बीचमें हमारे आपसी बन्दोबस्त मामूली बात है, बशर्ते कि वे हम ऐसे बन्धन न बंधें जो हमारी भावी प्रगतिमें रुकावट डालें।

वह समय आ गया है कि सर्वदल सम्मेलनकी रिपोर्ट अलग रखकर हमें अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ना है। सर्वदल सम्मेलन की योजना स्वीकार करनेके लिये एक सालका समय दिया गया था जो प्राय समाप्त हो चला। अब कांग्रेसके सामने स्वाधीनता की घोषणा करने और उसे प्राप्त करनेके साधनोंकी घोषणाका सवाल है।

पिछले साल न डोमीनियन स्टेटस आया न सर्वदली विधान बना। बल्कि राष्ट्रीय और मजदूर आन्दोलनोंको दमन और यातनाओंका शिकार होना पड़ा, कितने ही हमारे साथी विदेशी शक्ति द्वारा हमसे जबरन अलग कर दिये गये हैं। कितने ही मातृभूमिसे बाहर कर दिये गये हैं और उन्हें जन्मभूमि लौटनेकी सुविधाएं नहीं दी जाती हैं। विदेशी सेना अपने फौलादी शिकंजे में देशको कसे हुए है और शासकका कोड़ा, सर उठानेवालेकी खाल खींचनेके लिये तना हुआ है। कलकत्ता प्रस्तावका जवाब साफ और निश्चित है।

हालमें ही शान्तिका प्रस्ताव सामने आया है। ब्रिटिश सरकारकी तरफसे वायसरायने कहा है भारतके भावी विधानके सम्बन्धमें भारतीय नेता बुलाये जायंगे। वायसरायका मतलब अच्छा है, उनकी भाषा भी शान्तिकी भाषा है। मगर वायसरायकी सदिच्छा तथा नम्रतापूर्ण वाक्यावलि भी जो कठोर तथ्य हमारे सामने हैं उन्हें नहीं हटा सकती। ब्रिटेनकी कूटनीतिपूर्ण चालोंसे सावधान रहनेके लिये हमने पर्याप्त अनुभव हासिल कर लिया है। ब्रिटिश सरकारने जो आफर दिया है वह अस्पष्ट है, उसमें किसी कार्यवाही की घोषणा नहीं है। विभिन्न राजनैतिक दलोंके नेताओंने जमा होकर इसपर विचार किया और इसकी उत्तमोत्तम व्याख्याकी, क्योंकि वे शान्ति चाहते हैं और आधे रास्ते तक चलकर समझौता करना चाहते हैं। नम्रतापूर्ण शब्दोंमें उन्होंने अपनी मुख्य शर्तें भी रख दीं। इसमेंसे बहुतसे जो स्वाधी-

नता चाहते हैं और जिन्हें विश्वास है कि यह आफर हमारे अन्दर विभिन्नता पैदा करनेके लिये है। क्या शान्तिका बहुत मामूली अवसर रहते हुए भयानक राष्ट्रीय संग्राममें भाग लेनेमें हम ठीक थे, जिसका परिणाम भीषण यातनाएं हैं। अपने हृदयोंको अच्छी तरह टटोलनेके बाद हमने दस्तखत किये थे, मैं आज भी नहीं जानता, हमने ठीक किया या गलत। इसके बाद ब्रिटिश पार्लमेंट तथा अन्यत्र जो कुछ कहा गया, उससे सन्देह दूर हो गया कि आफरका वास्तविक अर्थ क्या है। तिसपर भी आपकी कार्य कारिणीने समझौतेका द्वार खुला रखा और निर्णय करनेका भार कांग्रेसपर छोड़ दिया।

पिछले दिनों हाउस आफ कामंसमें इस विषयमें फिर बहस हुई, और भारत मन्त्रीने कहा, सिर्फ शब्दों द्वारा ही नहीं, बल्कि कामों द्वारा, भारतके सम्बन्धमें अपनी सचाईका सबूत विभिन्न ब्रिटिश सरकारोंने बराबर दिया है। हमें वेजवुड बेनकी भारत के लिये कुछ करनेकी इच्छाको मानना चाहिये, लेकिन पार्लामेण्टमें उनका व्याख्यान तथा औरोंके भाषण हमें आगे नहीं ले जाते। "कार्यरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्य" जिसके प्रति हमारा ध्यान खींचा गया हमारे लिए एक Shame रहा है। और जो निश्चय ही भारतका शोषण कम नहीं करता। इस कार्यरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्य और १० वर्ष पुराने वैधानिक सुधारोंके कारण भारतीय जनताका बोझ और भी बढ़ गया है। हमारी मांग, लन्दनमें हाई कमिश्नर, लीग आफ नेशसन्समें भारतीय प्रतिनिधि, स्टोर्सकी

खरीददारी, भारतीय गवर्नर या ऊँचे अफसरान नहीं है। हम भारतके शोषणका अन्त चाहते हैं और शक्तिकी वास्तविकता चाहते हैं, आफिसोंकी नौकरी नहीं चाहते।

मिस्टर वेजउड बेनने पिछली पीढ़ीकी सफलताओंका वर्णन किया है, वे इसके साथ पंजाबका मार्शल ला, जालियावाला बागका गोली-काण्ड, कार्यरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्यके दमन और शोषणको भी जोड़ सकते थे। उन्होंने हमें दिखलाया दिया कि औपनिवेशिक स्वराज्यका हमारे लिये और क्या अर्थ होगा। इसका अर्थ होगा, मुट्ठी भर भारतीयोंके अधिकारकी छाया साथही अधिक दमन और शोषण।

अब यह कांग्रेस क्या करेगी? सन्धिकी शर्तें वैसी ही पड़ी हैं। क्या हम सहयोग कर सकते हैं, जब तक कि वास्तविक स्वाधीनताकी गारण्टी न मिले? क्या हम सहयोग कर सकते हैं जब कि हमारे साथी जेलोंमें हैं। दमन चक्र चल रहा है। क्या हम सहयोग कर सकते हैं, जबतक हम यह न समझ लें कि दरअस्ल वास्तविक शान्ति स्थापित हो रही है, सिर्फ सुविधा नहीं ली जा रही है। बायोनेटकी नोकसे शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। अगर हमारे ऊपर विदेशियोंका आधिपत्य जारी रहता है तो हमें कमसे कम उसकी स्वीकृति नहीं देना चाहिये।

अगर कलकत्ता प्रस्तावका मूल्य है तो आज हमारे सामने एक लक्ष्य है—स्वाधीनता! आजकी दुनियामें स्वाधीनता कोई सुखद शब्द नहीं है, वर्तमान सभ्यता संकीर्ण राष्ट्रीयताका मजा

चल चुकी, और वह विस्तृत सहयोग तथा पारस्परिक सहयोगकी तरफ बढ़ रही है और हम स्वाधीनता शब्दका व्यवहार इस अर्थमें नहीं करते कि वह बृहत आदर्शके प्रति आक्रमणशील हो। हमारे लिये स्वाधीनताका अर्थ है—ब्रिटिश साम्राज्यवाद और ब्रिटिश आधिपत्यसे पूर्ण मुक्ति। मेरा विश्वास है कि स्वाधीनता प्राप्त करने पर भारत, विश्व सहयोग और संघका स्वागत करेगा और अपनी स्वाधीनताका एक भाग भी बृहत्तर संघको दे देगा जिसका वह बराबरीका सदस्य होगा।

ब्रिटिश साम्राज्य, आज इस तरहका ग्रुप नहीं है, और तबतक नहीं हो सकता जबतक उसका करोड़ोंपर आधिपत्य है और वह मूल निवासियोंकी इच्छाके विरुद्ध पृथ्वीके बहुत बड़े भू-भाग पर अधिकार जमाये हुए है। वह कभी भी सच्चा कामनवेल्थ नहीं हो सकता जब तक कि उसका आधार साम्राज्यवाद है और दूसरोंका शोषण उसका सहारा है। आज ब्रिटिश साम्राज्यका राजनैतिक विनाश हो रहा है। साउथ अफ्रीका, कुटुम्बका प्रसन्न सदस्य नहीं है और न आयर्लैण्ड सदस्य रहना चाहता है, मिश्र अलग जा रहा है और भारत बराबरका सदस्य नहीं हो सकता जबतक कि साम्राज्यवादका बिलकुल परित्याग नहीं कर दिया जाता। जबतक ऐसा नहीं होता, साम्राज्यान्तर्गत भारतकी स्थिति अधीन-सी होगी और उसका शोषण जारी रहेगा। ब्रिटिश साम्राज्यका आलिंगन खतरनाक है। यह मृत्युका आलिंगन है।

विश्वशान्ति और शान्तिके लिये राष्ट्रोंमें सन्धियोंकी चर्चा है, फिर अस्त्र-शस्त्र बन रहे हैं, शान्तिकी देवीको सिर्फ मीठे शब्दों से प्रसन्न किया जा रहा है। लेकिन शान्ति तभी आ सकती है जब युद्धके कारण मिटा दिये जांय। जब तक एक देशपर दूसरे का आधिपत्य है, एक श्रेणी दूसरी श्रणीका शोषण करती है। तब तक वर्तमान शासन भंग किया जायगा और शान्ति स्थापित नहीं होगी। साम्राज्यवाद और पूंजीवादसे शान्ति कभी स्थापित नहीं हो सकती और चूंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद इन दोनोंका हिमायती है और शोपणपर आश्रित है अतः हमारे लिये इच्छा-पूर्वक साम्राज्यान्तर्गत कोई स्थान नहीं हो सकता। जब तक जनताका बोझ हल्का न किया जाय हमारे लिये कोई लाभ किसी कामका नहीं है। साम्राज्यवादका बोझ बहुत भारी है और जनता उसे ढोना नहीं चाहती। उसकी पीठ टूट और टेढ़ी हो गयी है और उसकी हिम्मत खतम हो चुकी है। जब तक शोषणका भार बना हुआ है, कामनवेल्थका पार्टनर कैसे बना जा सकता है? बहुत-सी समस्यायें जो हमारे सामने हैं, वह ब्रिटिश सरकार द्वारा पैदा की गयीं या बढ़ायी गयी हैं। देशी रियासतोंके शासकोंके स्वार्थ, ब्रिटिश अफसरों, भारतीय और ब्रिटिश पूंजीके स्वार्थ; बड़ी-बड़ी जागीरदारियां हमारे ऊपर लाद दी गयी हैं और वे अब अपनी रक्षा चाहते हैं लेकिन जिन करोड़ों देशवासियोंको जिन्हें दर असल रक्षाकी जरूरत है, वे वाक्यहीन हैं और उनके हिमायती भी कम हैं। जब तक कि ब्रिटिश साम्राज्य भारतमें है, वह इन

स्वार्थोंकी रक्षा करेगा और औरोंको जन्म देगा और हर एक हमारे रास्तेमें रुकावट होगा। सरकारकी आवश्यकता सिर्फ दमनके लिये है और इसके निशान सिक्रेट सर्विस, एजेन्ट, उत्तेजना देने वाले लोग, इन्फारमर और अप्रूवर हैं।

स्वाधीनता और औपनिवेशिक स्वराज्यपर काफी बहस हो चुकी है, शब्दोंपर काफी झगड़ चुके हैं। असली चीज शक्ति प्राप्त करना है, आप उसे चाहे जिस नामसे पुकारें। मैं नहीं समझता कि औपनिवेशिक स्वराज्य किसी भी रूपमें भारतको असली क्षमता देगा। इसकी कसौटी विदेशी सेनाका पूर्णरूपसे भारतसे हटाया जाना और आर्थिक कण्ट्रोलकी समाप्ति है। हमें इसीपर ध्यान देना चाहिये, बाकी सब अपने आप आ जायगा।

हम आज भारतकी पूर्ण स्वाधीनताकी मांग करते हैं। यह कांग्रेस न मानती है और न मान सकती है कि ब्रिटिश पार्लमेंट किसी भी तरह डिक्टेट करानेका हक रखती है। हम उससे कोई अपील नहीं करते। हम विश्व पार्लमेंट और उसकी आत्मासे अपील करते हैं और उसके सामने हम घोषित करते हैं, भारत अब और किसी विदेशी आधिपत्यको स्वीकार नहीं करता। आज या कल हम इतने मजबूत भले ही न हों कि अपनी इच्छा कार्य-रूपमें परिणत कर सकें। हम अपनी कमजोरी अच्छी तरह जानते हैं और अपनी ताकतकी डींग नहीं हांकना चाहते। लेकिन इङ्गलैण्ड या कोई भी हमारे संकल्पका अर्थ और उसकी दृढ़ता समझनेमें भूल न करे। परिणामोंको पूर्ण जानकारीके साथ

हम तहेदिलसे यह संकल्प ग्रहण करेंगे और उससे पीछे नहीं हटेंगे। एक महान राष्ट्रका अग्रगमन नहीं रोका जा सकता जब कि एक बार उसका दिमाग साफ हो गया और उसने कोई संकल्प कर लिया ; अगर आज हम असफल हुए तो कल सफलता भले ही न मिले पर परसों सफलता आयगी ही।

हम भूल और कष्टसे छुटकारा पाकर शान्ति और सुविधा चाहते हैं ताकि देशके लिये रचनात्मक कार्य कर सकें। क्या हम अपने घरोंका तोड़ा जाना या अपने जवानोंका जेल जाना पसन्द करते हैं ? क्या मजदूर हड़तालकर भूखों मरना चाहते हैं ? वह मजबूर होकर ही ऐसा करता है, जब और कोई रास्ता नहीं रह जाता। हम राष्ट्रीय संग्रामके पथपर अग्रसर होते हैं इसीलिये कि शान्तिका कोई सम्मान जनक रास्ता बाकी बच नहीं रहा है। लेकिन हम शान्ति चाहते हैं और हमारा हाथ हमेशा उनकी ओर बढ़ा रहेगा, जो उसे ग्रहण करना चाहेंगे, लेकिन इस हाथके पीछे वह शरीर रहेगा जो अन्यायके सामने नहीं झुकेगा और ऐसा मस्तिष्क रहेगा जो किसी महत्वपूर्ण सिद्धान्तका समर्पण न करेगा।

संग्राम हमारे सामने है, भावी विधान निश्चय करनेका समय नहीं है। पिछले दो ढाई वर्षोंमें हमने अनेक विधान बनाये। सर्वदल सम्मेलनने जो विधान बनाया, उसे कांग्रेसने एक सालके लिये स्वीकार कर लिया। इस योजना बनानेमें जो श्रम लगा वह बरबाद नहीं हुआ, भारतको उससे लाभ हुआ। लेकिन साल

भर बीत गया, हमें नयी परिस्थितियोंका सामना करना पड़ा है जो कार्य चाहती है विधान निर्माण नहीं।

मुझे स्पष्ट स्वीकार करना चाहिये कि मैं समाजवादी और लोकतंत्रवादी हूं। मैं बादशाहों, राजाओं या उद्योगपतियोंमें विश्वास नहीं करता, जिनका प्रभाव पुराने राजाओंसे अधिक है और जिनके तरीके मध्यकालीन आभिजात्योंसे अधिक विस्तृत और प्रभावशाली हैं। मैं मानता हूं—राष्ट्रीय कांग्रेस जैसी है, उसके लिये चाहे यह सम्भव न हो सके कि देशकी वर्तमान स्थितिमें वह पूर्ण रूपसे सोशलिष्ट कार्य हम अपना सकें। हमें यह समझ लेना चाहिये कि समाजवादका दर्शन संसारके सामाजिक ढांचेमें प्रवेश कर गया है। सवाल सिर्फ गति और तौर तरीकेका रह गया है। भारतको भी उस रास्तेसे ही जाना पड़ेगा, अगर उसे अपनी गरीबी और असमानता मिटानी है, चाहे वह तरीका अपने आदर्श और अपनी जातिकी योग्यताके अनुसार अपना ले।

हमारे सामने तीन मुख्य समस्याएं हैं—(१) अल्प मत, भारतीय रियासतें, (३) मजदूर और किसान। मैंने अल्पमतके सम्बन्धमें अपना मत व्यक्त कर दिया है। मैं फिर दोहराता हूं कि हमें अपने शब्दों और कामोंसे पूर्ण आश्वासन देना चाहिये कि उनकी संस्कृति और परम्परा सुरक्षित रहेगी।

भारतीय रियासतें—भारतके लिये ये बीते युगकी निशानियां हैं। बहुतसे नरेश अभी भी राजाके दैवी अधिकारमें विश्वास करते हैं—चाहे वह कठपुतले ही हों अपनी रियासत

और उसके सब कुछको अपनी सम्पत्ति समझते हैं। कुछमें उत्तर दायित्वका ज्ञान है और अपनी जनताकी सेवा करना चाहते हैं पर बहुतोंके सामने भविष्य नहीं है। इसके लिये उन्हें दोष देना अनुपयुक्त है क्योंकि वह प्रणाली ही दूषित है और वह प्रणाली ही नष्ट हो जानी चाहिये। एक नरेशने साफ कहा है—भारत और इंगलैण्डके युद्धमें वे इंगलैण्डका पक्ष ग्रहण करेंगे और अपनी मातृ-भूमिके विरुद्ध लड़ेंगे। यही उनकी देशभक्ति है। ऐसी अवस्थामें आश्चर्य क्या है कि वे किसी भी कांग्रेसमें अपनी प्रजा का खुद प्रतिनिधित्व करते हैं और ब्रिटिश सरकार उनके दावेको स्वीकार करती है, वे कहते हैं उनकी प्रजा कुछ भी नहीं बोल सकती। भारतीय रियासतें भारतसे अलग होकर नहीं रह सकतीं और रियासतोंके शासक अगर वे अपनी सीमाओंको स्वीकार नहीं करते तो उन्हें उसी रास्ते जाना होगा, जिस रास्ते इसी प्रकार सोचनेवाले गये। रियासतोंके भविष्य-निर्णयका अधिकार प्रजा और राजाको है। कांग्रेस आत्मनिर्णयके अधिकारको मानती है और वह रियासती प्रजाके अधिकारको अस्वीकार नहीं कर सकती। कांग्रेस ऐसे शासकोंके साथ बातचीत करनेके लिये पूरी तरह तैयार है जो ऐसा करना चाहते हैं और ऐसे तरीके निकालना चाहते हैं कि संक्रान्ति काल आकस्मिक न हो। लेकिन किसी भी हालतमें रियासती प्रजाकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

हमारी तीसरी समस्या सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि भारतके माने हैं किसान मजदूर. जहां तक हम उन्हें ऊंचा उठा सकेंगे और

उनकी मांगें पूरी कर सकेंगे, हम अपने उद्देश्यमें सफल होंगे। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनकी शक्ति उनके सहयोग पर आश्रित है, जितना ही अधिक उनका सहयोग मिलेगा, उतना ही अधिक हमारा आन्दोलन शक्तिशाली होगा। हम उन्हें अपने साथ तभी ले सकते हैं जब हम उनके कार्यको अपना कार्य बना लें, जो दर असल देशका काम है। कहा गया है, कांग्रेसको पूंजी और श्रम, जमींदार और किसानके बीचका पलड़ा बराबर रखना चाहिये। किन्तु पलड़ा एक तरफ बहुत भारी हो गया और इस अवस्थाको बनाये रखना, अन्याय और शोषणको बनाये रखना है। इस अन्यायको दूर करनेका एकमात्र रास्ता है, किसी श्रेणीका आधिपत्य न रहे। बम्बईमें कुछ मास पूर्व अ० भा० कांग्रेसने इस आदर्शको स्वीकार कर लिया है। आशा है, कांग्रेस इसपर स्वीकृतिकी मोहर लगा देगी और ऐसी योजना बनायगी जो शीघ्र ही काममें लायी जाय।

इस कार्यक्रममें सम्पूर्ण कांग्रेस शायद बहुत आगे न जा सके। लेकिन उसे अन्तिम लक्ष्य सामने रखना चाहिये और उसके लिये कार्य करना चाहिये। मजदूरी बढ़ाने या सहायताका सवाल नहीं है। व्यवसाय या जमींदारीमें अभिभावकत्व धर्मादेके सिवा कुछ नहीं है और वह अपनी तमाम बुराइयोंको लिये आता है तथा वास्तविक बुराइयोंको दूर करनेमें पूर्ण असफल होता है। ट्रस्टीशिपका विचार — जिसकी वकालत कुछ लोग करते हैं, इसी प्रकार निरर्थक है। क्योंकि ट्रस्टीशिपका अर्थ है

कि अच्छे या बुरेकी ताकत स्वयम् निर्वाचित ट्रस्टीमें रहे, और ट्रस्टो अपनी इच्छाके अनुसार उसका उपयोग करे। एकमात्र राष्ट्रकी ट्रस्टीशिप ही उचित हो सकती है, व्यक्तिगत या दलगत ट्रस्टीशिप नहीं। बहुतसे अंग्रेज ईमानदारीसे अपने आपको भारतका ट्रस्टी समझते हैं, फिर भी उन्होंने भारतको किस शोच-नीय अवस्था तक पहुंचा दिया है।

हमें यह निश्चय करना है कि उद्योग-धन्धे किसके लाभके लिये चलाये जांय और देशके धन-धान्यसे किनका हित हो! आज जो प्रचुर धन-धान्य उत्पन्न होता है वह किसान या खेतमें काम काम करने वालेके लिये नहीं है और उद्योग-धन्धोंका लक्ष्य करोड़-पति पैदा करना समझा जाता है। फसल चाहे जितनी अधिक हो और उद्योग-धन्धोंके डिवीडेन्ड कितने ही अधिक क्यों न हों, फिर भी मट्टीकी झोपड़ियां, और भूखं नंगे जन समुदाय, हमारी सामा-जिक प्रणाली और ब्रिटिश साम्राज्यकी कीर्ति पताका फहरा रहे हैं!

इसलिये हमारा आर्थिक कार्यक्रम मानवीय दृष्टिकोणके आधार पर आधारित होना चाहिये और धनके लिये मानव-बलिदान नहीं होना चाहिये। अगर हमारा उद्योग काम करनेवालोंको भूखों मारे बिना न चल सके तो उस उद्योगको बन्द कर देना चाहिये। अगर खेतमें काम करने वालेको भर पेट अनाज नहीं मिलता तो, किसानके भागसे उसे वंचित करनेवाले मध्यस्थको शेष होना चाहिये। कारखाने और खेतमें काम करने वालेको कमसे कम

इतना मिलना चाहिये कि वह साधारणतया आरामसे जीवन निर्वाह कर सके और कामके घण्टे उतने हों कि उसकी शारीरिक ताकत और मानसिक बल क्षीण न हो। सर्व दल सम्मेलनने यह सिद्धान्त मान लिया है और उसे अपनी सिफारिशोंमें शामिल कर लिया है। मुझे आशा है, कांग्रेस भी यही करेगी। और साथ ही उसके स्वाभाविक परिणामोंको भी स्वीकार करेगी। इसके अलावा वह उत्तम जीवनके लिये श्रमिक श्रेणीकी प्रसिद्ध मांगोंको स्वीकार करेगी, और उस दिनके लिये तैयार होगी जिस दिन वह कोपरेटिव आधार पर देशके उद्योग-धन्धोंका नियंत्रण कर सकेगी।

लेकिन हमें यह न भूलना चाहिये कि उद्योग-धन्धोंके श्रमिक भारतका एक छोटा भाग है, गोकि यह तेजीसे ऐसी ताकतका रूप धारण कर रहा है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, मगर वे किसान ही हैं जो सहायताके लिये करुण पुकार कर रहे हैं, हमारा कार्यक्रम ऐसा होना चाहिये जो किसानोंकी दुरवस्था सुधारे। जमीन सम्बन्धी कानूनोंमें महान् परिवर्तनों द्वारा ही उनकी वास्तविक सहायता की जा सकती है, जमीनके स्वत्व सम्बन्धी नियमों में हमें परिवर्तन करना ही होगा। हमारी कांग्रेसमें बहुतसे जमीन्दार भी है और हम उनका स्वागत करते हैं, लेकिन उन्हें अनुभव करना चाहिये कि विस्तृत भूभाग पर व्यक्तिगत आधिपत्यकी प्रणाली, जो मध्यकालीन युरोपीय प्रणालीसे मिलती-जुलती है, सारे संसारसे तेजीसे मिटती जा रही है। जो देश पूंजीवाद

के किले समझे जाते हैं उन देशोंमें भी जमींदारियां टुकड़े टुकड़े कर किसानोंमें बांटी जा रही हैं, जो किसान वहां काम कर रहे हैं। भारतमें भी बहुतसे भू-भागोंपर किसानोंका स्वामित्व है, हमें सारे देशमें इसे बढ़ाना है। हमें आशा है कि इस कार्य में कमसे कम बड़े जमीन्दारोंका सहोग मिलेगा।

कांग्रेसके इस वार्षिक अधिवेशनमें संभव नहीं है कि विस्तृत आर्थिक कार्यक्रमकी रूप रेखा बनायी जाय। कांग्रेस सिर्फ मुख्य सिद्धान्तोंको पेशकर, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे कह सकती है कि वह ट्रेड यूनियन कांग्रेस तथा इस विषयमें घनिष्ठ सम्बन्ध रखनेवाले संघोंके प्रतिनिधियोंके सहयोगसे विस्तृत कार्य-क्रम बनाये। मुझे आशा है, कांग्रेस और ट्रेड युनियन कांग्रेस में सहयोग बढ़ेगा और भावी संग्रामोंमें ये दोनों संस्थाएं अगल बगल होकर संग्राम करेंगी।

मैं जानता हूँ जबतक हम वास्तविक शक्ति नहीं पा लेते तबतक ये बातें सिर्फ आशा ही हैं, इसलिये हमारे सामने वास्तविक समस्या - शक्ति प्राप्त करनेकी है। हम शक्ति बहस मुबाहिसे द्वारा नहीं पा सकते। राष्ट्रको इच्छाके दबाब द्वारा ही हम शक्ति पा सकते हैं।

पिछले साल हमने अपने संगठनको फिरसे संगठित और दृढ़ बनानेका हर प्रकारसे प्रयत्न किया है। जिसका परिणाम अच्छा निकला, आज हमारा संगठन असहयोग आन्दोलनकी प्रतिक्रिया के बादके कालमें जिस अवस्थामें था उससे कहीं बढ़कर उत्तम

स्थितिमें है। लेकिन हमारे अन्दर कमजोरियां भी बहुत हैं, कांग्रेस कमेटियोंमें पारस्परिक संघर्ष और चुनाव चख-चख हमारी ताकत और क्रियाशक्तिका अपचय करती है। हम महान् संग्राम कैसे चला सकते हैं यदि हम पुरानी कमजोरी छोड़ नहीं देते और छोटी-मोटी बातोंसे ऊपर नहीं उठते? मैं आशा करता हूं कि देश के सामने मजबूत क्रियात्मक कार्यक्रम रहनेकी हालतमें हमारा संकल्प दृढ़ होगा और हम कमजोर करनेवाले निरर्थक झगड़ोंको और बर्दाश्त नहीं करेंगे।

हमारा कार्यक्रम क्या होगा? हमारा निर्णय-सीमित है, वह कांग्रेसके अपने विधानके कारण नहीं, जिसे हम जब चाहें अपनी इच्छासे बदल सकते हैं, बल्कि तथ्यों और परिस्थितियोंकी वजहसे है। हमारे विधानकी पहला धारा कहती है कि हमारे सब तरीके शान्तिपूर्ण और वैधानिक होने चाहिये। मुझे आशा है वे सदा ही वैधानिक होंगे। मैं चाहता हूं वे शान्तिपूर्ण हों, क्योंकि शान्तिपूर्ण तरीके अधिक वांछनीय और हिंसात्मक तरीकों से अधिक कारगर होते हैं। हिंसा प्रायः प्रतिक्रिया और नैतिक कमजोरी लाती है। हमारे जैसे देशमें हिंसा disruption ला सकती है। यह बिलकुल सच है कि आज संगठित हिंसा संसार पर शासन करती है और यह भी संभव है कि उसके व्यवहारसे हम कुछ लाभ उठा सकें। लेकिन संगठित हिंसाके लिये हमारे पास मेटेरियल और शिक्षा नहीं है और व्यक्तिगत तथा छिटपुट हिंसा निराशाकी स्वीकारोक्ति है। मैं मानता हूँ कि हमारा बहुमत

नैतिकताके आधार पर किसी विषयका निर्णय नहीं करता बल्कि विषयके वास्तविक आधारपर करता है, और इसलिये अगर हम हिंसाका रास्ता अस्वीकार करते हैं तो वह इसलिये कि हिंसात्मक तरीकेसे विशेष फलकी आशा नहीं है। लेकिन अगर यह कांग्रेस या देश भविष्यमें कभी इस नतीजेपर पहुंचे कि हिंसात्मक तरीके से हमारी गुलामीकी जंजीरें टूट जायंगी तो मुझे विश्वास है कि वह उन्हे ग्रहण करेगी। हिंसा खराब है, मगर गुलामी उससे भी बदतर है हमें यह याद रखना चाहिए कि अहिंसाके अवतारने हमें बतलाया है कि कायरता वश युद्ध न करनेकी अपेक्षा युद्ध अच्छा है।

आज देशकी मुक्तिका कोई भी आन्दोलन आवश्यक रूपसे जन आन्दोलन होना चाहिये, और संगठित विद्रोह कालके सिवा, जन आन्दोलनको शान्तिपूर्ण होना चाहिये। चाहे हम असहयोगको लें या सार्वजनिक हड़तालको अपनाएं, उसका आधार शान्तिपूर्ण संगठन और शान्तिपूर्ण कार्य होना चाहिये। और अगर प्रधान आन्दोलन शान्तिपूर्ण है तो छिटपुट हिंसात्मक कार्य हमारा ध्यान बटावेंगे और आन्दोलनको कमजोर करेंगे। एक साथ एक समय दोनों प्रकारके आन्दोलन चलाना संभव नहीं है। हमें दोमेंसे एकको चुनना है और अपने चुनावपर दृढ़तासे जमना है। कांग्रेसकी पसन्द क्या होगी, इस विषयमें मुझे सन्देह नहीं है, वह सिर्फ शान्तिपूर्ण जन-आन्दोलन ही चुन सकती है।

क्या हमें असहयोग आन्दोलनका कार्यक्रम और कौशल फिर अपनाना चाहिये ? मेरा कहना है कि आधार वही रहे मगर उसका रूप वही हो यह जरूरी नहीं है। हमारा नया कार्यक्रम वर्तमान स्थितियोंके अनुकूल होना चाहिये। मगर यह न आसान है और न वांछनीय है कि यह कांग्रेस कार्यक्रमके विवरणका निश्चय करे। यह अ० भारतीय कांग्रेस कमेटीका काम होना चाहिये। लेकिन हमें सिद्धान्त निश्चित कर लेने चाहिये।

पुराना कार्यक्रम, कौंसिलों, अदालतों, सरकारी शिक्षण संस्थाओंके बायकाट तथा सेनामें भर्ती न होने और टैक्स न देने का था। जिस वक्त हमारा राष्ट्रीय संग्राम जोरोंमें हो तब यह कैसे सम्भव हो सकता है कि राष्ट्रीय संग्रामका सैनिक स्कूल और अदालतोंके लिये अपना वक्त दे सके ? लेकिन वर्तमान अवस्था में मैं स्कूलों और अदालतोंका बहिष्कार अबुद्धिमत्तापूर्ण समझता हूं। धारा सभाओंके बहिष्कार पर काफी वाद-विवाद हुआ है। हमें पुराने वाद-विवादकी पुनरावृत्ति नहीं करनी है, क्योंकि इस समय अवस्था बदल गयी है। मेरा ख्याल है, कुछ साल पहले कांग्रेसने धारा सभाओंमें प्रवेश करनेकी अनुमति देनेका जो निर्णय किया था, वह अनिवार्य था। और मैं यह कहनेको तैयार नहीं हूं कि उससे कुछ अच्छा परिणाम नहीं निकला। लेकिन हमने उस अच्छाईको भी निःशेष कर दिया और अब बहिष्कार तथा पूर्ण सहयोगके बीचका मार्ग खुला नहीं रह गया है। हम जानते हैं—धारा सभाओंके सदस्योंने किस प्रकारकी अने-

तिकता फैला दी। हमारे कार्यक्रम सीमित हैं और हम तब तक जन-आंदोलन नहीं चला सकते, जब तक कि हमारे कार्यकर्ता ऐसेम्बली भवनोंसे पीठ फेरकर अपना ध्यान इधर न लगांय। और अगर हम स्वतन्त्रताकी घोषणा करते हैं तो फिर कौंसिलोंमें कैसे जा सकते हैं और कैसे वहांकी निरर्थक बेफायदेकी कार्यवाहियोंमें भाग ले सकते हैं। कोई कार्यक्रम या नीति हमेशाके लिये निश्चित नहीं की जा सकती और न कांग्रेस अपने आपको या देशको अनिश्चित काल तक एक तरहके कार्यक्रमकी नीतिसे बांध सकती है। लेकिन आज मैं, सम्मान सहित कांग्रेससे कहता हूँ कि कौंसिलों सम्बन्धी कांग्रेसकी नीति उनका पूर्ण बहिष्कार है और उस सिफारिशको कार्यरूप देनेका अवसर आ गया है।

इसलिये हमारा कार्यक्रम—राजनैतिक और आर्थिक आयकाटका होना चाहिये। जब तक हम दूर असल पूर्ण स्वतन्त्र न हों, हमारे लिये यह मुमकिन नहीं है कि हम दूसरे देशका पूर्ण बहिष्कार कर सकें या उससे सब तरहका सम्बन्ध विच्छेद कर सकें। लेकिन हमारा प्रयत्न ब्रिटिश सरकारसे सब तरहका सम्बन्ध विच्छेदका होना चाहिये और हमें अपने पैरोंपर खड़े होना चाहिये। हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि भारत पर इङ्गलैण्डने जो कर्ज लादा है, भारतीय उसकी जिम्मेदारी नहीं लेते। गया कांग्रेसने इसे अस्वीकार किया था और हमें इसे फिर दोहराना चाहिये। जो धन भारतकी जनताकी भलाईके लिये खर्च किया गया हो, हम उसे मानने और अदा करनेको

तैयार हैं। लेकिन भारतको अधीन बनाये रखनेके लिये उसके सरपर कर्जका जो बोझ लादा गयाहै, उस कर्जको चुकानेसे हम इन्कार करते हैं। इङ्गलैण्डने अपना आधिपत्य बढ़ाने और भारत में अपनी स्थिति दृढ़ करनेके लिये जो युद्ध लड़े हैं, उनके खर्चोंका बोझ भारतकी गरीब जनता उठानेको राजी नहीं है। बिना उचित हर्जानेके विदेशी शोपकोंको जो सुविधाएं दी गयी हैं, भारतकी जनता उन्हें नहीं मानती।

यह बायकाट, देशकी ताकतके श्रोत खोल देगा और वास्तविक संग्रामकी ओर उसका ध्यान आकर्पित करेगा। इसे कर न देने और जहां संभव हो, मजदूरोंके सहयोगसे जनरल हड़तालका रूप ग्रहण करना होगा। लेकिन खास-खास क्षेत्रोंमें कर-बन्दी आन्दोलन संगठित होना चाहिये। इस कार्यके लिये कांग्रेसको अ० भार० कांग्रेसको अधिकार देना चाहिये कि वह जब जहां जो कार्य करना आवश्यक समझे करे।

अभी तक मैंने कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमका उल्लेख नहीं किया। रचनात्मक कार्यक्रम अवश्य जारी रहना चाहिये, लेकिन पिछले वर्षोंके अनुभवोंने बतलाया है कि यह हमें तेजीसे आगे नहीं बढ़ाता। यह भावी कार्यके लिये जमीन तैयार करता है। आशा है, हम विदेशी वस्तु और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार जारी रखेंगे।

विदेश स्थित भारतीयोंके सम्बन्धमें मैंने कुछ नहीं कहा; मैं इस सम्बन्धमें विशेष कुछ नहीं कहना चाहता। इसकी वजह

यह नहीं है कि पूर्व अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका, फीजी आदिमें बहादुरीके साथ संग्राम करनेवाले अपने भाइयोंके प्रति हमारे हृदयोंमें भी वैसी ही भावना नहीं है। लेकिन मैं समझता हूँ—उनके भाग्यका फैसला भी भारतके मैदानमें होगा और जो संग्राम हम छेड़ने जा रहे हैं, यह जितना हमारे लिये है उतना ही उनके लिये भी महत्वपूर्ण है।

इस संग्रामके लिये हमें निर्दोष उत्तम मैशीनरी चाहिये। हमारा कांग्रेस विधान और संगठन दिखावटी और मंथर है, जो संक्रान्ति कालके पूर्ण उपयुक्त नहीं है। हम अब शान्त और अप्रतिरुद्धनीय कार्य चाहते हैं यह पूर्ण अनुशासन द्वारा ही हो सकता है। हमारे प्रस्ताव इसलिये पास होने चाहिये कि वे कार्यरूपमें लाये जांय। अगर कांग्रेस अनुशासन पूर्ण ढंगसे कार्य करे तो उसके मेम्बरोंकी संख्या चाहे जितनी कम हो जाय, उसकी ताकत बढ़ेगी। छोटे दृढ़ प्रतिज्ञ अल्पमतोंने राष्ट्रोंके भाग्य पलट दिये हैं, झुण्ड या भीड़ शायद ही कुछ कर सकती हो। अनुशासन और नियंत्रणमें स्वतन्त्रता सन्निहित है। हममेंसे हरएकको वृहत्तर अच्छाईकी अधीनता माननी होगी।

कांग्रेसमें देशके अल्पमतोंका कम प्रतिनिधित्व नहीं है, चाहे वे कांग्रेसमें शामिल होने और उसका कार्य करनेमें अक्षम हों, मगर वे आशापूर्ण दृष्टिसे कांग्रेसको देखते हैं और उसे अपना मुक्तिदाता मानते हैं।

कलकत्ता कांग्रेसके प्रस्तावके बादसे देश आजके दिनकी आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था। कोई नहीं कह सकता—हम क्या और कब प्राप्त कर सकेंगे। हमारा सफलतापर नेतृत्व नहीं है। लेकिन अक्सर सफलता उन्हें ही मिलती है, जो साहस रखते हैं और कार्यक्षेत्रमें कूद पड़ते हैं, परिणामोंकी चिन्ता करने वालोंको सफलता शायद ही मिलती हो। हमारा लक्ष्य महान् है—और अगर हम महान् सफलताएं चाहते हैं तो हमें महान् खतरोंसे गुजरना होगा। सफलता हमें देरसे मिले या जल्दीसे हमें आगे बढ़नेसे और अपने देशके दीर्घ, उत्तम इतिहासका सुन-हरा पृष्ठ लिखनेसे हमारे सिवा कोई नहीं रोक सकता।

हमारे देशके विभिन्न स्थानोंमें षड्यन्त्रके मामले चल रहे हैं। वे हमेशा ही साथ लगे रहे हैं। लेकिन गुप्त षड्यन्त्रोंका जमाना लद चुका। विदेशी शासनसे देशको स्वतंत्र करनेके लिये हमें प्रगट षड्यन्त्र करना है। और दोस्तो! आपको और देशके सभी भाई बहनोंको इस प्रगट षड्यन्त्रमें भाग लेनेका निमन्त्रण दिया जाता है। लेकिन इसका पुरस्कार यातना जेल और मौत तक है। फिर भी आपको सन्तोष होना चाहिये कि आपने प्यारे देशके लिये कुछ न कुछ किया, और प्राचीन मगर सदा युवा देशकी गुलामी के बन्धन छिन्न-भिन्न करनेमें यथा साध्य सहायता की।

कांग्रेस लीग और महायुद्ध

—— :०: ——

[वायसरायने भारतको युद्धमें ढकेल दिया, लीगने सहयोग किया, कांग्रेसने असहयोग। पण्डितजीने यह व्याख्यान कांग्रेस के निर्णयके समर्थनमें दिया था।]

१४ सितम्बरका कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटीका वक्तव्य सम्पूर्ण स्थिति साफ कर देता है और राष्ट्रीय मतको प्रतिबिम्बित करता है और उसे साफ तौरसे प्रगट करता है। इस वक्तव्यने शीघ्र ही भारतमें महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया की। असंख्य जनता जो कुछ अपने दिलो दिमागमें अस्पष्टतया सोच समझ रही थी, वह साफ-साफ सीधी भाषामें कह दिया गया। सन्देह दूर हो गया, परेशानी जाती रही, ऐसा लगता है मानो कांग्रेसके वक्तव्य द्वारा भारतीय जनताने वाणी पायी और संसारको बता दिया कि अगर वर्तमान समस्या सुलझाना है तो किस प'थका अनुसरण करना होगा, और संसारने उसकी बात सुनी।

प्रगतिशील इङ्गलैंडने इसका स्वागत किया, प्रजातन्त्री अमेरिका में इसका काफी प्रचार हुआ, यही नहीं बल्कि युद्ध ग्रसित युरोपसे भी इसका प्रत्युत्तर मिला। दलित और गुलाम देशोंकी जनताने इसमें दलितोंका चार्टर देखा। यह कालप्रवाहके गुञ्जनके अनुकूल था।

कांग्रेस कार्यकारिणी द्वारा युद्धोद्देश्योंके स्पष्टी करणकी मांगके बाद जो कुछ हुआ, वह कांग्रेसकी मांगके कारणयुक्त परिणति थी। ए॰ आई० सी० सीके बाद भारत मंत्रीका भाषण, वायसरायका वक्तव्य, प्रान्तीय एसेम्बलियोंमें मुस्लिम लीगके प्रस्ताव, कांग्रेस मन्त्रीमण्डलोंका पद-त्याग, एकके बाद एक आता गया और भारतीय दृश्यपर रोशनीकी धारा फेंकता गया।

यह रोशनी क्या दिखलाती है? सबसे पहले कांग्रेसकी उच्च राजनीतिज्ञता और बुद्धिमता, जो संसार और भारतके सम्मुख पूर्ण रूपसे युक्ति युक्त सिद्ध है। अपने आदर्शों और पूर्व घोषणाओंको कायम रखते हुए कांग्रेसने उन्हें परिवर्तित, संगीन परिस्थितियोंमें प्रयुक्त किया और साबित कर दिया कि कांग्रेस एक साथ ही आदर्शवादी और व्यवहारवादी हो सकती है। भारतकी स्वतंत्रता, जिसका दावा कांग्रेस करती है और संसारकी स्वतंत्रता, युद्ध और शांतिके उद्देश्योंमें सन्निहित है और कांग्रेसने इसके स्पष्टीकरण को संसारकी बुराइयोंकी व्यावहारिक औषध बतलाया है।

दूसरी बात यह हुई कि कांग्रेसने युद्धकी प्रकृत अवस्था प्रत्यक्ष कर दी। ब्रिटिश सरकारका कांग्रेसको दिया गया जवाब बिना

किसी सन्देहके साबित करता है कि वे पहलेकी तरह इस बार भी अपने साम्राज्यवादी स्वार्थोंकी रक्षाके लिये आगे बढ़े हैं। यह प्रजातन्त्रकी लड़ाई नहीं है जिसमें कि नाजीवादके खिलाफ सब प्रजातन्त्रीय जातियां एक साथ उठ खड़ी हुई हों। यह सच है कि मित्र शकितयोंकी तरफ कुछ प्रजातन्त्रीय शक्तियां भी हैं, लेकिन वे सरकारें जिनके हाथमें इङ्गलैंड और फ्रांसके राज हैं, पुरानी और बदनाम सरकारें हैं जो युरोपकी वर्तमान दुखद अवस्थाके लिये जिम्मेदार हैं।

हम म्युनिक और स्पेनको नहीं भूल सकते। फ्रेंच सरकार प्रतिक्रिया वादियोंका किला (Citadel) है और ब्रिटिश सरकार के प्रधानमन्त्री अभी भी (१९३९ में) श्री चेम्बर लेन हैं। हम यह सब जानते हैं, फिर भी हम चाहते थे, जनताके दिमागसे सब तरहका सन्देह दूर कर दिया जाय, और युद्धके कुहरेसे वास्तविकता सामने आ जाय।

वास्तविकता सामने आ गयी और वह इतनी सुन्दर नहीं है कि उसकी तरफ देखा जाय, सर सेमुअल होरके लच्छेदार शब्द उसे सुन्दर नहीं बना सकते। साम्राज्यवादका ढांचा, आज लड़खड़ा रहा है और वह वर्तमान अवस्थाके सर्वथा अनुपयुक्त है। लेकिन ब्रिटिश शासक समुदाय साम्राज्यवादके ढंगसे ही सोचते हैं और उसकी रक्षा करना चाहते हैं। वे भारतकी स्वाधीनताके सम्बन्ध में स्पष्ट घोषणा करनेसे भी डरते हैं। यह साम्राज्यवाद,

अलग्मत या नरेशोंके प्रेमके कारण नहीं है, इसका मुख्य सम्बन्ध भारतमें स्थित अंग्रेजोंके आर्थिक स्वार्थोंसे है। यह भारतीय राजनीतिका axiom है कि साम्राज्यवाद या राष्ट्रवाद तथा स्वतंत्रतामें कभी समझौता नहीं हो सकता। कांग्रेसका आफर था कि साम्राज्यवादका खात्मा होना चाहिये, भारतकी स्वाधीनता मान ली जाय, और दीर्घकालव्यापी आक्रमणवृत्तिका स्थान मित्रता और सहयोग ले। आफर अस्वीकार कर दिया गया और अब हम अपने रास्तेपर चलनेको स्वतन्त्र हैं जब तक कि भाग्य या परिस्थितियाँ फिर न मिला दें।

तीसरी बात बात यह हुई कि बिना किसी गलत फहमीकी संभावनाके मुस्लिम लीगकी स्थिति साफ हो गयी। तीन साल पहले जब लीगने अपना लक्ष्य स्वाधीनता घोषित किया था और अपने मेम्बरोंका आधार विस्तृत किया था, हमने उसका स्वागत किया था। लेकिन हमें जल्दी ही महसूस करना पड़ा कि पुराना प्रतिक्रिया शील दृष्टिकोण ही अभी तक मौजूद है; प्रचारकी ओटमें, मुस्लिम जनताको वास्तविक स्थिति महसूस करनेसे वंचित रखा गया। हम लीगकी साम्प्रदायिक मांगोंपर विचार नहीं कर रहे हैं वे चाहे सही हों या गलत। यह संभव है कि एक आदमी सम्प्रदायवादी हो साथ ही देशकी स्वाधीनताका पक्का पक्षपाती हो गोकि किसी वक्त इन दोनोंमें संघर्ष हो सकता है। कांग्रेस ने कभी-कभी मामूली राजनैतिक भूलें की हैं, लेकिन जब कभी महत्वपूर्ण सवाल उठा है उसने निर्भूल कदम उठाया है। दूसरी

और लीगने महत्वपूर्ण विषयोंपर गलती करनेका रेकार्ड कर दिया है, चाहे वह मामूली मामलोंमें ठीक रही हो।

यह बड़ी दुखद बात है कि ऐसे राष्ट्रीय सङ्कट कालमें लीगने प्रतिक्रियावादियोंका साथ दिया। हम विश्वास नहीं करते कि इस दलका लीगके बहुतसे सदस्य समर्थन करते होंगे। हमें निश्चय है कि मुस्लिम जनता आजादीकी दीवानी है। कुछ साम्प्रदायिक मसलोंमें लीग भले ही उनका प्रतिनिधित्व करती हो, लेकिन राजनैतिक मामलोंमें नहीं।

किसी भी देशकी युद्ध विषयक नीति सबसे पहले देशकी रक्षाका विचार करती है। भारतको यह अनुभव करना चाहिये कि वह अपनी रक्षामें भाग ले रहा है तथा अपनी स्वाधीनताकी रक्षा कर रहा है साथ ही अन्यत्र होनेवाले स्वतन्त्रता संग्राममें सहायक हो रहा है। सेना, राष्ट्रीय सेना समझी जानी चाहिये। ऐसी सेना न हो जो सिर्फ पैसोंके लिये काम करती हो और किसी गैरके प्रति वफादार हो। इसी राष्ट्रीय आधारपर सेना भर्ती की जानी चाहिये ताकि हमारे सिपाही सिर्फ तोपोंमें बारूद भरनेवाले ही न हों बल्कि अपने देश और अपनी स्वाधीनताके योद्धा हों।

इसके अलावा सैनिक आधारपर सिविल डिफेंसका संगठन होना चाहिये। यह सब जनप्रिय सरकार द्वारा ही हो सकता है।

इससे अधिक महत्वपूर्ण उद्योग-धन्धोंका विकास है ताकि वे युद्ध तथा अन्य आवश्यकताओंके लिये सप्लाई कर सकें। युद्ध-कालमें भारतमें उद्योग धन्धोंका बहुत बड़े पैमानेपर विकास होना

चाहिये उनके विकासका पूर्ण आयोजन होना चाहिये, जिसका आधार राष्ट्रीय हो और जो श्रमिकोंकी रक्षा करे। इस कार्यमें राष्ट्रीय योजना समिति महत्वपूर्ण सहायता दे सकती है।

जैसे-जैसे युद्ध बढ़ता जायगा और वह अधिकाधिक वस्तुएं व्यवहारमें लायगा, सारे संसारमें आयोजित उत्पादन और वितरण होगा और फलतः विश्वमें आयोजित इकोनोमी प्रकट होगी। पूंजीवादी प्रणाली अन्तर्ध्यान हो जायगी और मुमकिन है, उद्योग धन्धोंपर अन्तर राष्ट्रीय कन्ट्रोल स्थापित हो जाय। महत्वपूर्ण उत्पादक देशकी हैसियतसे भारतका इस नियन्त्रणमें हाथ रहना चाहिये।

अन्तिम बात यह है कि शान्ति सम्मेलनमें भारत स्वतन्त्र राष्ट्रकी हैसियतसे बोल सके। हमने यह बतानेकी कोशिश की है कि जो प्रजातंत्रके हिमायती बनते हैं उनके युद्ध और शांतिके क्या उद्देश्य होने चाहिये। युद्धके बाद विश्व संगठनके सम्बन्धमें हमने कुछ नहीं कहा, गोकि हम सोचते हैं कि ऐसा संगठन आवश्यक और अनिवार्य है।

क्या संसारके राजनीतिज्ञ और जनता खासकर युद्धरत देशों की, बुद्धिमान तथा दूरदर्शी होगी कि वह हमने जिस पथका, निर्देश किया है, उसपर चले? हम नहीं जानते। लेकिन यहां भारतमें अपने देशमें हमें दक्षिण और वामपंथीका भेद भुला देना चाहिये

और उन समस्याओं पर विचार करना चाहिये जो हमारे सामने हैं। संसार संभावनाओंसे भरा हुआ है। कमजोर, निकम्मे, छिन्न-भिन्न लोगोंपर कभी उसने दृष्टिपात भी नहीं किया। आज जबकि राष्ट्र अपने अस्तित्वके लिये जी जान लड़ाये हुये हैं, जो दूर-दर्शी, अनुशासन युक्त, और एक हैं, वे ही उस इतिहासमें भाग ले सकते हैं, जिस इतिहासका निर्माण होना आरम्भ हुआ है।

राष्ट्रवाद साम्राज्यवाद

[सन् १९४० ३ नवम्बरको गोरखपुर जेलमें नेहरूजी पर जो मुकदमा चला, उसमें पण्डितजीने बतलाया कि क्यों ब्रिटिश सरकारको बिना भारतके प्रतिनिधियोंसे सलाह किये बिना, भारतको युद्धरत घोषित करनेका अधिकार नहीं था।]

मेरे व्याख्यानोंकी रिपोर्टोंमें जो गलतियां और भूलें हैं उनका विवरण देनेका मेरा इरादा नहीं है, क्योंकि इसका मतलब रिपोर्टें फिरसे लिखना होगा और जनाब! यह आपका और मेरा वक्त बरबाद करना होगा, साथ ही नतीजा कुछ न होगा। मैं यहाँ अपने बचावके लिये नहीं खड़ा हुआ हूँ और शायद जो कुछ मैं अपने वक्तव्यमें कहूंगा वह अब आपके कामको आसान कर देगा। अभी तक मैं नहीं जानता मेरे खिलाफ क्या अभियोग है। मुझे पता चला है कि उसका डी० आई० रूलसे कुछ सम्बन्ध है, और वे युद्धके सम्बन्धमें हैं जिसमें कहा गया है कि - जनता को युद्धमें जबरन न डाला जाय। अगर यह अभियोग

है तो मैं खुशीसे इसे स्वीकार करता हूं। यह जाननेके लिये ऊटपटांग रिपोर्ट ढूँढ़नेकी जरूरत नहीं है कि मैंने या किसी अन्य कांग्रेसीने भारत या युद्धके विषयमें क्या कहा। कांग्रेसके वक्तव्य और प्रस्ताव बहुत साफ हैं, मैं उन प्रस्तावों और वक्तव्योंको मानता हूँ और अपना कर्तव्य समझता हूँ कि कांग्रेसका सन्देश देशकी जनताके पास ले जाऊँ।

अगर मैं या श्री बिनोवा भावे इस कार्यके लिये चुने गये तो अपना व्यक्तिगत मत प्रगट करनेके लिये नहीं। हम उनके प्रतीक हैं जो भारतके नाम पर बोलते हैं। व्यक्तिगत तौरसे हम चाहे मामूली गिने जांय मगर ऐसे प्रतीक और जनताके प्रतिनिधिकी हैसियतसे हम बहुत कुछ हैं। उन्हीं लोगोंके नामपर हमने उनके स्वाधीनताके अधिकारपर जोर दिया और कहा कि उन्हें हक है कि वे निर्णय करें कि उन्हें क्या करना है क्या नहीं। हमने अन्य किसी भी सत्ताको चुनौती दी है कि वह उनकी स्वाधीनतासे उन्हें वंचित कर सके और अपनी इच्छा उन पर लाद सके। कोई व्यक्ति या व्यक्तियों दल जिसे भारतीय जनतासे अधिकार नहीं मिला है और जो किसी तरह जनताके प्रति उत्तरदायी नहीं है, वह किसी प्रकार अपनी इच्छा जनतापर लाद नहीं सकता। यह मजेदार बात है कि ऐसा कार्य आत्म-निर्णय और प्रजातन्त्रके नाम पर किया जा रहा है।

हम अपने अन्तिम निर्णय पर धीरे-धीरे आ रहे थे, हम झिझके, हमने बातचीत करनी चाही, हमने सब दलोंके लिये

सम्मानपूर्ण समझौता चाहा। हम असफल हुए और अनिवार्य निर्णय हमें करना पड़ा। जहां तक ब्रिटिश सरकार और उनके प्रतिनिधियोंका सम्बन्ध है, हम अभी तक बन्धनमें हैं ताकि उनके साम्राज्यवादी शोषणमें सहायक हों जिसे हम कभी स्वीकार नहीं कर सकते, चाहे उसका नतीजा जो भी हो।

भारतमें बहुतसे आदमी हैं, चाहे वे भारतीय हों या अंग्रेज, जिन्होंने पिछले वर्षोंमें फासिज्म और नाजिज्मके विरुद्ध लगातार आवाज बुलन्द की है, जैसी की मैंने की। मेरा सम्पूर्ण स्वभाव उनके विरुद्ध विद्रोह करता है और मैंने अनेक बार ब्रिटिश सरकार की फासिस्टप्रिय तथा चाटुकारितापूर्ण नीतिकी कटु आलोचना की है। मंचुरियाके आक्रमणसे लेकर अबसीनिया, मध्य युरप, स्पेन और चीनमें मैंने देखा, किस तरह एकके बाद दूसरे देशके साथ नाजियोंके प्रसन्न करनेके नामपर विश्वासघात किया जा रहा है और किस तरह स्वाधीनताकी मशाल बुझाई जा रही है। मैंने अनुभव किया साम्राज्यवाद और उसकी जड़ें कमजोर पड़ गयी। उसे प्रजातन्त्रीय स्वतन्त्रताके पक्षमें अपना खात्मा करना होगा। बीच का कोई रास्ता नहीं है।

जब तक नाजियोंको प्रसन्न करनेकी नीतिका मंचुरिया, अबसीनिया, जेकोस्लोवाकिया, स्पेन, अलबेनियाके साथ सम्बन्ध था, तब तक प्रधान मन्त्री उसका अनुसरण करते रहे, लेकिन जब यह उनके नजदीक आ पहुंची और ब्रिटिश साम्राज्यके लिये खतरनाक हो गयी तो संघर्ष हो गया और युद्ध छिड गया।

अब फिर ब्रिटिश साम्राज्यवाद और युद्धरत देशोंके सामने दो मार्ग हैं, या तो पुराने साम्राज्यवादी रास्तेपर चलें या उसका नाश कर, स्वतन्त्रता और विश्व क्रांतिके नेता बने। उन्होंने पहला रास्ता चुना गोकि वे अभी भी स्वतन्त्रताकी बात करते हैं और यह शब्द भी युरोप तक ही सीमित है। इसका मतलब यह है कि पुराने तरीके पर उनके साम्राज्यकी स्वतन्त्रता बनी रहे। भारतमें हमने युद्धकालीन सरकारका एक साल देखा, धारा सभाएं स्थगित कर दी गयीं, दुनियामें सबसे बदतर एक हलकी शासन-प्रणाली यहां चल रही है। प्रेसकी स्वाधीनता पर कुठाराघात कर दिया गया है। अगर यही प्रस्तावित स्वाधीनताकी भूमिका है तो हम अनुमान कर सकते हैं, उसका वक्त क्या होगा जब इंगलैण्ड पूर्ण फासिस्टराज हो जायगा।

युद्धने सर्वनाश आरम्भ कर दिया है, जिन्हें कष्ट उठाना पड़ा है, उनके साथ हमारी सच्चे दिलसे सहानुभूति है, लेकिन जब तक युद्धका उद्देश्य वर्तमान प्रणालीका अन्त न हो और नयी व्यवस्थाका आधार स्वाधीनता और सहयोग न हो युद्धके बाद युद्ध होता रहेगा और अधिकाधिक सर्वनाश होता रहेगा।

इसलिये हमें युद्धसे अलग रहना चाहिये और इसी लिये अपने देश वासियोंसे कहना चाहिये कि वे युद्धसे अलग रहें और धन-जनसे किसी तरहकी मदद न दें। यह हमारा कर्तव्य है, लेकिन बावजूद इसके ब्रिटिश सरकारने भारतीय जनताके साथ जो व्यवहार किया है, प्रतिक्रियाशील वृत्तियोंको उकसानेका जो प्रयत्न

किया है. और युद्धके लिये जिस प्रकार जबरन जनतासे धन लिया गया है उसे न कभी हम भूल सकते हैं और न उसकी उपेक्षा कर सकते हैं। कोई भी आत्म-सम्मान रखनेवाला व्यक्ति इस तरह की जबर्दस्ती नहीं सह सकता और भारतीय जनता इसे कभी नहीं बर्दाश्त कर सकती। मैं आपके सामने राजके विरुद्ध कुछ ओफेंस करनेके कारण व्यक्तिगत रूपसे खड़ा हूं। आप उस राजके प्रतीक हैं। लेकिन मैं एक व्यक्तिके अलावा कुछ अधिक हूं, मैं भी इस समय एक प्रतीक हूं, उस भारतीय राष्ट्रवादका प्रतीक हूँ' जिसने ब्रिटिश साम्राज्यवादसे पृथक् होने और भारतकी स्वाधीनता प्राप्त करनेका संकल्प किया है। मुझे नहीं आप लाखों करोड़ों भारतीयोंको देखें। मैं आपके सामने अपने ट्रायलके लिये खड़ा हूँ मगर ब्रिटिश साम्राज्यवाद खुद ही विश्वकी अदालतके सामने ट्रायल पर है। अदालतके कानूनोंसे बढ़ कर आज संसारमें शक्तियाँ हैं। भावी इतिहास शायद कहे कि सुप्रीम ट्रायल के समय ब्रिटिश साम्राज्य और ब्रिटिश जनता हार गयी, क्योंकि वह बदलती दुनियाके अनुकूल न हो सकी। इतिहास चाहे साम्राज्यके भाग पर हँसे जो कि अपनी कमजोरीके कारण हमेशा गिरे हैं। कुछ खास कारण कुछ खास नतीजे निकालते हैं। हम कारण जानते हैं और नतीजा सामने आने ही वाला है।

पाकिस्तान

—:o:—

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने पाकिस्तानके सम्बन्धमें अपना दृढ़ स्पष्ट मत व्यक्त किया। लाहौरमें पंडित नेहरूने कहा ;—

पृथक् निर्वाचनका खात्मा होना चाहिये, क्योंकि पृथक् निर्वाचनके कारण ही तमाम साम्प्रदायिक गड़बड़ी है।" पंडितजीने कहा ; कांग्रेस और लीगका झगड़ा, वायसरायकी कार्यकारिणीके पदोंपर नहीं है। वस्तुतः इसमें कांग्रेसके आधारभूत सिद्धान्तों का सवाल है। कांग्रेस राष्ट्रीय आधारपर समृद्ध हुई है, कांग्रेस के लिये यह मुमकिन नहीं है कि अपने आधारभूत सिद्धांतोंको छोड़ दे, जिसका अर्थ है कांग्रेसके अस्तित्वका नाश।

नेहरूजीने कहा, वे भारतके विभाजनके विरुद्ध हैं, इसका कारण संयुक्त भारतके सम्बन्धमें कोई भावुकतापूर्ण पक्षपात नहीं है। प्रगतिशील आधुनिक विचारोंके कारण ही वे अखण्ड भारतके समर्थक हैं। आपने कहा है, "विभाजित भारत कमजोर राज होगा, जैसे कि ईराक और ईरान है जो कि पूर्ण स्वाधीन राज नहीं

हैं और बड़े राष्ट्रोंकी दयापर आश्रित हैं। पाकिस्तान, साम्प्रदायिक समस्याका हल नहीं है। दोनों ही जोनोंमें अल्पमत रहेगा। इसके सिवा देशका विभाजन धर्मके आधारपर नहीं हो सकता। कैथोलिक और प्रोस्टेंट एक ही राष्ट्रकी भांति एक साथ रहते हैं। इसपर हर एकको गंभीरता पूर्वक ध्यान देना चाहिये। लीग सिर्फ उन क्षेत्रोंके विभाजनकी मांग पेश कर सकती है, जिन क्षेत्रोंमें मुस्लिम बहुमत बहुत अधिक है। यह याद रखना चाहिये कि इसका अर्थ पंजाब और बंगालका विभाजन है। जहां पंजाब और बङ्गालमें गैर मुस्लिम बहुमत है, उसे आप पाकिस्तानके साथ चलनेको मजबूर नहीं कर सकते। क्या बंगाली या पंजाबी चाहे वे मुसलमान हों या हिन्दू, यह पसन्द करेंगे कि उनके प्रान्त जो भाषाकी दृष्टिसे एक हैं, विभाजित किये जायं? हमें इन समस्याओंका सामना करना पड़ेगा। अगर मुसलमान विभाजन चाहते हैं तो कोई ताकत उन्हें नहीं रोक सकती। लेकिन मैं यह समझानेकी भरपूर कोशिश करूंगा कि विभाजनसे किसीका हित न होगा, मुसलमानोंका भी नहीं।"

"यह कहना कठिन है कि वर्तमान स्थितिमें संसार कब तक रहेगा। संसारकी वर्तमान स्थितिमें भारतमें पाकिस्तान जैसा सवाल उठाना बेकार और अर्थ हीन है। आज युरोपके देशोंकी स्थिति भारतीय रियासतोंसे भी गयी बीती है। समयका तकाजा है कि पाकिस्तानकी आवाज उठानेकी अपेक्षा छोटे प्रदेशोंको अपना सर्वनाश बचानेके लिये संघमें शामिल होना चाहिये।

भारत एक विस्तृत महान देश है, और पाकिस्तान, जैसी मामूली समस्या न उठाकर उन्हें देशोन्नतिकी भावी योजना बनाने, देशके उत्पादक स्रोतोंके बढ़ाने और बेकारी दूर करनेपर विचार करना चाहिये। मेरा और कांग्रेसका विचार स्वतन्त्र भारतके साथ अन्य देशोंका फेडरेशन स्थापित करनेका है लेकिन पाकिस्तान जैसे गौण प्रश्न मुख्य प्रश्नोंसे ध्यान बटाते हैं। अफसोस है कि देशके सार्वजनिक साम्प्रदायिक संगठन स्वतन्त्रताकी मांगको शर्तोंके अधीन करते हैं। इसका कारण आपसका भय और अविश्वास है। सिख और मुसलमान बहादुर जातियां हैं उन्हें हिन्दुओंसे डरनेका कोई कारण नहीं है। कांग्रेसने घोषित किया है कि पाकिस्तान जो मांगते हैं उनके लिये और सम्पूर्ण भारतके लिये हानिकर है। फिर भी अगर मुसलमान पाकिस्तानकी जिद्द करें तो वे भले ही ले लें पर पाकिस्तान मुझे एक अव्यावहारिक समस्या लगती है। कांग्रेसने मुसलमानोंको आत्म निर्णयका अधिकार दिया है, लेकिन सवाल यह है कि पाकिस्तान हो कैसे? मुसलमानोंको इसपर ठण्डे दिलसे विचार करना चाहिये। यह एक महान् उलझनदार समस्या है। यही कारण है कि मुस्लिम लीगने अभी तक इसका खुलासा नहीं किया। अगर पाकिस्तान दिया गया तो पंजाब और बंगालके जिन क्षेत्रोंमें हिन्दुओंका बाहुल्य है, वे हिन्दुस्तानमें शामिल होंगे; फलतः पंजाब और बंगाल के टुकड़े करने होंगे। मैं कल्पना नहीं कर सकता कि कोई समझदार पंजाबी या बंगाली, पंजाबके या बंगालके दो टुकड़े किये

जाना पसन्द करेगा जब कि पंजाब और बंगाल प्रान्तकी संस्कृति और भाषा एक है।

'पाकिस्तान' एक भावुकतापूर्ण नारा है, और जब तक इसकी रूप रेखा प्रत्यक्ष नहीं होती तब तक कौन इसे देगा, और कौन लेगा ?

अगर पंजाब दो भागोंमें बांटा गया तो हिन्दू सिख प्रधान समृद्ध भाग हिन्दुस्तानमें मिल जायगा और पञ्जाबी पाकिस्तानकी आर्थिक स्थिति दृढ़ नहीं होगी।

इन समस्याओंका समाधान कांग्रेस, ब्रिटिश सरकार या अन्य किसी द्वारा नहीं बल्कि संसारकी स्थितिके अनुसार अपने आप होगा। मुझे यकीन है कि भारतका विभाजन भी हुआ तो वह अस्थायी होगा।

सन् १९४५ की घटनाओंका जिक्र करते हुए पण्डितजीने कहा, भारतके लिये स्वाधीनता संग्रामके झण्डे या उस झण्डेको लेकर चलने वालोंकी बेइज्जती सहना असंभव था। जिन्होंने भारतकी सम्मान रक्षामें प्राणोंकी बलि चढ़ा दी वे शहीद हैं, और मैं उनके बलिदानोंकी सराहना करता हूं।

पण्डितजीने कहा, भारत ही नहीं सारी दुनिया, संकटकालसे गुजर रही है, सिर्फ भारतके सामने ही महत्वपूर्ण समस्या नहीं है, बल्कि अन्य देशोंमें भी ऐसी ही समस्याएं मौजूद हैं। तेजीसे बदलने वाली दुनियामें इन समस्याओंके कारण हमें निरुत्साह नहीं होना चाहिये, बल्कि शक्ति पूर्वक इन समस्याओंके समाधान

के लिये तैयार रहना चाहिये। जब कि भारत आजादीकी ओर बढ़ रहा है, ऐसी समस्याएं सामने आवेंगी ही।

कांग्रेसकी यह दृढ़ सम्मति है कि भारत 'युनिटों' में विभाजित नहीं होना चाहिये। देशकी आर्थिक और रक्षा विषयक दृष्टिसे समयका तकाजा है कि भारत एक देश रहे। आनेवाली दुनियामें छोटे राष्ट्रोंका भाग्य शून्य है। छोटे राष्ट्रोंकी स्थिति ईराक और ईरान जैसी होगी। बड़े-बड़े राष्ट्र-संघ और राष्ट्र-संघ बनानेकी सोच रहे हैं. ऐसी अवस्थामें अगर भारतका विभाजन होगा तो उसका खात्मा हो जायगा। मैं भारत ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, बर्माका, दक्षिण एशिया-संघ बनानेका पक्षपाती हूं।

मुख्य सवाल भारतकी स्वाधीनताका है, स्वाधीनता पा लेने पर सब प्रश्न हल कर लिये जायंगे। कांग्रेसने विभिन्न जातियों को स्वभाग्य निर्णयका अधिकार दे दिया है। मैं किसीको बृहत्तर भारतमें रहनेके लिये मजबूर करना नहीं चाहता किन्तु यह स्मरण रहना चाहिये कि अगर कोई 'युनिट' शेष भारतसे अलग रहना चाहे तो उसे फिर वही अधिकार दूसरेको भी देना होगा। पण्डितजीने कहा, वे गुटोंके आत्मनिर्णयके अधिकारको भी मानते हैं।

एटम बमके युगमें जब दुनिया तेजीसे बदल रही है, पाकिस्तान जैसे प्रश्नका कोई महत्व और उपयोग नहीं है। बहुतसे देशोंके सामने असली समस्या विभाजनकी नहीं है बल्कि नाशसे बचनेके लिये एक संघमें शामिल होनेकी है।

पण्डितजीने कहा, भारत प्राचीन कालमें एक महान् देश था, उसने एशियाके अन्य देशोंपर शासन किया था और उसकी सभ्यता और संस्कृतिका विस्तार बहुत दूर तक हुआ था लेकिन आज भारतकी यह हालत क्यों है ? आज भारत गुलाम क्यों है ? इसके कारण हैं, हमारी कल्पनाकी कमजोरी, धर्मका दुरुपयोग। अफसोस है कि जब संसारमें क्रान्ति हो रही है, भारतीय पुरानी चीजोंसे चिपके हुए हैं। अविश्वास, भेद-भाव और साम्प्रदायिक वैमनस्य भारतमें फैला हुआ है।

एटम बमोंने जापानके दो शहरोंके पांच लाख मनुष्योंका संहारकर डाला और जापानको आत्मसमर्पण करना पड़ा, लेकिन युद्धमें विजयी होनेपर भी युद्धके कारण ही ब्रिटेन आज दूसरी कोटिकी शक्ति हो गया। रूस और अमेरिका प्रथम श्रेणीकी शक्तियां हैं। संसारमें क्रांतियां हो रही हैं। देश इस विचारमें पड़े हुए हैं कि सर्वनाशसे अपनी रक्षा कैसे करें ? लेकिन भारतीय अभी भी झगड़ रहे हैं, सिर्फ सरकारी पदोंके लिये ही नहीं बल्कि राजनैतिक दलोंमें स्थिति और अधिकार पानेके लिये। कांग्रेस ही भारतकी स्वाधीनताका संग्राम चलानेवाली संस्था है, उसीने जनतामें जागृति पैदा की है। आज मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा आदि साम्प्रदायिक संस्थाएं कांग्रेसका विरोध कर रही हैं लेकिन कांग्रेस उनकी मा है, इन संस्थाओंने अभी तक प्रस्ताव पास करनेमें कांग्रेसकी नकल की है और ये धमकी दिखाकर सफलता प्राप्त करना चाहती हैं। जैसा कि कांग्रेस करती है, ये

संस्थाएं कसौटीपर अपनेको नहीं कसना चाहतीं और न खतरा उठाना चाहती हैं।

अगर सीमाप्रांत, पंजाब और बङ्गाल स्वभाग्य निर्णयका अधिकार चाहें तो कांग्रेस राजी है, लेकिन पञ्जाब और बङ्गाल के हिन्दू, मुसलमान, सिखोंको प्रान्तके विभाजनकी मांग करनेके पहले अच्छी तरह सब बातें सोच लेना चाहिये। उन्हें यह स्मरण रखना चाहिये कि गो कि उनका धर्म विभिन्न है, लेकिन उनकी सभ्यता, संस्कृति, भाषा एक है। बङ्गालके अकालमें ही देखिये, लाखों हिन्दू, मुसलमान एक साथ मर गये। असली सवाल भोजन और वस्त्रका है, और यह सवाल राष्ट्रीय सरकार द्वारा ही हल हो सकता है। एक मात्र कांग्रेस ही सबसे बड़ी राजनैतिक संस्था है, कोई साम्प्रदायिक संस्था सम्पूर्ण भारतके नामपर नहीं बोल नहीं सकती। दमनके बावजूद भी कांग्रेस आज पहलेसे दुगुनी शक्तिशाली है, जनताको कांग्रेसको मजबूत बनाना चाहिये, जो भारतकी स्वाधीनताके लिये ब्रिटिश सरकारसे युद्ध कर रही है और जब तक भारत स्वाधीन न हो तब तक युद्ध करती रहेगी।

आत्मनिर्णयके सम्बन्धमें कांग्रेसका रुख बिलकुल साफ है। वह चाहती है, भारत एक राष्ट्रीय इकाईके रूपमें रहे फिर भी वह प्रान्तोंको अपने शासनमें काफी स्वाधीनता देती है, फिर भी अगर किसी युनिटकी जनता राष्ट्रीय इकाईमें नहीं रहना चाहे तो कांग्रेस उसे शामिल रहनेके लिये मजबूर नहीं करती। इस प्रकार

कांग्रेस स्वभाग्य निर्णय या विभाजनका हक मानती है। लेकिन मैं भारतके टुकड़े किये जाने और गुटोंके स्वतन्त्र राज बनानेको, भारतके लिये हानि कारक मानता हूँ।

फिर भी अगर कुछ युनिट अलग रहना चाहें तो भले ही रहें मगर वे अपने साथ उन्हें नहीं ले जा सकते जो जाना नहीं चाहते। मेरा ख्याल है कि एक दफा अलग होनेका अधिकार मान लेनेसे अलग होनेकी इच्छा तृप्त हो जायगी। इस प्रकार निष्पक्ष होकर विचार करना चाहिये। मेरी इस प्रश्नपर विभिन्न राय है। यह कोई बात नहीं है कि भारत एक राष्ट्र है या एकसे अधिक राष्ट्रोंका समूह है। राष्ट्रकी सन्तोषजनक व्याख्या अभी तक नहीं हो सकी है। इसपर ऐतिहासिक, हजारों दृष्टियोंसे बहस हो सकती है। अगर सौ देश भी एक साथ रहना चाहें तो वे एक देश हैं। लेकिन अगर कोई गुट या जाति एक साथ नहीं रहना चाहे तो फिर यह सवाल ही नहीं उठता कि वह एक राष्ट्र है या दो राष्ट्र। दर असल यह भावना विदेशी है, इसे हम अपनेमें मिलाकर हजम नहीं कर सकते। हमें दोनों दलोंके सन्तोषदायक रास्ता खोजना होगा। दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तपर गौर कीजिये। इसका आधार धर्म माना गया है। आजकी दुनियामें यह आधार मेरी समझमें नहीं आता। भारतके दो राष्ट्रोंका आधार धर्म है, और ये दोनों हर एक गांवमें एक दूसरेसे मिले हुए हैं। एक धर्म मानने वाली जनताको, उसके स्थानसे हटाकर, उसी धर्मवालोंमें पहुंचा देना बहुत ही कठिन कार्य होगा। मान लीजिये दो राष्ट्रोंके

सिद्धान्त पर भारतका विभाजन हो रहा है, हो सकता है देशके एक भागमें लाखों व्यक्ति ऐसे हो सकते हैं, जिनका धार्मिक सम्बन्ध एक ऐसे दूसरे भागसे है जहां वे आबादीका दसवां भाग हैं, इस सिद्धान्तके अनुसार मुस्लिम भागमें हिन्दू विदेशी और हिन्दू भागमें मुस्लिम विदेशी होंगे। अगर आप यह सिद्धान्त मान लेते हैं तो हर तरहकी कठिनाइयां पैदा होंगी। विदेशी, राज में पूरी तरह नहीं मिलाये जा सकते और लड़ाईके समय तो ये बहुत ही खतरनाक हो सकते हैं।

जीवनके सिद्धान्त

सात वर्ष पहले एक अमेरिकन प्रकाशकने मुझसे अपने जीवन के सिद्धान्त पर एक निबन्ध लिखनेके लिये कहा था। तब मुझे स्वयं अपने जीवनके सिद्धान्त या उसके दर्शन-शास्त्रका ज्ञान न था। मूल सिद्धान्तोंकी अनभिज्ञतासे मेरे कार्यमें बाधा पड़ती हो, यह बात न थी। जैसे एक बाण किसी बातका ध्यान न रखते हुए अपने लक्ष्यकी ओर दौड़ता है, वैसे ही परिस्थितियोंके अनुसार अपने लक्ष्यके सामने मुझे और कुछ न सूझता था। परन्तु अब वह बात नहीं रही। संसारमें सर्वत्र दुष्टता-ही-दुष्टता दिखलाई देती है। इसलिये सन्देह होने लगता है, कि मनुष्य क्या स्वभावतः ही दुष्ट है। क्या बिना युगों तक कष्ट झेले हुए उसके लिये सुधारका कोई मार्ग ही नहीं है? साध्य-साधनमें क्या सम्बन्ध है? यदि दोनोंका एक दूसरे पर प्रभाव पड़ता है तो दुष्ट साधनों से साध्य भी विकृत हो सकता है। पर श्रेष्ठ साधन सबकी सामर्थ्यमें नहीं हैं। ऐसी दशामें मनुष्य क्या करे? इन प्रश्नोंसे

प्रेरित होकर मुझे जीवनके सिद्धान्तों पर विचार करना पड़ रहा है।

जीवनके प्रति मेरा दृष्टिकोण वैज्ञानिक रहा है। जिस तरह हिंदू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई आदि धर्मोंका पालन होता है, उसे देखते हुए मुझे इनमेंसे किसीमें भी श्रद्धा न रही। इन सबमें मुझे अन्ध-विश्वास, दम्भ, पाखण्ड, टोना-टामर ही देख पड़ा। जीवनके प्रति इन धर्मोंका दृष्टिकोण कदापि वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। पर साथ ही यह मानना पड़ेगा कि धर्मसे मनुष्य स्वभावकी कई भीतरी आवश्यकताओंकी पूर्ति हुई है। आज भी संसारके अधि-कांश लोग बिना किसी धर्मका सहारा लिये नहीं रह सकते। धर्मने यदि कुछ स्त्री-पुरुषोंको भला बनाया है, तो दूसरोंको उसने संकीर्ण हृदय, कठोर तथा अत्याचारी भी बनाया है। व्यापक दृष्टिसे धर्मका सम्बन्ध मानव अनुभवके अदृश्य प्रदेशसे है। यह तो स्पष्ट है कि हमारे चारों ओर एक अदृश्य जगत है, जिसमें विज्ञान अभी तक नहीं घुस पाया, क्योंकि उसके पास इसके साधन ही नहीं हैं। दृश्य जगतमें देश-कालानुसार परिवर्तन होता रहता है। किन्तु रहस्यमय अदृश्य जगतके साथ उसका सम्पर्क बना रहता है। कोई विचारशील व्यक्ति इस अदृश्य जगतकी ओरसे आंखें नहीं मूंद सकता। जीवनका उद्देश्य क्या है, विज्ञान इसे नहीं बतलाता। पर साथ ही विज्ञानका कार्य-क्षेत्र विस्तृत होता जाता है और बहुत सम्भव है कि किसी दिन अदृश्य जगतपर भी उसका आक्रमण हो जाय, तब हमें व्यापक रूपसे

जीवनका उद्देश्य समझनेमें सहायता मिलेगी या कम-से-कम मानव अस्तित्वको प्रकाशित करनेवाली किरणोंकी एक झलक तो अवश्य दिखलाई देगी। धर्मका समावेश दर्शनमें हो जाता है। आधुनिक मनुष्य बाह्य संसारमें फंसा हुआ है, परन्तु विपत्तियों का बोझ टूट पड़नेपर प्रायः उसका ध्यान दर्शन और अध्यात्म-वादकी ओर जाता है। अध्यात्मवादकी ओर मेरा आकर्षण कभी नहीं होता। पर तब भी कभी-कभी इसके तर्कोंकी ओर मेरा ध्यान जाता है। लेकिन अधिक समय तक उनमें मेरा मन नहीं लगता और उनसे भाग खड़े होनेमें ही चैन आता है।

मेरी रुचि इस जगत तथा इस जीवनमें है, न कि किसी दूसरे जगत या भावी जीवनमें। आत्मा जैसी कोई वस्तु है या मृत्युके बाद भी कोई जीवन है, यह मैं नहीं जानता। यद्यपि ये महत्व-पूर्ण प्रश्न हैं, तथापि इनसे मुझे किंचित भी परेशानी नहीं होती। जिन परिस्थितियोंमें मैं पला हूं, उनमें आत्मा, पुनर्जीवन, कर्मफल आदिपर सहज ही विश्वास कर लिया जाता है। मैं भी इनसे थोड़ा बहुत प्रभावित हुआ हूँ और उनको माननेमें मैं कोई हानि नहीं समझता। शरीरका अन्त होनेपर कोई आत्मा जीवित रह सकती है? कर्मफलका सिद्धान्त कार्य-कारणकी दृष्टिसे समझमें आता है यद्यपि मूल कारणपर विचार करनेसे इसमें बाधा पड़ती है। आत्मा मान लेनेपर पुनर्जन्म भी सिद्ध हो जाता है। परन्तु इनमेंसे किसीको भी धार्मिक श्रद्धा मान कर उनमें मेरा विश्वास नहीं है। अदृश्य जगतके सम्बन्धमें ये अनुमान मात्र हैं। मेरे

जीवनपर उनका कोई प्रभाव नहीं, बादमें वे चाहे ठीक सिद्ध हों या गलत, मेरे लिये कोई भेद न होगा। संसारपर एक दृष्टि डालनेसे उसकी अज्ञात गहराईमें एक विचित्र रहस्यका अनुभव होता है। यह क्या है, इसको तो मैं नहीं बतला सकता, पर मैं उसे कदापि ईश्वर नहीं कह सकता, क्योंकि आजकल ईश्वरका जो अर्थ है उसमें मुझे विश्वास नहीं। वह कोई देवता या दैवी-शक्ति है, मुझे आश्चर्य है कि इसमें लोग विश्वास कैसे करते हैं? साकार ईश्वरकी बात तो सर्वथा विचित्र जान पड़ती है। वेदान्तके अद्वैत वादकी ओर मेरा कुछ झुकाव होता है। मैंने उसका पूर्णरूपसे अध्ययन नहीं किया, पर मैं यह अवश्य अनुभव करता हूँ कि केवल बौद्धिक कल्पनाओंसे मनुष्य अधिक आगे नहीं बढ़ सकता। साथ ही वेदान्त या अन्य ऐसे ही सिद्धान्तोंसे, जो अनन्ततामें गोता लगाते हैं, मुझे भय-सा लगता है। प्रकृतिकी भिन्नता और पूर्णतासे मैं चकित हो उठता हूँ और अन्ततः मेरे हृदयमें भीतरी साम्य आता है।

अगस्त १९४२

—— ::o:: ——

८ अगस्त १९४२ का ऐतिहासिक दिन था। 'भारत छोड़ो' प्रस्तावको पास करनेवाले कांग्रेस अधिवेशनमें अधिक रात बीते हमें विश्रामका अवसर मिला। दिनके श्रमसे श्रान्त बिस्तरपर पड़ते ही मैं काठ हो गया। निद्रादेवीकी गोदसे मैं अभी मुक्त भी नहीं हुआ था कि अतिथि-घण्टी बज उठी। द्वारपर किसीके खटखटानेकी आवाज आई। अभी सबेरा होनेमें अधिक विलम्ब था। इतने तड़के किसीके आनेकी आशा भी न थी। द्वार खोला गया। देखा कृष्ण-मन्दिरका निमन्त्रण लिये पुलिस द्वार पर खड़ी थी। मैं चटपट तैयार हो गया और मुझे ले पुलिसकी कार अज्ञात स्थानको रवाना हो गयी।

९ अगस्तको प्रातःकाल होते-होते समस्त भारतमें गिरफ्तारियोंकी धूम मच गयी। इसके पश्चात् जो कुछ हुआ उसकी सत्यता सेंसरकी ओटमें अभी भी रहस्य बना हुआ है। कई सप्ताह बाद हमलोगोंके पास जो समाचार पहुंचे वे सघन वृक्षोंसे छन-

कर आती सूर्य किरणोंकी भांति नगण्य थे और उससे वास्तविकताका परिचय प्रायः बिलकुल असम्भव था। जनताके सभी नेता उससे सहसा छीन लिये गये और उन्हें अज्ञात स्थानोंमें नजरबन्द कर दिया गया। जनता नेतृत्वहीन कर दी गयी। परिणाम जो होना था वही हुआ। यद्यपि किसीकी समझमें नहीं आता था कि क्या करना चाहिये किन्तु सरकारकी इस अनुचित निन्दनीय तथा आकस्मिक कार्यवाहीका विरोध तो उसे करना ही था। फिर क्या था, प्रदर्शन आरम्भ हो गये। सरकारको नागरिकोंके शान्तिपूर्ण उपाय भी सहन न हुये। वह पाशविकता पर आ गयी। प्रदर्शन भंग किये जाने लगे, अश्रु गैस बमोंका प्रयोग किया जाने लगा और सार्वजनिक भावोंको प्रकट करनेके सभी साधनोंको रोक दिया गया। परिणाम और भयंकर हुआ। जनताके अन्तरमें धधकती अग्नि ज्वालामुखीकी भांति विस्फोट कर उठी। नगरों तथा देहातोंमें भीड़ इकट्ठी होने लगी, पुलिस तथा फौजें दमनपर तुली हुई थीं। भीड़से उनका संघर्ष हो गया, उसने आक्रमण किया विशेषतः उनपर जिन्हें वह ब्रिटिश शासनका प्रतीक समझती थी—पुलिस स्टेशन, डाकघर तथा रेलवे स्टेशन। उन्होंने टेलीफोन तथा टेलीग्राफके तारोंको काट डाला। इन निरस्त्र, नेतृत्व विहीन नागरिकोंने पुलिस तथा फौजकी गोलीका सामना किया, उन्हें सीनेपर लिया, कुछ सदाके लिये भारतमाताकी गोदमें सदाके लिये सो गये ; कुछ निकटवर्ती अस्पतालोंमें अपनी मरहम-पट्टी कराने लगे। पुलिस अधिकारियोंके कथ-

नानुसार ५३८ अवसरोंपर जनतापर गोलियां चलायी गयीं, कहीं-कहीं तो निकटसे उड़ते विमानों द्वारा उनपर मशीनगनका भी प्रयोग किया गया। दो-तीन मास तक देशके विभिन्न भागोंमें घटनाओंका यही क्रम रहा। सामुहिक घटनाओंका स्थान छिटपुट घटनाओंने लिया। एक दिन कामन सभामें ब्रिटेनके तात्कालिन प्रधान मन्त्री श्रीचर्चिलने कहा—सरकारने अपनी पूर्ण शक्तिसे उपद्रव दबा दिया है। और सैन्य-सहायता पहुंच गयी है। श्वेत सेना भी बढ़ा दी गयी है। उन्होंने भारतकी पुलिस तथा अधिकारी वर्गकी प्रशंसा की।

सरकारके इस घोर दमन तथा अत्याचारकी देशमें प्रबल प्रतिक्रिया हुई। नगर तथा देहात एक हो गये। सरकारी प्रतिबन्धोंके होते हुए भी प्रदर्शन होने लगे, हड़ताल हुई, सर्वत्र दूकानें, बाजार तथा कारबार बन्द होने लगे। हड़ताल लगातार कई दिनों तक होती रही, कहीं-कहीं कारबार सप्ताहों बन्द रहे तो कहीं महीने बीत गये। मजदूर हड़तालने भी जोर पकड़ा। राष्ट्रीय नेताओंको जेलमें ठूंस देनेकी सरकारकी निरंकुश कार्यवाहीके विरोधमें उन्होंने यत्र-तत्र सर्वत्र हड़ताल घोषित कर दी। अहमदाबाद और जमशेदपुर इसके जीवित उदाहरण हैं। जमशेदपुरके टाटा वर्क्सके मजदूरोंने कामपर जाना बन्द कर दिया और तबतक कामपर नहीं गये जब तक प्रबन्ध विभागने यह आश्वासन नहीं दे दिया कि वे कांग्रेसके नेताओंको छुड़ानेका यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे। अहमदाबादमें तो लगभग तीन महीने तक शान्तिपूर्ण

हड़ताल जारी रही। यह कठिन समय था। काम न करनेपर मजदूरोंको मजदूरी न मिलती थी और पैसे देनेपर भी सामान नहीं मिलते थे। फिर भी मजदूरोंने अपनी हानि उठा कर खाली पेट रहकर हड़ताल जारी रखी।

प्रान्तोंमें उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेशकी स्थिति विचित्र थी। यहांकी बहुसंख्यक जनता मुस्लिम है। अन्य प्रान्तोंकी भांति वहां सामुहिक गिरफ्तारियां अथवा अन्य कोई उत्तेजनात्मक कार्यवाही नहीं हुई। ऐसा सम्भवतः कुछ तो इसलिये हुआ कि सीमाप्रान्तके निवासियोंको शीघ्रतासे उत्तेजित होनेवाला नहीं समझा गया और कुछ यह दिखानेके लिये कि राष्ट्रीय आन्दोलन से मुस्लिम पृथक हैं, किन्तु जब भारतके शेष भागकी अशांतिकी चिनगारी वहां पहुंची वहांके देश भक्त मुस्लिमोंका भी खून खौल उठा। उन्होंने भी ब्रिटेनको चुनौती दी। भावने प्रदर्शनका रूप ग्रहण किया। सरकारका दमन चक्र आरम्भ हुआ। गोलियोंकी धड़ाधड़ने अग्निमें घी डालनेका काम किया। वातावरण और भी विषाक्त हो गया। हजारों व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये यहां तक कि महान पठान नेता बादशाह खान (अब्दुल गफ्फार खां) को भी पुलिसने घूसोंसे बुरी तरह घायल कर दिया। निरंकुशता की सीमा यहां पार कर गयी। अपने साधु नेताकी इस अवस्था से जनता उबल पड़ी। किन्तु बादशाह खानने अपनी अलौकिक अनुशासन शक्तिसे उन्हें आगे बढ़नेसे रोक दिया।

आकस्मिक तथा असंगठित प्रदर्शन तथा जनताके आक्रमणात्मक एवं विनाशकारी उपद्रवों तथा पुलिस और शक्तिशाली सशस्त्र सेनाओंके विरोधसे ब्रिटेनके विरुद्ध जनताके मनोभावका पता चलता है। यह बात नहीं थी कि ऐसी भावना पहलेसे विद्यमान नहीं थी। यह पहलेसे ही मौजूद थी किन्तु गिरफ्तारियों तथा गोलियोंकी धड़ाधड़ने इसे साकार रूप दे दिया। कुछ समय तक तो जनताको यह ज्ञान ही नहीं हो सका कि क्या करना चाहिये। कोई निर्देश नहीं था, कोई कार्य-क्रम नहीं था। उनका मार्ग प्रदर्शन करनेके लिये कोई प्रसिद्ध नेता नहीं रह गया था फिर भी वह आवश्यकतासे अधिक उत्तेजित और क्रुद्ध हो गयी थी जैसा कि ऐसी परिस्थितियोंमें प्रायः हुआ करता है। स्थानीय नेता आगे बढ़े और जनताने उनका अनुसरण किया। किन्तु उन्होंने जो नेतृत्व किया वह भी साधारण था। वास्तवमें यह सामुहिक अशांति थी। समस्त भारतमें अल्प वयस्कों विशेष कर छात्रोंने हिंसात्मक तथा शांतिपूर्ण कार्यवाहियोंमें प्रमुख भाग लिया। बहुतसे विश्वविद्यालय बन्द कर दिये गये। कुछ नेताओंने ऐसी स्थितिमें भी शान्तिपूर्ण उपायोंसे काम लेना चाहा किन्तु उस समयके उत्तेजनापूर्ण वातावरणमें वह सम्भव नहीं था। जनता कुछ समयके लिये २० वर्षोंसे पढ़े अहिंसाके मन्त्र को भूल गयी फिर भी कार्य तथा कल्पनासे वह किसी प्रकारकी हिंसात्मक कार्यवाहीके लिये तैयार नहीं थी। स्थिति ऐसी थी कि जनताके मनमें अहिंसाके उपदेश ही सन्देह उत्पन्न करने लगे।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि कांग्रेसने अपने सिद्धान्तको त्याग कर हिंसात्मक कार्यवाहियोंके लिये कोई संकेत दिया होता तो हिंसा सौ गुने हजार गुने वेगसे आगे बढ़ गयी होती।

किन्तु इस प्रकारका कोई संकेत नहीं दिया गया था। इसके विपरीत वास्तवमें कांग्रेसके अन्तिम संदेशमें कार्यरूपमें अहिंसा के सिद्धान्तकी पुनः पुष्टि की गयी थी।

यद्यपि अहिन्साकी नीति कुछ समयके लिये विलीन हो गयी तथापि वर्षोंसे जनताको उसकी जो ट्रेनिंग दी गयी थी उसका उसके मस्तिष्कपर अमिट प्रभाव था। यद्यपि उत्तेजना अधिक फैल गयी थी किन्तु प्राण लेनेकी भावना उसमें तनिक भी विद्यमान न थी। सरकारी सम्पत्तियोंकी अत्यधिक क्षति हुई, यातायात विच्छिन्न कर दिये गये फिर भी विरोधियोंके जीवन हरणकी बहुत कम घटनाएँ घटीं। जहां तक मुझे ज्ञात हो सका है समस्त भारतमें लगभग १०० व्यक्ति भीड़ द्वारा मार डाले गये, जो अशांत क्षेत्र तथा पुलिससे हुए संघर्षकी तुलनामें बिलकुल नगण्य है। इसमें सन्देह नहीं कि बिहारके किसी स्थानपर दो कनाडियन चालकोंकी हत्याकर निर्दयतापूर्ण कार्य किया गया। सरकारी अनुमानके अनुसार पुलिस तथा फौजकी गोलीसे १०२८ मरे तथा३२०० घायल हुए। ५३८ स्थानोंपर गोलियां चलीं। चलती फिरती लारियोंसे जो गोलियां छोड़ी गयीं उनकी इसमें गणना नहीं है। लोगोंका अनुमान है कुल २५००० व्यक्ति मौतके घाट उतार दिये गये। जो कुछ भी हो वास्तविकता अभी भी एक रहस्य है।

यह असाधारण बात थी कि बहुतसे स्थानोंमें ब्रिटिश शासनका अस्तित्व ही मिट गया था। सरकारको उनपर पुनः अधिकार करनेमें कई सप्ताह लग गये। ऐसी घटनाएं बिहार, बङ्गालके मिदनापुर जिले तथा संयुक्त प्रान्तके दक्षिण-पूर्वी जिलोंमें हुई। संयुक्तप्रान्तके बलिया स्थानमें जिसे जीतनेमें सरकारको काफी विलम्ब हुआ था व्यक्तिगत आक्रमण तथा आघात पहुंचानेकी बहुत कम घटनाएं हुई। वहां पुलिस स्थितिका सामना करनेमें असफल हो गयी। पुलिसके सहायतार्थ स्पेशल आर्म्ड कांस्टेबुलरीका गठन किया गया, ब्रिटिश सैनिकों तथा गुरखोंका प्रयोग किया गया, भारतीय सैनिकोंको अनजान स्थानोंमें भेजा गया जहां कि भाषा ही वे नहीं समझ सकते थे। भारतीय सेना के कुछ विशेष वर्गोंके अतिरिक्त अन्यका बहुत कम प्रयोग किया गया। यह सब हुआ किन्तु यदि सरकारने जनताके मनोभावको पहलेसे समझनेकी चेष्टा की होती तो भारतीय समस्या समाधानके निकट पहुंच गयी होती, किन्तु ऐसा होता ही क्यों, उसने तो दमन की पहलेसे ही तैयारी कर ली थी वायसरायकी आज्ञासे कानूनों-का क्षणभरमें बनना खिलवाड़ हो गया था। धमकियां बढ़ने लगीं। दमन सफल हो गया। विद्रोह दब गया। फिर क्या था अवसरवादी सरकार की ओर हो गये और सरकारको चुनौती लेनेवालोंको बुरा भला कहने लगे। सरकारकी गुप्त संस्थाएं दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगीं। अत्याचार तथा घूसखोरीका बाजार गर्म हो गया। स्कूलों तथा कालेजोंके छात्रोंको सजाएं दी

गयीं, हजारों व्यक्तियोंको कोड़े लगाये गये। सार्वजनिक कार्य-वाहियां रोक दी गयीं।

किन्तु सबसे अधिक क्षति सरल हृदय निर्धन ग्रामीणोंकी हुई उनका कष्ट पीढ़ियोंके लिये स्थायी बन गया। भारत माताके प्रति अपनी भक्तिका उन्होंने परिचय दे दिया। वे प्रयत्नमें असफल रहे और असफलताका भार उनके निर्बल कंधों पर पड़ा। ऐसी भी घटनाएं घटी हैं जिनमें ग्रामके ग्रामकी समस्त जनताको कोड़े लगाये गये हैं और उन्हें तबतक कोड़े लगाये गये जब तक वे मर नहीं गये। बङ्गाल सरकारकी ओरसे बतया गया है कि १९४२ के तूफानके पूर्व तथा पश्चात नामलुक तथा कंटाई सब डिवीजनके १९३ कांग्रेस कैंपों तथा घरोंको जला डाला गया। तूफानने विनाशका भयंकर दृश्य उपस्थित कर दिया था किन्तु इससे सरकारकी भीषण दमन नीतिमें कोई परिवर्तन न हुआ।

ग्रामोंसे बहुत बड़ी राशि सामूहिक जुरमानेके रूपमें वसूल की गयी। कामनसभामें मि एमरीके वक्तव्यके अनुसार ९० लाख का सामुहिक अर्थ दण्ड किया गया था। जिसमें ७८५०००० वसूल हुआ। भूखे नंगे दीन असहाय ग्रामीणोंसे सामुहिक जुर्मानोंके साथ बलपूर्वक जिस प्रकार अतिरिक्त धन-राशि एकत्रितकी गयी उसकी कल्पना ही हृदय कँपाये देती है।

फिर भी १९४२ में जो हुआ उसके लिये मुझे बहुत गौरव है, मुझे अफसोस होता अगर जनता चुपचाप राष्ट्रीय अपमान सह लेती।

भारतका युद्धास्त्र

::०::

हमारा मामला नाभामें चल रहा था, और हम अनेक दिनों तक दुनियासे अलग कर दिये गये थे। एक मित्रको अदालतमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिली और उन्होंने मेरे कानमें धीरेसे कह दिया कि मैं इस कांफ्रेंसका सभापति चुना गया हूँ। बिलकुल आदमी होनेके कारण इस विश्वास और सम्मान सूचक सूचनासे मुझे आनन्द हुआ, लेकिन शीघ्र ही मुझे भूतपूर्व सभापतियोंकी बुद्धिमत्ता और साहसका स्मरण और इस महान उत्तरदायित्व पूर्ण पदकी जिम्मेदारीका ख्याल आया, और मैं कुछ संकुचित सा हो गया और फिर आदमी होनेकी वजहसे जेलमें होनेके कारण उत्तरदायित्वसे बरी रह सकनेकी सम्भावना पर प्रसन्न हुआ किन्तु नाभाके शासकोंने कुछ और ही किया। मुझे अफसोस है कि वहांसे छूटनेके बादके दिन बीमारीमें बीते।

ऐसे मौकोंपर सोच विचार कर पहलेसे लिखे, छपे भाषणोंके पढ़ने और बटवानेका रिवाज है। मुझे यह सब करनेका मौका

नहीं मिला लेकिन अगर मुझे मौका मिलता भी तो शक है कि मैं 'रेकार्ड' करने लायक कुछ लिख पाता। आपने राष्ट्रीय इतिहास के अद्भुत और कठिन समयमें यह जिम्मेदारी उठानेके लिये मुझे चुना है, जब कि एक दल दूसरेसे लड़ रहा है और हमारे महान् आन्दोलनकी नींव हिल गयी है। ऐसे मौके पर हमें सर्वोत्तम और बुद्धिमत्तापूर्ण निर्देशकी जरूरत है! मैं कैसे मान लूं कि मैं वह काम कर सकूंगा!

लगभग महीने भर पहले कांग्रेसकी बैठक हुई और उसने महत्वपूर्ण निर्णय किया। कांग्रेसके अधीन हमारा संगठन होनेके कारण हम उसके निर्णयके खिलाफ कैसे जा सकते हैं? लेकिन हमारा लक्ष्य क्या है और किस तरह हम वहां तक पहुंचेंगे इस मामलेमें हमारा दिल-दिमाग बिलकुल साफ रहना चाहिये। तीन साल पहले हमारे अन्दर कोई सन्देह नहीं था। सन् १९२० और १९२१ में हमारे अन्दर पूरी आस्था और विश्वास था, हम बहस और तर्क नहीं करते थे। हम जानते थे, हम ठीक हैं और विजयके बाद विजय हासिल करते जा रहे हैं। हमने सचाईका अनुभव किया और उचित उद्देश्यके लिये अनुपम और गौरवपूर्ण ढंगसे युद्ध करनेके लिये हमने गौरव अनुभव किया। वे दिन हमारी धरोहर हैं। इसके बाद हमारे नेताओंने हमें छोड़ दिया, कमजोर होकर हम सन्देह करने लगे और हमारा उत्साह घटने लगा। पुरातनके प्रति जो श्रद्धा थी, वह चली गयी और उसके साथ आत्मविश्वास भी चला गया। इसके बाद एक साल आपसी

झगड़ोंमें गया। जब हम अपना दिमाग तक ठीक न रख सके तब हम ठीक निर्णयपर कैसे पहुंच सकते थे? फलतः अहिंसात्मक असहयोग कमजोर होने लगा। लोग कहते हैं, दिल्ली कांग्रेसका प्रस्ताव असहयोगका अन्त करता है। मैं कहता हूँ अहिंसात्मक असहयोग मर नहीं सह सकता, यह हमारे देशकी सीमा पारकर संसारकी सम्पत्ति बन गया है।

हां, तो अब सवाल यह है कि हमारा लक्ष्य क्या है? और उसके पानेके तरीके क्या होने चाहिये? हमारा ध्येय लघु और सीधा है, लेकिन इसकी व्याख्याएं बहुत-सी हैं। हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि हमें प्रान्तीय-स्वायत्त-शासनमें जरा भी दिलचस्पी नहीं है और हम भारत-सरकारके विभागोंको हस्तान्तरित किये जानेसे कोई मतलब नहीं रखना चाहते। पूर्ण आन्तरिक स्वाधीनता का अर्थ है—अर्थ, सेना और पुलिस पर हमारा पूर्ण अधिकार होना चाहिये। जब तक इनपर हमारा पूर्ण अधिकार न हो भारत में स्वाधीनता नहीं हो सकती। यह कमसे कम है लेकिन सवाल यह है कि क्या हम अपने स्वराज्यके ध्येयकी परिभाषा स्वाधीनता करें? व्यक्तिगत तौरसे मैं उस दिनका स्वागत करूंगा जिस दिन कांग्रेस अपना ध्येय स्वाधीनता घोषित करेगी। मेरा विश्वास है कि भारतका एकमात्र उचित लक्ष्य स्वाधीनता है। पर मैं इस अवसर पर कांग्रेसके ध्येयको बदलना नहीं चाहता, क्योंकि इससे अनावश्यक तर्क वितर्क होगा और मुमकिन है कांग्रेस संकुचित हो जाय और कुछको अलग हो जाना पड़े। हमें कांग्रेसका द्वार

सबके लिये खुला रहने देना चाहिये। जब जनता स्वाधीनताको भलीभांति समझ लेगी तब अपने आप परिवर्तन हो जायगा।

मैंने कहा है, महात्माजी द्वारा प्रारम्भ किये गये असहयोग आन्दोलनमें मेरा विश्वास है। मैं विश्वास करता हूं कि अहिंसात्मक असहयोग द्वारा भारत और विश्वकी मुक्ति होगी। संसारमें काफी दिन हिंसाका बोलबाला रहा। किसी भी समस्याके सुलझानेमें हिंसाकी अयोग्यता युरोपकी अवस्थासे सिद्ध है। मेरा यकीन है कि युरोपमें हिंसा बढ़ती चली जायगी, और यह हिंसा अपनी लगायी हुई आगमें जलकर राखका ढेर हो जायगी। बहुत से लोग हंसते हैं कि अहिंसा क्या कभी मानव और राष्ट्रके जीवन में निर्देशकका रूप ग्रहण कर सकेगी? वे मानव-प्रकृति और संसारमें व्याप्त क्रोध, घृणा और हिंसाकी तरफ इशारा करते हैं। हममेंसे बिरले ही इनसे रहित होंगे! मुझे खुद अपने बारेमें ही अफसोस है कि मेरे अन्दर गर्म विचार रहते हैं और बड़ी मुश्किल से मैं इस सीधे संकुचित रास्तेपर लौट पाता हूं। मगर जो हँसते हैं और मजाक उड़ाते हैं वे ऐसा न कर इसकी अन्दरुनी शक्तिको महसूस करते और इस विषयका अध्ययन करते तो उत्तम होता। संसारके बड़े-बड़े विचारवान् अहिंसाके सम्बन्धमें सोचने लगे हैं और भारतीय जनतापर इसका आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा है।

हमारे आन्दोलनकी दो विशेषतायें हैं— असहयोग और अहिंसा। असहयोग मामूली आदमी भी समझ सकता है लेकिन बहुत कमने इसे महसूस किया है, महात्माजीने ही इसकी शक्ति

से जनताको परिचित कराया। बुराई इसलिये फूलती फलती है कि हम उसे बर्दाश्त करते हैं और उसकी सहायता करते हैं। निर्दय सतानेवाली सरकार चलती रहती है, सिर्फ इसलिये कि शासित जनता अत्याचार सहती है। इङ्गलैंड भारतको गुलाम बनाये हुये हैं इसलिये कि भारतीय अंग्रेजोंके साथ सहयोग करते हैं और इस प्रकार ब्रिटिश-शासन दृढ़ करते हैं। सरकारसे अपना सहयोग हटा लीजिये और देखिये कि सरकारका ढांचा लड़खड़ा कर गिर जाता है। यह अपने आप ही होता है इसके लिये प्रमाणकी जरूरत नहीं है।

लेकिन तर्क और परिणामसे स्वयं सिद्ध होनेपर भी हममें से बहुतसे इस साधनको नहीं अपनाते। ब्रिटिश शासनने हमें कायर बना दिया है इसीलिये हमारे अन्दर साहस नहीं रहा, हम जोखिम नहीं उठा सकते। भारतकी स्वतन्त्रतासे जैसे अनुपम उपहारके लिये भी कुछ करनेसे हम डरते हैं। असहयोगका विचार भारतीय जनताके हृदयमें जम गया है, लेकिन हृदयमें जो विचार है उसे प्रगट करनेमें साहसका अभाव कारण बन जाता है। बहुतोंके लिये यह आर्थिक सवाल है। लेकिन उन्हें क्या कहा जाय जो अंग्रेज अफसरोंके सम्मानमें अपना समय शक्ति और धन खर्च करते हैं! हम इतने गिर गये हैं कि पढ़े लिखे भी अपनी बेइज्जतीमें खुद सहायक बनते नहीं शर्माते, मैं अंग्रेज अफसरोंकी शिकायत नहीं करता, वे बहादुर हैं और अपनी ताकत भर अपने देशकी सेवा करते हैं। मैं चाहता हूं

हमारे देशवासी भी वैसे ही बहादुर हों और अपने देशके गौरव और सम्मानका ख्याल रखें।

अहिंसाकी कार्यकारितामें मेरा दृढ़ विश्वास है। लेकिन अहिंसाका कमजोरी या कायरतासे कोई सम्बन्ध नहीं है। महात्माजीने बार-बार कहा है कि कायरतासे तो हिंसा बेहतर है। भय और कायरता सबसे बड़े पाप हैं और हमारे देशमें ये पाप काफी फैले हुए हैं, अगर हम भय और कायरतासे छुटकारा पालें तो घृणा नहीं रह जायगी, इसलिये हमें कायरताको अपने हृदयसे निकाल फेंकना चाहिये और कभी आश्रय नहीं देना चाहिये। हमें उस कमजोरीको अपने हृदयसे निकाल फेंकना है जिसकी वजहसे हम पाप करनेकी इच्छा करते हुए और पापका विचार करते हुए भी पाप नहीं कर पाते। यह अवस्था बहुत बुरी है। पाप करनेकी इच्छा रख, पापमें रह कर, पाप न करनेमें कोई बहादुरी नहीं है, इससे तो जान बूझ कर अपनी ताकतसे पाप करना बेहतर है क्योंकि पाप करनेका साहस करनेवाला, जब सुधर जायगा तब अच्छे कार्य भी कर सकेगा।

मैं अहिंसापर जोर दे रहा हूँ, क्योंकि इस सम्बन्धमें हमारी धारणा साफ रहना चाहिये। कुछ कालके बाद बंगालमें हिंसात्मक क्रांतिकारी आन्दोलन चल पड़ा। उसमें भारतकी स्वाधीनताके लिये जो व्यग्रता और भावना है और जिसकी वजहसे बहुतसे युवकोंने हिंसाको अपनाया है, उस व्यग्रता और भावनाकी सराहना कर सकता हूँ। मैं उस बेपरवाह साहसकी तारीफ कर

सकता हूँ जो किसीके मतकी परवाह नहीं करता, लेकिन मैं नहीं समझ पाता छिटपुट हिंसा स्वाधीनता नजदीक कैसे लाती है ? स्वाधीनता हमारा हक है और पुराने रिवाज तथा देशका साधारण कानूनके अनुसार हम स्वाधीनता पानेके लिये हिंसा अपना सकते हैं। लेकिन स्वाधीनता भी सन्देहात्मक वस्तु हो जायगी अगर हम उसे पानेके लिये झूठे तरीके इस्तेमाल करें। किसी खास परिस्थितिमें हिंसा युक्तियुक्त हो सकती है, लेकिन वह हिंसा प्रत्यक्ष, साफ-साफ होनी चाहिये। किसी भी हालतमें गुप्त हत्याका समर्थन नहीं किया जा सकता. इन तरीकोंसे आज तक किसी देशको लाभ नहीं पहुंचा। इससे हमारे महान् लक्ष्यको हानि पहुंचती है और दुनियाकी हमदर्दी हमारे साथ नहीं रहती इसलिए हम किसी भी हालतमें बम या छुरा नहीं अपना सकते। जो बिना सोचे इन तरीकोंको अपनाते हैं वे दिलसे जो प्राप्त करना चाहते हैं, अपने कामसे उसीको नुकसान पहुंचाते हैं। हम प्रत्यक्ष और सङ्गठित हिंसाकी बात भी नहीं सोच सकते। इस विषय को चुननेका हमारे पास है ही क्या ? आज पश्चिममें बोलसेविज्म और फासिज्मकी धारा बह रही है. ये दोनों वाद दरअस्ल एकसे हैं जो हिंसा और असहिष्णुताका प्रतिनिधित्व करते हैं। हमारे सामने एक तरफ लेनिन और मुसोलिनी हैं और दूसरी ओर गान्धी हैं। भारतकी आत्माका प्रतिनिधित्व कौन करता है, क्या इसके सम्बन्धमें कोई शक है ?

भारतने तीन साल पहले ही अपना रास्ता चुन लिया। उसने अहिंसा, कष्ट-सहन, प्रत्यक्ष संग्राम और शान्तिपूर्ण क्रान्तिका रास्ता चुना है। इस रास्तेसे हटा नहीं जा सकता, समय-समयपर परिवर्तन हो सकता है, आजादीका जो चित्र हमारी कल्पना दृष्टिके सामने है उसे कभी नहीं भुलाया जा सकता और किसी महान् कार्यकी सिद्धिके लिए कष्ट सहनमें जो गौरव है उसे नहीं छोड़ा जा सकता। हमें आने वाले संग्रामके लिये तैयार रहना चाहिये।

लेकिन अगर हम साम्प्रदायिक समस्याको बुद्धिमानीसे सुलझा न सके तो हमारे त्यागसे वांछित फल न निकलेगा। कुछ फटी हुई खोपड़ियोंका सवाल नहीं है, बल्कि असली सवाल है, जिसके लिये सिर फुड़ौवल होती है। यह अचरजकी बात है कि मामूली बात और बच्चों जैसे अन्धविश्वास या भ्रान्त धारणाके लिये लोग खतरा मोल लेते हैं और युक्ति तथा दलील नहीं मानते। बहुतसे पापों के लिये धर्मका बहाना बना लिया गया है। साम्प्रदायिक स्वार्थों की रक्षाके लिये बहुत कुछ कहा और लिखा जा चुका है। यह भी सुना है कि इस कार्यके लिये सभा समितियां बनायी जा रही हैं। मैं समझता हूं यह हल्ला-गुल्ला बेकार है। कार्यके लिये हमारे अन्दर साहसका अभाव है। हमारी निर्बलता हमें गुस्सा दिलाती है और हम बहादुराना शब्दोंसे अपना भय छिपाते हैं और अपने असली प्रतिद्वन्द्वीका सामना करनेका साहस न कर अपने भाई और पड़ोसी पर हमला करते हैं। गुलाम ऐसा ही करते रहे हैं। हमें चेष्टा करनी चाहिये कि एक सम्प्रदाय द्वारा

दूसरे सम्प्रदायके विरोधकी सब कार्यवाहियोंका खात्मा हो जाय और असली समस्यापर हम सबका ध्यान जमे। आपसी झगड़ों के लिये हमारे पास समय नहीं है।

मैं अब एक बातकी ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ बिना तैयारीके संग्राम नहीं चल सकता। यह काम आवश्यक है। रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा ही हमारी परीक्षा होती है। हमें कांग्रेस कमेटियोंको दृढ़ कर खद्दरका सन्देश घर-घर पहुंचाना चाहिये। महात्माजीने जेल जाते समय सन्देश दिया था। हर एकको कोई न कोई रचनात्मक कार्य करना चाहिये।

मैं आशासे परिपूर्ण हूं, मेरा विश्वास है कि शीघ्र ही भारतमें राजनैतिक स्वाधीनता आयगी, तब हम कहीं कमजोर और अयोग्य न हों! ऐसी अवस्था न आने पावे इसलिये हमें अभी से तैयार होना चाहिये, हमें महान् और दृढ़ भारतके लिये प्रयत्न करना चाहिये, हमें भारतको अपने नेताके योग्य बनाना चाहिये, जिसे भगवानने कृपा कर हमारे देशको दिया है।

यू० पी० कान्फ्रेंस बनारस १३ अक्टूबर १९२३।

नेहरू-जिन्ना पत्र-व्यवहार

—————— ::०:: ——————

नेहरूजीका श्रीजिन्नाको पत्र

तारीख ६ अक्टूबर (गोपनीय)

"कल हमने जिन मामलों पर तथा मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच समझौते पर बातचीत की थी उसके सम्बन्धमें मैंने अपने कुछ साथियोंसे बातें कीं। हम सब समझते हैं कि इससे अधिक प्रसन्नताकी बात और कुछ न होगी। तथा देशके हितमें इससे ज्यादा और लाभदायक कुछ न होगा कि दोनों संथाएं फिर मित्रों के रूपमें मिलें। उनके दिमागमें कोई सन्देह तथा गोपनीय बात न रहे और वे पारस्परिक विचार विमर्शसे अपने मतभेदोंको दूर करें तथा वायसराय या दूसरे लोगोंके मार्फत ब्रिटिश सरकार या और किसी विदेशी ताकतके हस्तक्षेपकी इच्छा न करें और न उस हस्तक्षेपको होने दें। अतएव यदि लीग समस्त भारतकी ओरसे एक संयुक्त मण्डल (टीम) के रूपमें कार्य करनेकी दृष्टिसे

अन्त:कालीन सरकारमें शामिल होनेका निर्णय करे तो हम उसका स्वागत करेंगे।

बातचीतके दौरानमें आपने जो मुद्दे रखे वे ये हैं।

१—आपका गांधीजी द्वारा सुझाया हुआ फार्मूला।

२—लीग इस समय परिगणित जातियों और अल्प संख्यकों का प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योंके लिये उत्तरदायी नहीं है।

३—यदि परिगणित जातियोंसे भिन्न अल्पसंख्यकोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योंमें से किसीका स्थान रिक्त हो जाय तो क्या करना चाहिये।

४—बड़े साम्प्रदायिक प्रश्नोंके निर्णयके लिये क्या विधि स्वीकार की जाय।

५—बदलते हुए उपाध्यक्ष।

मुद्दा संख्या १ के बारेमें हम अनुभव करते हैं कि फार्मूलाके शब्द प्रसन्नता दायक नहीं है। हम इसके मूलमें निहित उद्देश्य पर शङ्का नहीं करते। हम चुनावके फलको देखते हुए मुस्लिम लीगको हिन्दुस्तानके बहुमतकी अधिकृत प्रतिनिधि संस्था मानने के लिये तैयार है और प्रजातन्त्री सिद्धान्तोंके अनुसार उसको हिन्दुस्तानके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेका असंदिग्ध अधिकार है। बशर्ते कि इन्हीं कारणोंसे लीग कांग्रेसको गैर मुस्लिमों की और उन मुसलमानोंकी जो कांग्रेसके साथ है, प्रतिनिधि संस्था मान ले। कांग्रेस अपने प्रतिनिधियोंको कांग्रेस में से

चुननेके सम्बन्धमें कोई मर्यादा या सीमा माननेके लिये तैयार नहीं है। इसीलिये हमारा सुझाव है कि कोई फार्मूला आवश्यक नहीं हैं और प्रत्येक संस्था अपनी योग्यता पर स्थिर हो सकती है।

मुद्दा संख्या २ के बारेमें यह है कि लीगके उत्तरदायी होनेका प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि इस बारेमें वर्तमान विधान पर आपत्ति नहीं है।

मुद्दा संख्या ३ के सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि यदि ऐसा कोई स्थान रिक्त हो तो पूरा मन्त्रिमण्डल विचार करेगा कि उसकी पूर्तिके लिये क्या किया जाय और उसके मुताबिक वाय-सरायको सलाह देगा।

मुद्दा संख्या ४ के सम्बन्धमें आपका संघका सुझाव ठीक नहीं है। मन्त्रिमण्डलके सामने आनेवाले प्रश्नोंका निवारण अदालत का विषय नहीं बनाया जा सकता। हमें ऐसे प्रश्न आपसमें तय करने चाहिये, और मन्त्रिमण्डलके सामने सर्वसम्मत हल आना चाहिये। इस रूपमें पञ्च फैसलेके लिये नहीं जाना होगा।

मुद्दा संख्या ५—वायसरायकी कार्य-कारिणीके उपाध्यक्षको बारी-बारीसे बनानेका प्रश्न नहीं उठता। हमें अतिरिक्त उपा-ध्यक्ष रखनेमें कोई आपत्ति नहीं है। वह मन्त्रिमण्डलकी एक सूत्रीकरण समितिका उपाध्यक्ष रह सकता है और कमेटीकी ऐसी बैठकोंकी अध्यक्षता कर सकता है।

मुझे आशा है कि यदि आपकी समिति अन्ततः यह तय करती है कि लीग मन्त्रिमण्डलमें शामिल हो जाय, तो वह विधान परिषद्में भी शामिल होनेका निर्णय करेगी।

श्री जिन्नाका नेहरूजीको पत्र

तारीख ७ अक्टूबर

"मुझे आपका ६ अक्टूबरका पत्र मिला जिसके लिये धन्यवाद। आपने अपने पत्रके पहले पैरेमें जो भावोद्गार व्यक्त किये हैं उनकी मैं सराहना करता हूँ और वैसे ही भाव अपनी ओरसे भी प्रकट करता हूं।

आपके पत्रके दूसरे पैरेके सम्बन्धमें मेरा पहला सवाल फार्मूला के सम्बन्धमें है। उक्त फार्मूलेको गांधीजीने और मैंने स्वीकार कर लिया था और हम दोनोंकी भेंट इसी आधारपर हुई थी। यह भेंट इस उद्देश्यसे हुई थी कि अन्तःकालीन सरकारके पुनर्निर्माणके सम्बन्धमें बाकी सवालोंपर समझौता हो जाय। वह फार्मूला इस प्रकार है :—

कांग्रेस इस बातको चुनौती नहीं देती है और यह बात स्वीकार करती है कि अब मुस्लिम लीग ही भारतके अधिकांश मुसलमानोंकी एक मात्र संस्था है। इसलिये और प्रजातंत्रीय सिद्धान्तोंके अनुसार लीगको भारतीय मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेका निर्विवाद अधिकार है। परन्तु कांग्रेस इसके लिये तैयार नहीं हो सकती कि उसे अपने इच्छानुसार अपने सदस्यों

में से प्रतिनिधि चुननेके मामलेमें किसी प्रकारके प्रतिबन्धका सामना करना पड़े।

और अब अपने पत्रमें आपने इस फार्मूलेमें रद्दोबदल ही नहीं किया है बल्कि आप फार्मूलेको आवश्यक हो नहीं समझते हैं। मुझे खेद है कि मैं इसमें भाषा सम्बन्धी या किसी भी तरहकी रद्दोबदल को स्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि उसी आधारपर हम दोनों अन्य सवालोंपर विचार विनिमय करनेको तैयार हुए थे। न मैं यही माननेको तैयार हूं कि फार्मूला अनावश्यक है। उसपर गांधी जीने हस्ताक्षर किये हैं और मैंने स्वीकार किया था।

चूंकि अन्य सारे मामलोंपर बातचीतका आधार यही फार्मूला था जिसे गांधीजीने मान लिया था, इसलिये यदि आप इसे उन सवालोंका आधार स्वरूप, जिनपर मेरी आपकी बातचीत हो चुकी है, न मानेंगे तो मामला आगे न बढ़ पायेगा। मैं इस पत्रके साथ उन सारे मुद्दोंको लिखकर भेज रहा हूँ जिन्हें मैं आपके सामने रख चुका हूँ। यदि आपने फार्मूला मंजूर कर लिया तो मैं बातचीत जारी रखनेको तैयार हूँ जिससे उनके अनुरूप समझौता हो सके जिन्हें आपने अपने पत्रके पहले पैरेमें व्यक्त किया है। मैं तो यही चाहता हूँ कि हममें आपसमें ही अविलम्ब समझौता हो जाय।

मेरी रायमें निम्न ६ बातोंको कांग्रेस द्वारा मान लेने पर समझौता हो सकता है :—

१— एक्जीक्यूटिव कौंसिलके सदस्य कुल १४ होंगे।

२—कांग्रेस ६ सदस्योंको नामजद करेगी जिनमें एक सदस्य दलित जातिका होगा। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि मुस्लिम लीग दलित जातिके प्रतिनिधिके चुनावसे सहमत है। इस मामलेमें अन्तिम जिम्मेदारी गवर्नर जनरल और वायसराय की है।

३—बाकी ५ सदस्योंमें कांग्रेसको अपनी पसन्दके मुसलमान को शामिल नहीं करना चाहिये।

४—संरक्षण: यह परिपाटी स्थापित हो जानी चाहिए कि जिस साम्प्रदायिक मामलेका अधिकांश हिन्दू या मुसलमान सदस्य विरोध करें उस पर किसी प्रकारका निश्चय न किया जाय।

५—जिस प्रकार संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनमें किया गया है कौंसिलके उप सभापतिके पदोंपर बारी-बारीसे दोनों प्रधान जातियोंके लोग नियुक्त किये जांय।

६—अल्प संख्यक जातियोंके तीन प्रतिनिधियों सिख, भारतीय ईसाई और पारसीके चुनावके मामलेमें मुस्लिम लीगसे सलाह नहीं ली गयी थी और यह न समझना चाहिये कि जो चुनाव किया गया है लीग उसे पसन्द करती है। पर भविष्यमें पद त्याग या मृत्यु आदिके कारण यदि कोई स्थान रिक्त हो, इन अल्पसंख्यक जातियोंके प्रतिनिधियोंको देशके दोनों प्रमुख दल—लीग और कांग्रेस आपसमें चर्चा करके चुने।

७—पोर्ट फोलियोंके सबसे अधिक महत्वपूर्ण विभाग दोनों प्रमुख दलों, मुस्लिम लीग और कांग्रेसको मिलने चाहिये।

८—जब तक उक्त दोनों प्रधानदल कांग्रेस और मुस्लिम लीग सहमत न हों इस व्यवस्थामें किसी प्रकारका हेर-फेर न किया जाय।

९—दीर्घ कालीन योजनापर विचार उस समय तकके लिये स्थगित कर दिया जाय जब तक अधिक अच्छा वातावरण स्थापित न हो जाय और उपरोक्त मुद्दों पर समझौता होकर अन्तःकालीन सरकारकी स्थापना न हो जाय।

श्री जिन्नाको नेहरूजीका पत्र

ता० ८ अक्टूबर

"मुझे आपका ७ अक्टूबरका पत्र तब मिला जब कि मैं कल शाम आपसे मिलनेके लिये बड़ौदा भवन जा रहा था। मैंने शीघ्रतासे इसे पढ़ा; मुझे दुःख हुआ कि यह पत्र हमारी पहिली मुलाकातकी बातचीतके विपरीत था। अतः हमने मुद्दोंपर बात-चीत की, परन्तु दुर्भाग्यसे हम एक दूसरेको सन्तुष्ट न कर सके। वापिस आनेके पश्चात मैंने आपके पत्रको फिर ध्यानसे पढ़ा तथा अपने कुछ साथियोंसे विचार विमर्श किया। उन्हें भी केवल आपके पत्र पर ही नहीं, बल्कि पत्रसे सम्बद्ध मुद्दोंकी सूचीपर आश्चर्य हुआ। यह सूची न तो पहिले देखी ही गयी थी, और न उसपर विचार किया गया था। बातचीतके पश्चात इसका भेजा जाना असंगत प्रतीत होता है।

जैसा मैंने आपको बताया, मैं तथा मेरे साथी उस फार्मूला से सहमत नहीं हैं जिसे आपने तथा गांधीजीने स्वीकार कर लिया है। मेरे और आपके बीच जो मुलाकात आयोजित की गई वह मेरे विचारसे उसी फार्मूलेके आधारपर की गई मालूम नहीं होती है। जैसा मैंने अपने ६ अक्टूबरके पत्रमें लिखा था, हम उस फार्मूलाके सारसे सहमत होनेके लिये तैयार थे। उस फार्मूलेका एक पैरा था जिसका आपने अपने पत्रमें उल्लेख नहीं किया। यह पैरा इस प्रकार है—"यह समझा जाता है कि अन्तःकालीन सरकारके सभी मन्त्रिगण समस्त भारतके हितके लिये संगठित होकर कार्य करेंगे तथा वे किसी भी मामलेमें गवर्नर-जनरलका हस्तक्षेप नहीं होने देंगे।"

हमारा अब भी यह विचार है कि यह फार्मूला ठीक रूपमें व्यक्त नहीं किया गया है, परन्तु फिर भी समझौतेके, जिसके लिये हम इतने उत्सुक हैं, हम उक्त फार्मूले को उसके पूर्ण रूपमें, जिसमें वह पैरा भी सम्मिलित है जिसका आपने अपने पत्रमें उल्लेख नहीं किया, स्वीकार करनेको तैयार हैं।

मुझे आशा है कि आप इस स्थितिको पूर्णतः स्पष्ट करनेके लिये सहमत होंगे। यह बात साफ तौरसे कही जा चुकी है कि कांग्रेसको अपने कोटेमें एक मुस्लिमको रखनेका हक है। मैंने अपने पहिले पत्रमें राष्ट्रवादी मुसलमानों तथा अल्प-संख्यकोंके सम्बन्धमें कांग्रेसकी स्थिति स्पष्टकर दी थी जिसे अब आप चुनौती नहीं दे सकेंगे।

मैंने अपने ६ अक्टूबरके पत्रके दूसरे, तीसरे और चौथे मुद्दोंके सम्बन्धमें अपनी स्थितिको स्पष्ट कर दिया है, इसके लिये और अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं। हम आपको संतुष्ट करनेके लिये जितना आगे बढ़ सके बढ़े, हम इससे और आगे बढ़नेमें असमर्थ हैं। मुझे विश्वास है आप हमारी स्थितिको समझेंगे।

पांचवें मुद्देके सम्बन्धमें (उपाध्यक्षका प्रश्न) आपने कल एक सुझाव रखा था कि उपाध्यक्ष तथा केन्द्रीय असेम्बलीका नेता एक ही व्यक्ति नहीं होना चाहिये। इन परिस्थितियोंमें इसके यह अर्थ हुए कि असेम्बलीका नेता मन्त्रिमण्डलका एक लीगी सदस्य होना चाहिये। हम इससे सहमत होंगे।

मैंने सभी मुद्दोंपर ध्यानपूर्वक विचार करके, तथा अपने साथियोंसे विचार करनेके पश्चात ही आपको यह पत्र लिखा है। मैंने आपको यह विवादके रूपमें नहीं लिखा है, बल्कि इस पत्रके द्वारा हमने उस समझौतेकी सदिच्छा प्रकट की है जिसके लिये हम उत्सुक हैं। हमने इन मामलों पर काफी विचार किया है और अब समय आ गया है कि इसके सम्बन्धमें अन्तिम रूपसे निर्णय किया जाय।

श्रीजिन्नाका नेहरूजीको पत्र

ता० १२ अक्टूबर

"मुझे आपका ८ अक्तूबरका पत्र, जो आपने मेरे ७ ता० के पत्रके उत्तरमें लिखा है, आज मिला। मैं इस बातपर खेद प्रकट

करता हूँ कि आप व आपके सहयोगी गांधीजी तथा मेरे बीच हुए फार्मूलेको स्वीकार नहीं करते। गांधीजी व मैं इस बातपर सहमत हो गये थे कि उक्त आधार पर आप व मैं अन्तःकालीन सरकारके पुनर्निर्माणके बारेमें शेष मुद्दोंपर समझौतेकी बातचीत कर सकते हैं। इसी कारणसे ५ अक्टूबरको मेरी व आपकी मुलाकातकी व्यवस्था की गई थी। मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जहां तक आपको मालूम है मेरी व आपकी मुलाकात उक्त फार्मूलेके आधार पर नहीं की गई थी। ५ अक्तूबरको हमने सब मुद्दोंपर विचार किया और आपने मुझसे यह कहा था कि आप मुझे अगले दिन अपनी मुलाकातका समय बादमें बतला देंगे। किन्तु अगले दिन आप मुझसे नहीं मिले, बल्कि आपका एक पत्र मुझे मिला। उसमें आपने लिखा था कि उक्त फार्मूलाके शब्द ठीक नहीं हैं और साथ ही सुझाव रखा था कि फार्मूलामें ये शब्द होने चाहिये। लीग कांग्रेसको समस्त गैर मुस्लिमों व उन मुस्लिमोंका, जिन्होंने अपना भाग्य उसके हाथमें सौंप दिया है, प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था मानती है। साथ ही आपने यह लिखा था कि यदि फार्मूलेके इन शब्दोंसे लीग सहमत न हो, तो किसी फार्मूलेकी आवश्यकता नहीं है। आपने अपने ६ ता० के पत्रमें प्रथम पैरेमें समझौतेकी जो भावना प्रकट की थी, वह प्रस्तुत पत्रसे जाहिर नहीं होती। मेरी समझमें यह भी नहीं आता कि आप व आपके सहयोगी मेरे ७ ता० के पत्रसे घबरा क्यों गये, जिसमें मैंने अपनी कुछ बातें पेश की थीं। मेरी मांगोंको उक्त

सूचीमें कोई नयी बात नहीं थी, जिस पर हमने पहले दिन बहस न की हो, मैंने अपनी बातोंकी उक्त सूची केवल सहूलियतके लिये भेजी थी।

"प्रस्तुत पत्रमें आपने कहा है कि विभिन्न मामलोंके बारेमें कुछ हेर-फेरके सिवा आपकी वही राय है जो ता० ७ के पत्रमें अङ्कित है। आपके द्वारा किये गये हेर-फेर और उनपर मेरी प्रतिक्रिया इस प्रकार है :—

आप फारमूलेको स्वीकार कर लेंगे, बशर्ते कि पैरा नम्बर २ उसमें शामिल कर लिया जाय।

इसके अर्थ यह है कि आप उस फार्मूलेसे जिसके आधार पर मैं बातचीत करनेके लिये राजी हुआ था, पीछे हट रहे हैं। मैं इस परिवर्तनको स्वीकार नहीं कर सकता।

अछूत जातियोंके सम्बन्धमें भी मैं आपके विचार स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं हूं।

चूंकि आपने अपनी स्थितिको बहुत सोच-विचारके बाद बतलाया है, अतः मैं ख्याल करता हूं कि आपका यह अन्तिम उत्तर है। मुझे दुख है कि हम दोनों एक समझौता करनेमें असफल रहे हैं।"

नेहरूजीका श्री जिन्नाको पत्र

ता० १२ अक्तूबर

"१२ ता० के पत्रके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूं। इस पत्रमें बहुत-सी बातें गलत कही गई हैं। जो कुछ आपने कहा

है, उसका मेरी यादमें हमारी बातचीतसे कोई मेल नहीं बैठता। लेकिन अब मुझे इस मामलेमें आगे जानेकी जरूरत नहीं है। क्योंकि वाइसरायसे मुझे खबर मिली है कि मुस्लिम लीगने अन्त:कालीन सरकारमें ५ स्थान लेने स्वीकार कर लिये हैं।"

समाजवादका सूर्योदय

आजादीकी पुकार, भारतमें नयी नहीं है। जिस दिन हमारा देश विदेशी शासनके नीचे आया, उसी दिनसे भारतमें ऐसे लोग होते आये हैं जिन्होंने स्वाधीनता संग्रामकी कल्पना की, उसके लिये कोशिश की और अपना सब कुछ आजादीके लिये निछावर कर दिया। सन् सतावनका युद्ध, स्वाधीनताका संग्राम था जिसमें बहुतसे बहादुरीके काम हुए और चिरस्मरणीय बलिदान हुए। हमारे ही कुकृत्योंसे हमें उसमें सफलताकी जगह असफलता मिली। यहाँ झांसी शहरमें मन उसी रानी झांसीकी तरफ चला जाता है, जो डरका नाम नहीं जानती थी, जो बड़ी बहादुरीसे लड़ी और प्रबल शत्रुओंका मुकाबिला करती हुई, भारत और भारतकी महिलाओंके गौरवके लिये मर कर अमर हो गयी।

एक पीढ़ीके बाद दूसरी पीढ़ी आती गयी, कभी किसी पीढ़ीमें, ऐसे स्त्री-पुरुषोंका अभाव नहीं था, जिन्होंने विदेशी शासकके,

सामने सिर झुकाने और घुटने टेकनेसे इन्कार न किया हो। इस अवज्ञाके लिये उन्हें बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी, लेकिन देश-भक्तिकी धारा बहती और बढ़ती ही गयी। हमारी याददास्त कम-जोर है और हम पिछले बहादुराना कामोंको भूल जाते हैं। लेकिन जिस पीढ़ीमें हम हैं उसमें भी बहुतसे स्वर्णिम देशभक्ति पूर्ण कार्य हुए हैं कोई भी जीवित देश, विदेशी शासनके नीचे, अपने विजेता के साथ शान्तिपूर्वक नहीं रह सकता, क्योंकि शान्ति, माने दासता है और दासताका अर्थ एक जीवित राष्ट्रके लिये जो कुछ महत्वपूर्ण है उसका सर्वनाश है। भारतके पुत्र और पुत्रियोंने देशको विदेशी शासनसे स्वतन्त्र करनेके लिये जो अशेष बलिदान किये हैं, उनके द्वारा भारतने अपने जीवित रहनेका प्रमाण दिया है। जबतक भारत स्वतन्त्रता न प्राप्त कर लेगा, इङ्गलैंडके साथ कभी शान्तिसे न रहेगा। इसीलिये, हम स्वतन्त्रता चाहते हैं और उसके लिये प्रयत्न करते हैं। यह स्वतन्त्रता, साझीदार बननेसे — अगर वह सम्भव भी हो तो नहीं मिल सकती, साम्राज्यवादी प्रति-ष्ठान जिसे ब्रिटिश साम्राज्य कहा जाता है, उसकी साझीदारीसे स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती क्योंकि हमने अनुभव किया है कि साम्राज्यवाद और स्वाधीनता बिलकुल भिन्न है। जिस दिन ब्रिटेन साम्राज्यवाद छोड़ देगा, हम खुशीसे उसके साथ सहयोग करेंगे। लेकिन क्या इसका कोई लक्षण दिखलाई पड़ता है? या आप इतने सीधे हैं कि सोचते हैं कि उसके साम्राज्य या कामनवेल्थमें शामिल होकर, उसे सुधार लेंगे। इङ्गलैंड आज

साम्राज्यवादका महान् पुरोहित है और लेबर पार्टी वाले भी स्वाधीनता और स्वभाग्य निर्णयकी लम्बी चौड़ी बातें करते हैं और साम्राज्यवादी नीति बरतते हैं।

इङ्गलैंड हमारा दुश्मन नहीं है, हमारा असली दुश्मन साम्राज्यवाद है, और जहां साम्राज्यावाद है, वहां हम इच्छापूर्वक नहीं रह सकते। लेकिन आपको आजादीके लिये दलीलोंकी जरूरत नहीं है। आप इसके नेता हैं, कांग्रेसने आपका अनुसरण किया है।

हमने अभी तक राजनैतिक स्वाधीनता पर जोर दिया है। अब फिर मौका आ गया है कि आप नेतृत्व करें और बतलावें कि स्वाधीनतासे आपका तात्पर्य क्या है? कुछ लोगोंने कहा है, कांग्रेसको राजनीतिके सिवा अन्य मामलोंमें हाथ नहीं देना चाहिये। लेकिन जीवनके हिस्से नहीं किये जा सकते। और न राजनीति ही, समाजके अन्य विषयोंकी उपेक्षा कर सकती है। हमारे सामने स्वाधीन समाज निर्माणकी समस्या है, यह समस्या हल करनेके लिये आपको सामाजिक और आर्थिक स्थिति बदलने पर विचार तथा तदनुसार कार्य करना होगा। वह स्वाधीनता ही क्या है जिसका परिणाम बहुतोंके लिये भूखों मरना और लाखोंके लिये शोषण हो। स्वाधीनताका अर्थ, हर तरहके शोषणसे मुक्ति होना चाहिये, इसके लिये आपको समाजमें जो कुछ शोषणको मदद पहुंचाता है, उसपर आक्रमण करना होगा। यह भी एक शक्तिशाली कारण है कि हम क्यों औपनिवेशिक स्वराज्य नहीं चाहते,

क्योंकि उस अवस्थामें विदेशी पूंजीका प्राधान्य होगा और विदेशी पूंजीका मतलब है विदेशी शोषण।

हमारे सामने दुमुही समस्या है, पहले ऐसा सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम बनाना है जो जनताको स्वाधीनता दे और फिर शक्ति पानेका तरीका बतलाया जाय जिससे हम अपना कार्यक्रम पूरा कर सकें।

लेकिन कार्यक्रम पर विचार करनेके पहले हमें अपने मुख्य उद्देश्यों और साधारण दृष्टिकोणको स्पष्ट करना चाहिये। हममेंसे बहुतसे जनताकी सेवा करने और उनकी गरीबी भगानेकी बात करते हैं, लेकिन शायद ही हमारी धारणा हो कि यह सब कैसे करेंगे? हम कल्पना करते हैं कि स्वराज्य होनेके साथ ही जनताका लाभ होगा। यह आंशिक सत्य है, लेकिन यह निश्चित नहीं है। हम अपनेको जनतासे बहुत कुछ भिन्न समझते हैं। हम अपनी बौद्धिक या आर्थिक समृद्धिके कारण अपने आपको जनताका स्वाभाविक नेता मानते हैं। हम हैं और जनता है। अब अगर दोनोंके स्वार्थोंमें कोई संघर्ष हुआ तो स्वभावतः हम अपनेको विशेष महत्व देंगे। हमें विश्वास है कि हम देशके चुने हुए नेता हैं और हमारे कन्धोंपर जनताको मुक्त करनेका भार है और साथ ही अपनी स्थिति सुधारनेका सुअवसर मिला है।

जाने और अनजाने हम इसी प्रकार सोचते हैं। यह ढोंग है। हमें जनताकी सेवा करनेकी बात न कहनी चाहिये, जब के हमारा प्रधान उद्देश्य अपनी श्रेणीकी सेवा करना है। इसलिये

कार्यक्रम बनाते समय हमें जनताके स्वार्थोंको सर्वोपरि रखना चाहिये और उनके लिये बाकी सबका बलिदान करना चाहिये। क्योंकि दरअस्ल जनता ही राष्ट्र है। उनकी समृद्धिपर ही देशकी समृद्धि निर्भर करती है। अपने कार्यक्रमको कार्यकारी बनानेके लिये हमें अपने आपको अनुगत रख अपने आन्दोलनमें जनता के प्रतिनिधियोंको प्रमुख स्थान देना चाहिये। तभी हम आन्दोलनको वास्तविक जन आन्दोलन बना सकते हैं। जो दर अस्ल आर्थिक परिवर्तनसे सम्बन्धित हैं, वे ही आर्थिक परिवर्तन लाते हैं, जन आन्दोलनका नेतृत्व और नियंत्रण उन्हींके हाथमें जाना चाहिये जो आज सर्वाधिक शोषित हैं। वे लड़खड़ायेंगे और गिरेंगे और बहुत सी भूलें करेंगे लेकिन उनके पीछे आर्थिक परिवर्तनके लिये आवश्यक शक्ति होगी और वही शक्ति उन्हें विजय तक ले जायगी। बिना इस शक्तिके हमारी राजनीति प्रस्तावों, जुलूसों और नारोंका समुच्चय होगी, जिसके पीछे कोई कार्यकरी शक्ति नहीं। बहस मुबाहिसेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा।

मैंने बार बार कहा है, मेरे विचारसे हमारी बहुत सी सामाजिक बुराइयोंका समाधान एकमात्र समाजवाद है। इसलिये समाजवाद हमारा उद्देश्य होना चाहिये। आपमें से बहुतसे सकारण सोचते होंगे कि एक बारमें ही हम वहां तक नहीं पहुंच सकते, इसलिये उससे कुछ उतरता हुआ फौरन काममें लाया जा सके ऐसा कार्यक्रम होना चाहिये। इस कांग्रेसमें ऐसा कार्य

क्रम बनाना आसान नहीं है, इसलिये कान्फ्रेंसको इस कार्यके लिये एक कमेटी बनाना चाहिए। मैं कुछ महत्वपूर्ण विषयोंपर प्रकाश डालता हूँ।

हमारे कार्यक्रममें यह साफ होना चाहिये कि हम उन अयोग्यताओंको बर्दाश्त नहीं कर सकते जिनसे दलित जातिवाले कष्ट भोग रहे हैं। हमें इनको मिटा देना चाहिये और हर एकको आत्म-विकासकी पूरी सुविधाएं देनी चाहिये। महिलाओं परसे बहुतसे बोझ उठानेके लिये खास प्रयत्न होना चाहिये। ताकि उनकी कानूनी और अन्य तरहकी अयोग्यताएं नष्ट हो जांय, उनको पुरुषों के समान स्थिति मिलनी चाहिये, पर्दा जैसी बर्बर प्रथा हमेशा के लिये मिट जानी चाहिये।

हमारा आर्थिक कार्यक्रमका उद्देश्य सब तरहकी आर्थिक असमानताओंका नाश और सम्पत्तिका समान बटवारा होना चाहिये। गरीब और दलितको देनेके लिये आपको धनी और जिसके पास है, उससे लेना होगा। इसलिये हमें जहां तक सम्भव हो, सम्पत्तिका वर्तमान भेद समान करना है, अमीरों पर टैक्स बढ़ना चाहिये और गरीबोंपरसे बिलकुल हटा लेना चाहिये।

इस प्रांतमें हमारे सामने जमीन्दारों और किसानोंकी समस्या है। दुर्भाग्यवश सब जगह जमीन्दार हैं और उन्होंने विकासकी राहमें रोड़े अटकाये हैं। अपने प्रांतकी पंजाब और गुजरातसे तुलना कीजिये जहां किसान जमीनका मालिक है। हमारे

प्रान्तमें देशका गौरव बढ़ानेवाले पुरुष हुए हैं और हैं, लेकिन हमारे अन्दर मध्यम श्रेणी नहीं है हम अति समृद्धि और अति-गरीबीमें विशेष दक्ष हैं। इसलिये हमें जमीन्दारी प्रथाका सामना करना होगा, सिवा इसे नष्ट करनेके और हम क्या करेंगे। यह आजकलकी स्थितिके सर्वथा विरुद्ध पुराने जमानेका चिह्न है। इसलिये जमीन्दारी प्रथाको हमारे कार्यक्रममें प्रमुख स्थान मिलना चाहिये। जमीन्दारी प्रथाकी जगह ऐसी प्रथा होनी चाहिये कि परिवारके भरण-पोषण लायक जमीन हर किसानके पास हो।

हम बड़ी जमीन्दारियोंको कैसे मिटावेंगे ? कुछ जब्तीके पक्षमें हैं, कुछ हर्जाना देनेके पक्षमें। हर्जाना देनेके लिये इतना धन पाना असंभव है। धन मिल गया तो इससे जमीन्दारको लाभ होगा, क्योंकि उसे नगद रुपया मिल जायगा! हर्जाना दिया गया तो समृद्धिकी समानता नहीं होगी। दूसरे देशों के उदाहरण बतलाते हैं कि जमीनके बदले पूरा हर्जाना देनेसे किसानको लाभ नहीं हुआ न समस्या सुलझी। इसलिए किसी भी हालतमें हम पूरा हर्जाना नहीं दे सकते।

जब्ती बिलकुल ठीक होनेपर भी बहुतोंके लिये बुरे दिन ला सकती है। कुछ मामलोंमें हर्जाना दिया जा सकता है पर इतना नहीं कि पानेवालेको फिर धनी बना दे।

जो जमीनसे अपना गुजर भर चलाता हो उसे टैक्ससे बरी कर देना चाहिये। किसानोंके कर्जकी समस्या भी हमारे सामने

है, कठिन दिनोंमें इन कर्जोंमें छूट होनी चाहिये। कर जहां तक संभव हो सीधा होना चाहिये। सरकार और जनताके बीच में कर उगाहनेवाला तीसरा न होना चाहिये। भारतमें तो नहीं मगर इङ्गलैण्ड आदिमें उत्तराधिकार और मृत्युकर हैं। इनका प्रचार होना चाहिये।

भारतके उद्योग-धन्धोंका इतना विस्तार हो गया है कि उद्योग-धन्धोंके कार्य-कर्त्ताओंके प्रति हमें विशेष ध्यान देना चाहिये। पिछले कुछ महीनोंकी हड़ताल, मिल बन्दी और गोलीकाण्डकी घटनाओंकी कोई उपेक्षा नहीं कर सकता। सरकार उनकी उपेक्षा नहीं करती। हमारे अधिकांश नेताओंसे अधिक सरकार ने श्रमिकोंकी महान् शक्तिको समझा है और वह इसी लिये ट्रेड यूनियनोंको बांध रही है। वे हमारी कांफ्रेसके साथ वैसी सख्तीसे पेश नहीं आते क्योंकि सरकार जानती है कि वकील, बैरिस्टर कुछ नुकसान नहीं पहुंचा सकते और हमारा काम बकना है। सरकारको असली खतरा किसानों और मजदूरोंसे है, और औद्योगिक क्षेत्रोंमें काम करनेवालोंमें अपना संगठन करनेकी विशेष क्षमता है और वे ही जन आन्दोलनमें आगे आ सकते हैं। इसीलिये हम देखते हैं कि सरकार उनके गठनको छिन्न-भिन्न करना चाहती है और श्रमिकोंके संगठित कार्यको रोकना चाहती है। जहां कहीं भी औद्योगिक विवाद होगा, सरकारकी सारी ताकत मालिककी तरफ होगी। भूखों मारनेवाले मेहनताने और दयनीय रूपसे रहनेकी व्यवस्थाके साथ-साथ उन्हें सरकारी

गोलियोंका शिकार भी होना पड़ता है, लेकिन यह दमन भी पर्याप्त नहीं समझा गया और ट्रेड डिस्प्यूट बिल और पब्लिक सेफ्टी बिल सामने आया। ब्रिटिश सरकारने सब कुछ किया और भविष्यमें भी जो कुछ उसकी ताकतमें है करेगी ताकि श्रमिक संगठित न हो पावें। क्या आप इस मामलेमें निःपेक्ष भाव रखकर, श्रमिकोंको पिसने देना चाहते हैं ? कानपुर आदि जाकर देखिये कि मजदूर कितनी दर्दनाक परिस्थितिमें रहते हैं, बंगालमें जाकर जूट मिलोंकी भयानक अवस्थाके साथ जूट मिल मालिक अंगरेज पूंजी-पतियोंके नफेकी तुलना कीजिये।

साधारण मानव वृत्तिको आपको मजदूरका पक्ष लेनेकी तरफ प्रेरित करना चाहिये, राजनैतिक दृष्टिसे भी श्रमिक बड़ी ताकत हैं, अगर हम उनकी उपेक्षा करेंगे तो हम खुद अपनेको उपेक्षित पायेंगे।

इसलिये हमें इरादतन श्रमिकोंको संगठित होनेमें मदद देना चाहिये, श्रमिकोंसे मेरा मतलब सिर्फ शारीरिक मसक्कत वालोंसे नहीं है, बल्कि शरीर और दिमाग दोनोंसे काम करने वालोंसे है। सबसे पहले हमें सरकारी कार्य वाहियोंसे जूझना होगा जिनसे कि श्रमिकोंका विकास रुकता है। हमें ट्रेड यूनियनोंकी सहायता करना चाहिये और श्रमिकोंके हितोंकी रक्षाके लिये फैक्टरी कमेटियां बनानी चाहिये। महिलाओं और बच्चोंके लिये कामके घण्टे कम होने चाहिये। हर मालिक द्वारा श्रमिकके लिये अच्छे स्थानकी व्यवस्था होनी चाहिये और कमसे इतनी तनख्वाह

मिलनी चाहिये कि जीवन-निर्वाह हो सके। ये सुझाव क्रांतिकारी नहीं हैं। पूंजीवादी दृष्टि कोणसे भी श्रमिककी योग्यता और कुशलता बढ़ानेके लिये ये आवश्यक हैं।

मेरा मतलब यह विश्वास दिला देनेका है कि सिर्फ स्वराज्य स्वराज्य चिल्लानेसे हम कोई प्रगति नहीं कर सकते। हमें साफ कर देना चाहिये कि हम राजनैतिक स्वराज्यके साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक स्वराज्य चाहते हैं, इसके लिये हमें आर्थिक और सामाजिक कार्यक्रम बनाना चाहिये। इसी प्रकार आप अपने आन्दोलनको वास्तविक बना सकते हैं और इसे शक्तिशाली, अप्रतिरुद्धनीय आन्दोलनका रूप दे सकते हैं।

हमारे यहां कुछ ऐसे राजनैतिक नेता भी हैं जो आजादीकी लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं और साथ ही हर तरहके साम्प्रदायिक अधिकार और सुविधाएं चाहते हैं। हमसे कहा जाता है कि सम्प्रदायका दिल ठीक है, मुझे शक नहीं है कि हर सम्प्रदाय का दिल ठीक नहीं है, लेकिन सम्प्रदायवाद और स्वतंत्रताका यह अजीब मेल सन्देह पैदा करता है कि जो इन दोनोंको मिलाते हैं उनका सिर ठीक है क्या? क्योंकि इन दोनोंमें कोई सम्बन्ध नहीं है और आप स्वतन्त्र भारतकी इमारत सम्प्रदायवादकी बालूमय नींवपर खड़ी नहीं कर सकते।

अपने आदर्शोंका स्पष्टीकरण करनेके बाद अब सवाल यह है कि आप उसे कैसे प्राप्त करें? हर एक कहता है, हमारे पास कुछ शक्ति होनी चाहिये, लेकिन मैंने देखा है कि कुछ लोग

विश्वास करते हैं लोग एक साथ चिल्लांय और चिल्लाते ही रहें और कुछ भी न करें, तब भी उन्हें सफलता मिल जायगी। यह गलत है, राजनीतिका एक बच्चा भी जानता है कि जिस राज-नैतिक मांगके पीछे शक्ति नहीं है, वह निकम्मी है।

यह शक्ति, जनता और जन-आन्दोलनसे ही आ सकती है। भारत उतना कमजोर नहीं है, जितना बहुतसे कल्पना करते हैं। हमारी कमजोरी, कमजोर दिल, और खासकर जनतासे डरनेके कारण है। अगर हम एक बार जनतासे सम्पर्क कायम कर लें और जनतामें काम करें तो हमारी शक्ति बहुत बढ़ जायगी, तब दुनियाकी ताकतें भी हमारी मदद करेंगी।

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ?

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ? यह एक अजीब मगर महत्वपूर्ण शीर्षक है। क्योंकि यह कुछ शब्दोंमें ही बहुत कुछ कहता है। यह हमें उनकी विचार-धाराका परिचय देता है, जिन्होंने यह वाक्य बनाया है। यह बतलाता है कि वे भारतीय समस्याको किस आधारपर और किस तरह देखते हैं। यह बतलाता है कि हमारी विचार-धारापर पश्चिमकी छाप लग गयी है। यह श्वेत जातिका लादा हुआ बोझा-सा है।

इन सब कारणोंसे मैं इस विषयपर लिखनेको राजी नहीं हुआ था, क्योंकि जब हमारे आधार ही भिन्न हैं, तब बहस और तर्क बेकार है। जब हमारे दिमाग एक सीमित परिधिमें काम करते हैं और विश्वयुद्ध जनित क्रान्तिकारी परिवर्तन भी उस गहरी परिधिसे हमारे दिमागोंको बाहर नहीं निकाल सकते तो, तर्क द्वारा हम किस फलकी आशा कर सकते हैं ?

इस युद्धका सैनिक रूप महान है, सारी दुनियामें जल, थल और आकाश सेनाएं एक दूसरेसे संघर्ष कर रही हैं ताकि अपना आधिपत्य कायम कर सके। यह महान् संघर्ष दुनियाकी सूरत बदल चुका है, और फिर भी आनेवाली चीजोंका रूप निश्चित रूपसे बदलनेवाला है। दूसरी तरफ मानव जातिके मस्तिष्कमें महत्तर परिवर्तन हो रहे हैं, उनमें सबसे महान् परिवर्तन वह है जिसका प्रभाव एशियापर पड़ रहा है और जो परिवर्तन पिछले दो सौ वर्षोंके एशिया और युरोपके सम्बन्धको क्रमशः पर निश्चित रूपसे खत्म कर रहा है। युद्धका रूप आगे चलकर जैसा भी हो जाय, उसका अन्त जो भी हो, शान्ति जैसी भी हो, यह तय है कि अब पश्चिमी दुनिया एशियापर प्रभुत्व नहीं रख सकती। अगर यह तथ्य अभीसे अनुभव न कर लिया गया और पुराना सम्बन्ध किसी भी रूपमें जारी रखनेकी चेष्टा की गयी तो शांति का अस्तित्व नहीं रहेगा और विनाशकारी संघर्ष होगा।

जो पश्चिमी युरोपकी नीति स्थिर करते हैं, खास कर ब्रिटेन अभी इसको अनुभव नहीं कर रहा है। विशी फ्रांस, जो जर्मनी का तावेदार है, अभी तक फ्रेंच साम्राज्यकी बातें करता है। नीदरलैंड, जो अपने अधिकृत स्थानोंका अधिकांश खो चुका है, आज भी साम्राज्यकी आक्रमणात्मक भाषामें बोलता है और बचे खुचे भागके साथ चिपटा रहना चाहता है। उन्नीसवीं सदी बीत गयी और मर चुकी, लेकिन ब्रिटिश शासकोंका दिमाग अभी भी भूतभूत कालके वातावरणमें ही सोचता है। इस तरह दुनिया

के लिये कोई आशा नहीं है और न शान्तिके लिये किसी स्थायित्व की उम्मीद है, गोकि किसी न किसी समय शान्ति कायम होना ही है। जब तक लन्दन और वाशिंगटन, स्वतन्त्र और समान एशियाका रूप मन में रखकर नहीं सोचते विचारते तबतक जो समस्याएं उनके सामने हैं, उनका हल उन्हें नहीं मिल सकता।

समस्याओंका एक मात्र हल है कि एशियाके समस्त देशोंकी पूरी और समान स्वाधीनता स्वीकार कर ली जाय। और रंग वर्ण-गत उच्चताकी भावना, जिसपर सिर्फ नाजियोंका ही अधिकार नहीं है, जिससे अन्य पश्चिमी राष्ट्र भी ग्रसित हैं, उस भावनाको तिलाञ्जलि दे दी जाय। भारतकी स्वाधीनता स्वीकार करनेसे ही ही समझा जायगा कि इस भावनाको तिलाञ्जलि दी गयी है। भारतकी स्वाधीनतासे भारत राष्ट्रकी महान् शक्ति ही बन्धन मुक्त न होगी, बल्कि वह समस्त विश्वकी स्वतन्त्राका प्रतीक होगी, युरोपके देशोंने निरन्तर संघर्ष, आन्तरिक घृणा, हिंसाप्रेम और गलाघोट सुविधावादके कारण दुनियाकी बहुत बुरी अवस्थाकर डाली है, अपने अधीन भागोंमें इन्होंने दयनीय अवस्था फैला दी और एक ही पीढ़ीमें दो-दो विश्व युद्धोंकी सृष्टिकर डाली, अपने घरकी व्यवस्था न कर सकनेके कारण, वे दूसरपरों हावी होना चाहते हैं, और उनके मालिक बनना चाहते हैं। लेकिन विज्ञान, साहित्य और विज्ञानके प्रयोगमें उन्होंने जो सफलताएं प्राप्त की हैं, उनके लिये उनका कोई महत्व नहीं समझता। इन सबके

अलावा, दर असल उनके भीतर कुछ खामी है जो उनकी सफल-ताओंको व्यर्थ कर देती है। एशियाने इस अधरमें लटकती अवस्थाको अपनी प्रौढ़ताकी शक्तिसे काफी समय तक देखा, दो सौ वर्ष कष्ट और यातनामें बीत गये।

लेकिन अब वह काल समाप्त हो गया। अब एक नये अध्यायका श्री गणेश होना ही चाहिये। एशिया बड़ी तेजीसे विज्ञान और विज्ञानका प्रयोग सीख रहा है और उसे अपनी पुरानी मौलिकताके साथ मिला रहा है। एशियाको कम सीखना है और ज्यादा सिखाना है। उसे जीवनके दर्शन और जीवन यापनकी कलाके विषयमें बहुत कुछ सिखाना है।

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ? हाँ ! निश्चय ही एक हो सकते हैं, अगर विदेशी ताकतने उनके बीचमें जो व्यवधान खड़ा कर दिया है, उसे हटा लिया जाय, अगर बिना बाहरी दस्तन्दाजी के उन्हें अपनी समस्याओंका सामना करने दिया जाय। शान्ति पूर्ण तरीकोंसे या संघर्षसे हर समस्या सुलझा ली जायगी, चाहे वे नयी समस्याओंको जन्म दे दें। स्वतन्त्र भारत अपनी समस्याओंको या तो सुलझा लेगा या अपना अस्तित्व मिटा देगा। भारतका प्राचीन इतिहास बतलाता है कि उसने अपनी समस्याओंको सफलता पूर्वक सुलझाया है, और विरोधी शक्तियोंके संघर्षके परिणाम स्वरूप उसने एक नयी प्रणाली को जन्म दिया है। यह भारतीय इतिहास और सभ्यताका प्रधान लक्षण रहा है।

चीनके सिवा, संसारमें कोई ऐसा देश नहीं है जिसने सदियों ऐसी शक्तिशाली एकता दिखायी हो। इस एकताने यदा कदा ही राजनैतिक रूप लिया था, क्योंकि यातायात और तार टेली-फोन आदिके स्थान-सीमा-संकुचित करनेवाले साधन हालमें ही निकले हैं। अगर ये साधन आविष्कृत न होते तो संभव था कि अमेरिकाके युनाइटेड स्टेट्स भी एक राष्ट्र न हो पाते।

भारतमें ब्रिटेनके राजाने राजनैतिक एकताकी ओर भारतको बढ़ाया और भारतमें औद्योगिक क्रान्तिको जन्म दिया। लेकिन उसी क्रान्तिके विकाशमें ब्रिटेनने ही रुकावट डाली, उसने मध्यकालीन वृत्तियोंको उकसाया और औद्योगिक विकाशको रोका, भारतके इतिहासमें ऐसे विदेशी लोगोंका शासन प्रथम बार हुआ है, जिनकी सांस्कृतिक बुनियाद कहीं और है, जो अपने लाभके लिये देशका शोषण करते हुए विदेशीकी हैसियतसे ही भारतमें रहते हैं। उनके साथ सामञ्जस्य नहीं हो सकता और निरन्तर संघर्ष अनिवार्य है। इसी संघर्षसे शक्तिशाली अखिल भारतीय आन्दो-लन उठ खड़ा हुआ है जो उसकी राजनैतिक एकताका प्रतीक है।

स्वाधीनता, प्रजातंत्र, और एकता आन्दोलनके स्तम्भ थे। प्राचीन भारतीय परम्पराके अनुसार सहनशीलता, पूर्ण सुरक्षा, और स्वायत्तशासन, भारतके सब अल्प सम्प्रदायोंको देनेका वादा किया गया, शर्त सिर्फ यही कि देशकी एकता कायम रहे और इसके विधानका आधार प्रजातन्त्रीय हो। स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटिश साम्राज्यसे सम्बन्ध विच्छेद है, पर यह अनुभव कर

लिया गया है कि नयी दुनियामें किसी राष्ट्रके लिये एकाकी रहना न सम्भव है, न वांछनीय। इसलिए भारत किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय संघमें समानाधिकार पर शामिल होनेको राजी है लेकिन यह भारतकी स्वाधीनता मान लेनेपर भारतकी स्वतन्त्र इच्छासे ही हो सकता है। किसी भी तरहकी बाध्यता नहीं हो सकती। भारत खास तौरसे चीनसे अपना घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करना चाहता है।

मुस्लिम लीग जिन मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है, वे भारतके विभाजनकी मांग करते हैं, यह मांग नयी ही है, सिर्फ चार सालकी। यह भी ख्याल रखना चाहिये कि मुसलमानोंका बहुत बड़ा भाग इसका विरोध करता है। कुछ ही लोग इसे पसन्द करते हैं क्योंकि इसके पीछे आर्थिक या राजनैतिक आधार नहीं है। जिन अमेरिकनोंने अपनी युनियनकी एकता कायम रखनेके लिये सिविल वार लड़ा वे समझ सकते हैं कि क्यों अधिकांश भारतीय विभाजनको नापसन्द करते हैं।

तीस साल पहले ब्रिटिश सरकारने पृथक धार्मिक निर्वाचन प्रणालीका सिद्धान्त भारतमें चलाया, यह घातक कार्यवाही भारतकी राजनैतिक पार्टियोंके विकासमें बाधक हुई। अब इन्होंने ही भारतके विभाजनका विचार भारतमें फैलानेकी चेष्टा की है, वे दो नहीं कई टुकड़ोंमें भारतका विभाजन चाहते हैं। क्रिप्स प्रस्तावोंके विरोधके कारणोंमें से यह भी एक मुख्य कारण है। अखिल भारतीय कांग्रेस इसे नहीं मान सकी फिर भी उसने यहां

तक कह दिया कि अगर कोई भाग साफ-साफ तौरसे अलग रहने की घोषणा करे तो कांग्रेस उसे मजबूर करनेकी बात नहीं सोच सकती।

जहांतक अल्प संख्यक समुदायोंका प्रश्न है, उन्हें हर तरहके वैधानिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, भाषा सम्बन्धी संरक्षण दिये जायंगे। पिछड़े हुए अल्प संख्यकों तथा श्रेणियोंको विशेष शिक्षा सम्बन्धी तथा अन्यान्य सुविधाएं दी जायंगी ताकि वे शीघ्रतासे सबके समान हो जांय।

अक्सर कहा जाता है कि असली समस्या मुसलमानोंकी है, मगर उन्हें मुश्किलसे अल्प संख्यक कहा जा सकता है, क्योंकि उनकी संख्या लगभग ९ करोड़ है, यह समझना बहुत मुश्किल है कि बहुमत इन्हें कैसे दबा सकता है। वे लोग खास-खास प्रान्तोंमें आबाद हैं। हर एक प्रांतको पूर्ण प्रान्तीय शासनके अधिकार रहेंगे, केन्द्रीय सरकारके पास कुछ विशेष अखिल भारतीय विषय होंगे, इससे हर सांस्कृतिक क्षेत्रमें आत्म-विकाश की सबको सुविधा होगी। इसके साथ ही प्रान्तके अन्तर्गत भी छोटे सांस्कृतिक स्वायत्त क्षेत्र हो सकते हैं।

यह सम्भव है कि अल्पमतकी हर वाजिब मांगको सन्तुष्ट करनेके लिये बहुतसे तरीके मिल जायं। कांग्रेसने कहा, यह बहुमतके वोट द्वारा नहीं, बल्कि आपसके समझौते द्वारा होना चाहिये। अगर किसी नुक्तेपर समझौता न हो तो निष्पक्ष पञ्चायतको मान लेना चाहिये। आखिर अगर कोई प्रादेशिक

युनिट, युनियनमें मिलकर काम करनेके बाद अनुभव करे कि उसे युनियनसे बाहर ही रहना है तो उसे मजबूरन युनियनमें नहीं रखा जायगा, बशर्ते कि यह सम्बन्ध विच्छेद भौगोलिक दृष्टिसे सम्भव हो।

यह स्मरण रखना चाहिये कि भारतीय अल्प संख्यकोंकी समस्या भिन्न जाति की और भाषा तथा संस्कृति वाली जातियों से बिलकुल भिन्न है। भारतमें ऐसा नहीं है, जहां कुछ लोगोंके सिवा हिन्दू मुसलमानके रक्त, संस्कृति और भाषामें विभिन्नता नहीं है। मुसलमानोंकी काफी संख्या हिन्दुओं के वंशकी है, जिन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया है।

भारतीय अल्पमतों का समाधान वस्तुतः जितना सरल है है, दुनियाकी अन्य समस्याओं के समाधान शायद ही उतने सरल हों। विभिन्न कारणों से आज यह समस्या महत्वपूर्ण है और विकाशमें रुकावट डालती है, लेकिन दर असल यह बनावटी समस्या है, जिसकी जड़ गहरी नहीं है। भारतकी वास्तविक समस्याएं आर्थिक हैं, गरीबी और निम्न धरातल। जैसे ही तेजीसे इन समस्याओं का समाधान किया जा सकेगा और आधुनिक उद्योगों का विकाश होगा, जिसके फल स्वरूप रहन-सहन ऊंचा उठ जायगा, अल्प संख्यकों की समस्या मिट जायगी, इस समस्याका जन्म मध्यम श्रेणीकी बेकारीसे हुआ है, जिनके लिये कामके थोड़ेसे रास्ते ही खुले हुए हैं और जो राजकी तरफ

कामके लिये देखते हैं। चूंकि राजके काम सीमित हैं, इसलिये खास-खास सम्प्रदायों के लिये स्थान रिजर्व होनेकी मांग उठती है।

समस्याको सुलझानेका प्रयत्न अबतक बराबर असफल रहा है, क्योंकि हमेशा तीसरी पार्टी ब्रिटिश सरकार मौजूद है। अगर यह सरकार न रहे तो इस समस्याका रूप बदल जायगा, क्योंकि तब भारतीयोंको अपनी ओर ही देखना होगा। शक्तियोंकी बाध्यताके कारण उन्हें वास्तविकताका सामना करना होगा और उन्हें समझौता करना होगा। दूसरा रास्ता, संघर्षका है, जिससे हर एक बचना चाहता है, फिर भी अगर संघर्ष ही होता है तो वह वर्तमान गतिरोधसे अच्छा है क्योंकि इससे समस्याका हल निकल आयगा।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका यह सुझाव है कि यह और अन्य समस्याएं वयस्क मताधिकारसे निर्वाचित विधान परिषद द्वारा विवेचित और निर्णीत हों। निर्वाचनका आधार विस्तृत हो, ताकि इन समस्याओंका विवेचन और निर्णय उनके द्वारा जो सरकारी नौकरियोंकी अपेक्षा देशके आर्थिक मामलोंमें अधिक दिलचस्पी रखते हैं, हो।

ये आर्थिक प्रश्न धार्मिक सीमाओंसे परे हैं, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई बौद्धोंके लिये ये समान हैं। अगर यह विधान परिषद् किसी खास अल्पमत सम्बन्धी प्रश्नपर एकमत न हो सके तो,

यह इस प्रश्नको अन्तर्राष्ट्रीय पञ्चायतके सामने पेश कर सकती है। इन मामलोंमें अन्तर्राष्ट्रीय पंचायत जो भी फैसला करेगी, उसे माननेके लिये हम तैयार हैं, लेकिन स्वाधीनताके सम्बन्धमें पञ्चा-यत का सवाल नहीं उठता। स्वाधीनता और स्वभाग्य निर्णयका हक, इस तरहके मामलेके लिये पञ्चायतका सवाल उठनेके पहले ही स्वीकार किया जाना चाहिये।

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ? मुझे जरा भी शक नहीं कि वे एक हो सकते हैं और एक होंगे। आज भी उनके दृष्टिकोणमें आश्चर्यजनक एकता है, उनके आन्तरिक मतभेद जो भी हों, वे स्वाधीनता चाहते हैं। वास्तविक एकता और प्रगतिके पक्षमें वास्तविक रुकावट विदेशी शासन है। हर दृष्टिकोणसे यह अनिवार्य है कि भारतसे ब्रिटिश अपना अधिकार हटा ले और भारतकी स्वाधीनता स्वीकार कर ले। इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं है कि भारतको पूर्ण स्वाधीनता दी जाय।

युद्धने इस विषयको और भी महत्वपूर्ण बना दिया। स्वाधीन भारत, अमेरिका और ब्रिटेनको अपना मित्र समझेगा। लेकिन भारतीय अपने देशमें अब किसीके गुलाम नहीं रहना चाहते, उनकी दृष्टिमें इससे बढ़कर और कोई आध्यात्मिक पतन नहीं हो सकता।

पूर्व अब पराधीनता नहीं स्वीकार कर सकता। एशिया खुद अपने भाग्यका मालिक होगा, उसके भाग्यमें चाहे जो दुख-दर्द

यातना हो। चीनने अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिये अपने हृदयका खून बहा दिया। भारतको अपनी स्वाधीनताके लिये संग्राम करनेका अवसर मिला तो वह भी अपने हृदयका खून बहा देगा। वह किसी पर अधिकार नहीं करना चाहता और न वह किसीके अधिकारमें रहना चाहता है। सिर्फ स्वाधीनता, स्वाधीनता ही उसके बन्धन छिन्न-भिन्न कर सकती है और दुनियामें उसे अपने योग्य कार्य करने लायक बना सकती है।

युवकोंका साम्राज्य

बंगालके युवा स्त्री-पुरुषों !

बंगालके युवकोंके इस सम्मेलनका सभापतित्व करनेके लिये आमंत्रित कर आपने मेरा सम्मान किया, मैं इसके लिये कृतज्ञ हूं। लेकिन मैं सोच रहा हूं मुझसे आप क्या कहलाना या करवाना चाहते हैं, या किस तरहका सन्देश चाहते हैं। मेरे पास कोई खास सन्देश नहीं है और आप जानते हैं, मैं लच्छेदार भाषाका आदी नहीं हूं और न मुझे लम्बी-चौड़ी बातें बनाना आता है। बंगाल अपनेकला-सौन्दर्य-प्रेम तथा भावुकताके लिये प्रसिद्ध है, उसी बंगालने उत्तरके अपेक्षाकृत अधिक गर्म और अधिक ठंडे प्रदेशके अधिवासीको आमंत्रित किया है, जिसके पूर्व-पुरुष हिमाच्छित पहाड़ी प्रदेशसे आये थे। मुझे शंका है कि मेरे अन्दर पहाड़ी वातावरणकी ठण्डक और सख्ती है। बंगाल और भारतके एक बहुत बड़े नेताने जिनकी स्मृति आज भी बनी

हुई है, एक दफा मुझे "Cold-blooded" कहा था। मैं इस अभियोगको स्वीकार करता हूं और चूंकि आपने मुझे आमंत्रित करनेकी जोखिम उठायी इसलिये आपको मेरी यह वृत्ति सहनी होगी।

मैंने हिन्दूस्तान (जिसे युनाइटेड प्रोवीनसेंज कहा जाता है) में बसे हुए काश्मीरी और बंगालीके मामूली फर्ककी तरफ ध्यान खींचते हुए अपना कथन आरम्भ किया और आप जानते हैं कितने मामूली ये भेद हैं, और हमें आपसमें बांधनेवाले बंधन कितने मजबूत हैं। समान भूत, समान वर्त्तमान संकट-काल, समान अपना और आपका भविष्य गढ़नेकी इच्छा, कितनी दृढ़ है। आप एक देशसे दूसरे देशको अलग करनेवाली नकली सीमाओंका इन वास्तविकताओंसे तुलना कर सकते हैं। हमारे वर्ग और चरित्रकी विभिन्नताके सम्बन्धमें कहा गया है। बिला शक ये विभिन्नताएं हैं। किन्तु उनमेंसे कितनी ही आकस्मिक और जल वायु और शिक्षाके कारण है और किस तरह उन्हें आसानीसे बदला जा सकता है। आप देखेंगे कि समान बन्धन, भेदोंसे महान् और महत्वपूर्ण हैं, गोकि हममेंसे बहुतसे यह अनुभव नहीं करते।

मानवताका जो समान बन्धन है, उसीके अनुभवने युवा आन्दोलनको जन्म दिया है। पिछले महायुद्ध और उसके बाद युवा मस्तिष्कमें जो निराशा और विद्रोह जागा आपमेंसे बहुतों को उसका स्मरण न होगा, क्योंकि उस समय आपकी अवस्था

कम थी। पुराने लोग अपने घरों और बैंक हाउसोंमें आरामसे बैठे स्वतंत्रता और प्रजातन्त्रके लिये लच्छेदार बातों और अपीलों में अपना स्वार्थ, डाह और भूठ छिपाते रहे और लाखों जवान उनकी लच्छेदार बातोंका विश्वास कर मैदानमें निकल आये और मौतका सामना किया, उनमेंसे कुछ ही वापिस लौट सके। सात करोड़ युवक महायुद्धमें युद्धके लिये तैयार हुए और १॥ करोड़ने रण संग्राममें तोपोंका सामना किया, इनमें ८० लाख मर गये और ५५ लाख जीते हुए भी मुर्देसे बदतर हो गये। जरा इन दिल दहला देनेवाली संख्याओं पर गौर कीजिये और गौर कीजिये कि वे सब नव जवान थे, जिनके सामने जिन्दगीका प्याला लबालब था और जिनकी अनगनित आशाएं फली-फूली नहीं थीं। लेकिन इतने महान् आत्म-बलिदानके बदलेमें क्या मिला? युद्ध बन्द होनेके बाद भारतको अपने बलिदानके बदलेमें रौलट एक्ट और मार्शल ला मिला। आप जानते हैं, मित्र राष्ट्र स्वभाग्य निर्णयके जिस सिद्धान्तकी दुहाई दे रहे थे, भारत तथा अन्य देशोंके सम्बन्धमें उसका उपयोग कैसे किया गया? मैनडेट्सके रूपमें साम्राज्यवादकी वृद्धिके लिये नया क्षेत्र तैयार किया गया और इन मैनडेटोंकी असलियत छिपानेके लिये उन क्षेत्रोंके बाशिन्दोंके चुनावके अधिकारका पर्दा लगाया गया, किन्तु उन क्षेत्रोंके बाशिन्दे अपने मालिकोंका चुनाव कितना पसन्द करते हैं यह अङ्गरेजोंके खिलाफ मेसोपोटामिया और फ्रेंचोंके खिलाफ सीरियामें जो विद्रोह हुआ है, उसीसे सिद्ध होता है। ईराकमें

ब्रिटिश जहाजोंने बम बरसाये और फ्रेंचोंने दमिश्क जैसे पुराने सुन्दर शहरको बरबाद कर डाला। युरोपमें ही क्रान्तिने जितनी समस्याएं हल नहीं कीं उससे ज्यादा पैदा कर दी हैं।

क्या यह आश्चर्यकी बात है कि युवकोंने विद्रोह किया और उन पुराने नेताओंको पदच्युत कर दिया, जिन्होंने महायुद्धके भीषण सबककी भी उपेक्षा की और पुराने रास्ते पर चलते हुए नये युद्धकी भूमिका तैयार करनेमें ही लगे रहे। युवकोंने अपना संगठन किया और वे स्वयम् ऐसे समाजके निर्माणमें लग गये जहां वर्तमान संघर्ष और दयनीय स्थितिका नाम निशा - न रहे।

इसीलिये विश्वके युवक समाजने वर्तमान दयनीय अवस्था के कारणोंकी गहराई तक पहुंचनेका प्रयास किया, उन्होंने सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियोंका अध्ययन किया और उन्होंने देखा कि विज्ञान और विज्ञानकी वजहसे जो परिवर्तन हुए उन्होंने सदियां ले लीं फिर भी आदमीका दिमाग अभी भी भूतकाल में ही अटका हुआ है। विज्ञानने संसारको अन्तर राष्ट्रीय और एक दूसरेपर आश्रित बना दिया, लेकिन राष्ट्रोंकी प्रतिद्वन्दिता जारी रही, और जिसके परिणाम स्वरूप युद्ध भी जारी रहे। विज्ञानने संसारका उत्पादन बहुत बढ़ा दिया फिर भी गरीबी बनी रही और अमीरी और गरीबीका भेद बहुत बड़ा और प्रत्यक्ष हो गया। आदमी अज्ञान है और भूल करता है, लेकिन तथ्य इसकी पर्वा नहीं करते, हमारे काल्पनिक संसार और वास्तविक संसारमें

परस्पर विरोध है, ऐसी हालतमें दुनियामें अशान्ति और दुर-व्यवस्था रहे तो आश्चर्य क्या है ?

लेकिन इसके लिये हम वास्तविकताको दोष नहीं दे सकते। तथ्योंको गलत समझने और उनकी गलत व्याख्या करना ही हमारी मुसीबतों और कठिनाइयोंकी बुनियाद है। हमारे बड़े बूढ़े असफल हुए इसीलिये कि वे बंधी हुई धारणाको बदल नहीं सकते थे, वे बदलते हुए तथ्योंके साथ अपना दृष्टिकोण नहीं बदलते थे। लेकिन युवक लकीरके फकीर नहीं हैं। युवक विचार कर सकते हैं और विचारोंके परिणामसे नहीं डरते। यह न समझियेगा कि विचार मामूली चीज हैं या उसके परिणाम नगण्य हैं।

विचारोंको स्वर्गके सुख या नरकके दुखोंकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। पृथ्वी पर विचार बहुत क्रान्तिकारी चीज हैं। चूंकि युवक विचार कर सकते हैं और विचारके अनुसार कार्य कर सकते हैं इसीलिये वे देश और दुनियाको वर्तमान दयनीय परिस्थितिसे उबार सकते हैं।

बंगालके युवा स्त्री पुरुषों! क्या आपमें विचार करने और विचारोंके अनुसार कार्य करनेका साहस है? क्या आप संसारके युवकोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर खड़े हो सकते हैं? आपका काम सिर्फ देशको विदेशी शासनसे मुक्त करना ही नहीं है बल्कि इस दुःखी संसारमें सुखी समाजकी स्थापना करना है। यही समस्या आपके सामने है, और अगर आप इसका सचाई और

निर्भयतासे मुकाबिला करना चाहते हैं तो आपको निश्चय करना होगा कि विदेशी शासन तथा देशी रूढ़ियों द्वारा आपके रास्तेमें जो रुकावटें आयंगी आप उनका सामना करेंगे और उन्हें दूर कर देंगे।

आपके सामने आपका आदर्श साफ होना चाहिये। ऐसा न होने पर आप अपनी कल्पनाका भवन कैसे बना सकेंगे? क्या आप खोखली नींवपर विशाल भवन बना सकते हैं या तिनकोंसे मजबूत पुल बना सकते हैं? जब आपको अपने पक्षका साफ-साफ ज्ञान हो जायगा तब आप अपने कर्त्तव्यका भी साफ साफ निर्णय कर लेंगे और आपका कार्य भी निश्चित परिणामकारी होगा और तब आप जो भी कदम उठायेंगे वह आपको अपने हृदय के प्रिय लक्षकी ओर बढ़ायगा।

वह आदर्श क्या होना चाहिए? राष्ट्रीय स्वाधीनता और पूर्ण स्वाधीनता ताकि विकाशके लिये हम अपनी पसन्दका रास्ता चुन सकें और कार्य कर सकें। क्योंकि इसके बिना राजनैतिक सामाजिक या आर्थिक स्वाधीनता नहीं हो सकती। लेकिन राष्ट्रीय स्वाधीनताका अर्थ युद्ध प्रिय देशोंकी श्रेणीमें एक नये सदस्य की भर्ती न होनी चाहिये। हमारी स्वाधीनताका उद्देश्य होना चाहिये विश्वके राष्ट्रोंका संघ निर्माण, जिससे सारी दुनियामें सहयोग और शान्ति तथा समृद्धि हो।

लेकिन संसारमें उस समय तक सहयोग नहीं हो सकता जब तक कि एक देशका दूसरे पर आधिपत्य है और एक देश दूसरेका

शोषण करता है या एक दल या जाति, दूसरे दल या जातिका शोषण करती है। इसलिये हमें सब तरहके शोषणोंका अन्त करना होगा। आप सिर्फ शुद्ध राजनैतिक आदर्श लेकर नहीं रह सकते क्योंकि राजनीति सम्पूर्ण जीवनका एक अंग मात्र है, गोकि जैसी परिस्थितिमें हम हैं, राजनीतिका हमारे जीवनके हर भागपर आधिपत्य है। आपका आदर्श पूर्ण होना चाहिये, और जीवनकी पूर्णताके साथ उसका सामञ्जस्य होना चाहिये, जिसका आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक त्रिविध रूप है। इसका अर्थ है— समाजमें सबके लिये सामनता साथ ही सबके लिये बराबर सुयोग।

हमारा महिला समाज, पुराने जमानेके गौरवपूर्ण उदाहरणोंके बावजूद भी, जिनका हमें गौरव है और इसीलिये हम गौरवके साथ उनका उल्लेख करते हैं, बन्धनसे जकड़ा हुआ है और स्वतन्त्र नहीं है। प्राचीनकालमें हमारे देशका बहुत बड़ा भाग हमारे द्वारा ही दबाया गया और धर्म तथा प्राचीन रूढ़ियोंके नाम पर हमने विकाशके सब अधिकारोंसे उन्हें वंचित रखा। समस्त भारतमें हम देखते हैं कि सख्त मेहनतके बाद भी लाखों भूखों मरते हैं। किस तरह हम उन्हें भूख और दरिद्रतासे छुड़ा कर आनेवाली स्वाधीनताका सुख भोगने लायक बना सकते हैं ? हम दरिद्रनारायणकी सेवाकी बात सुनते हैं और जरासे दान या सेवासे हम समझने लगते हैं कि हमारा कर्त्तव्य पूरा हो गया। बड़ी उदारतापूर्वक स्वर्गका साम्राज्य गरीबोंके लिये सुरक्षित छोड़

कर, संसारका साम्राज्य अपने पास रखनेकी हम बराबर फिक्र किया करते हैं। युवकोंको कमसे कम इस ढोंगसे दूर रहना चाहिये। दरिद्रता अच्छी चीज नहीं है, इसकी कभी तारीफ न करना चाहिये, यह एक बुराई है जिसका मुकाबिला कर नष्ट करना कर्त्तव्य है। दरिद्र हमसे मामूली नौकरी या उदारता नहीं मांगता। दरिद्र चाहता है कि वह दरिद्र न रहे। यह तभी हो सकता है जबकि वह प्रणाली ही बदल दी जाय जो गरीबी और दुरवस्थाको जन्म देती है।

पिछले महीनोंमें आपने देखा होगा सारे भारतमें श्रमिक असन्तोष फैल गया। मिलोंपर ताले लगे, हड़तालें हुईं और गोलियां चलीं। क्या आप सोचते हैं, श्रमिक यों ही हड़ताल कर देता है ताकि वह भूखों मरें और गोलीका शिकार हो। जब तक अवस्था असह्य नहीं हो जाती कोई ऐसा नहीं कर सकता। और दरअसल हमारे उद्योग धन्धोंकी अवस्था असह्य हो गयी है। आपके प्रान्तकी जूट मिलोंने दस वर्षोंमें ४४० करोड़ नफा किया। इस महान् धनराशियोंके साथ जूट मिलोंके मजदूरोंकी अवस्थाकी तुलना कीजिये। फिर मजदूर जूट मिलोंमें काम करनेके लिये इसलिये गये कि उनके लिये देशमें कहीं और जगह नहीं थी और उनकी अवस्था और भी खराब थी। क्या आप समझते हैं जिस देशमें दरिद्रता और धनाढ्यतामें इतना फर्क है वहां कभी शान्ति हो सकती है। इस समस्याकी आप उपेक्षा नहीं कर सकते और न उसका समाधान भावी पीढ़ीपर छोड़ सकते हैं।

अगर आपको यह समस्या सुलझानेमें भय होता है तो आप समझ लीजिये कि तथ्यकी उपेक्षाका परिणाम अपना ही नुकसान है। अक्सर कहा जाता है कि जमीन्दार और रैयत, मजदूर और पूंजीवादीके बीच हमें न्याय करना चाहिये, जिसका अर्थ है जो अवस्था है, कायम रहे। इसी तरहका न्याय राष्ट्र संघ भी करता है जब वह साम्राज्यवादी देशोंको आधी दुनिया पर शोषणके लिये बना रहने देता है। जबकि वर्तमान अवस्था ही पूर्ण अन्याय है तो जो इस अवस्थाको कायम रखना चाहते हैं उन्हें अन्याय कायम रखने वाला समझा जाना चाहिये।

अगर आपका आदर्श सामाजिक समानता और विश्वसंघ है तो हमें समाजवादी राजके लिये प्रयत्न करना होगा। इस देश में 'समाजवाद' शब्द ही बहुतोंको डरा देता है, लेकिन यह कुछ बात नहीं है, क्योंकि भय तो उन लोगोंका पुराना साथी है। पाठ्य पुस्तकें छोड़नेके बादसे, विचार जगतमें जो कुछ महत्वपूर्ण हुआ है उससे अनजान, वे हमेशाही भय करते हैं कि वे उसे न समझते हैं और न समझेंगे।

यह आपका, देशके युवकोंका काम है कि संसारमें जो नयी शक्तियां और विचार उठ रहे हैं उनकी कद्र करें और अपने देशमें उनका उपयोग करें। दुनियाके लिये 'समाजवाद' ही एक आशा है। यह ध्यान देनेकी बात है कि पिछले महा समरमें पश्चिमके राष्ट्रोंको जब महान् सङ्कटने घेर लिया था तब युरोपके पूंजीवादी राष्ट्र भी काफी हद तक समाजवादी साधनोंको अपनानेके लिये

मजबूर हो गये थे। यह सिर्फ देशके लिये ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें भी किया गया, विभिन्न देशोंमें सहयोग हुआ और ऐसा लगा कि देशोंको एक दूसरेसे अलग करनेवाली सीमाएं मिट रही हैं। देशोंमें घनिष्ठ आर्थिक सहयोग कायम हुआ, बल्कि विभिन्न देशोंकी सेनाएं एकके सेनापतित्वमें एक महा सेना बन गयी। लेकिन महायुद्धने जो शिक्षा दी उसे हमने खो दिया और हम फिर महान् संहारकी ओर बढ़ने लगे।

समाजवाद हमारे बहुतसे मित्रोंको डराता है, लेकिन साम्यवादके बारेमें क्या है? कौंसिल चेम्बरोंमें बैठे हुए हमारे बड़े बूढ़े इस शब्दका नाम सुनते ही अपने सफेद सिरों और सफेद दाढ़ियोंको हिलाने लगते हैं।

फिर भी मुझे शक है कि उनमेंसे किसीको साम्यवादका मामूली ज्ञान भी है क्या? आपने पढ़ा होगा कि सरकार दो काम करना चाहती है—एक तो वह ट्रेड युनियन आन्दोलनका गला घोटना चाहती है और दूसरे कम्युनिस्ट समझे जानेवालोंको दूर कर देना चाहती है। क्या आपने सोचा है कि नया विचार फैलानेवाले व्यक्तियोंसे शक्तिशाली साम्राज्य क्यों डरता है? भारत सरकार अगर सोचती है कि कानून बना देने भरसे ही वह किसी विचारको रोक सकती है तो कहना होगा उसमें अक्लकी कमी है। क्योंकि विचार तोप बन्दूकका भय नहीं करते और सीमा या प्रणालीके बन्धन नहीं मानते।

वह साम्यवादी विचार क्या है जिससे ब्रिटिश साम्राज्य कांपता है, मैं इस पर विशेष प्रकाश नहीं डालता और मैं खुद भी बहुतसे कम्युनिस्ट तरीकोंसे सहमत नहीं हूँ, लेकिन मुझे निश्चय नहीं है कि कम्युनिज्म किस हदतक भारतके उपयुक्त होगा। मैं समाजके आदर्श स्वरूप साम्यवादमें विश्वास करता हूं, क्योंकि यह समाजवाद ही है, मेरा खयाल है कि संसारको सर्वनाशसे बचना है तो उसका एक मात्र उपाय--समाजवाद है।

और रूस! रूस आज साम्राज्यवादके महान् प्रतिद्वन्दीके रूपमें खड़ा है और पूर्वके देशोंके साथ उसका व्यवहार उदारता और न्यायपूर्ण रहा है। चीन, तुर्की और परसियामें उसने अपनी इच्छासे अपने कीमती अधिकार और सुविधाएं छोड़ दीं। और ब्रिटिशोंने चीनियोंपर बमबाजी की और सैकड़ोंकी जान ले ली क्योंकि चीनियोंने ब्रिटिश साम्राज्यवादका सामना करनेका साहस दिखलाया।

परसियाके तब्रिज शहरमें जब रूसी राजदूत पहुंचा तो उसने वहांके लोगोंके बुलाकर जारके पापोंके लिये रूसकी तरफसे माफी मांगी। रूस पूर्वमें समान हैसियतसे चलता है, विजेता या ऊँची जातिवालेकी हैसियतसे नहीं, ऐसी हालतमें उसका स्वागत होना क्या आश्चर्यदायक है।

आपमें से कुछ अध्ययनके लिये शायद विदेशोंमें जायं, इङ्गलैण्ड जानेपर आप पूरी तरह अनुभव करेंगे कि जाति भेद क्या है? वहांकी अपेक्षा इटली, फ्रांस या जर्मनीमें आपका

अच्छा स्वागत होगा। रूसमें आप देखेंगे जाति रंगका भेद-भाव नहीं, मास्को विश्वविद्यालयमें पढ़नेवाले चीनी विद्यार्थियोंके साथ समान व्यवहार किया जाता है।

मैंने आपके सामने समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीयवादके आदर्श रखे हैं, ये ही आदर्श युवकोंके मिजाजके उपयुक्त हैं। अन्तर-राष्ट्रीयवाद, हमारे देशकी स्वाधीनतासे ही आ सकता है, ब्रिटिश साम्राज्यवाद या ब्रिटिश कामन वेल्थ द्वारा हम इसकी साधना नहीं कर सकते, आप इसे चाहे जिस नामसे पुकारें। किन्तु यह समझ लीजिये कि साम्राज्यवाद ही अन्तरराष्ट्रीयवादका सबसे बड़ा शत्रु है। अगर भविष्यमें इङ्गलैंड विश्वसंघमें शामिल होना चाहे तो हमसे बढ़कर कोई उसका स्वागत नहीं करेगा, लेकिन इसके पहले उसे अपना साम्राज्यवाद छोड़ना होगा। हमारा झगड़ा इङ्गलैंडकी जनताके साथ नहीं है बल्कि इङ्गलैण्डके साम्राज्यवाद के साथ है।

मैंने अन्तर राष्ट्रीयवादपर जोर दिया है, यह आदर्श चाहे हमारे लिये सुदूरवर्ती भले ही हो, लेकिन दर असल दुनिया ही इस समय अधिकांशतः अन्तर्राष्ट्रीय है, चाहे हम इसे अनुभव न करें। विदेशी शासनमें रहनेके कारण हमारा दृष्टिकोण राष्ट्रीय होना सम्भव है, हम भारतकी महत्ताकी बातें कहते हैं, हमें विश्व को उसे जो सन्देश देना है उसकी बात कहते हैं, हम अपने देशकी भूतकालकी बातोंमें गर्व अनुभव करते हैं। यह उत्तम है कि हम अपना भूतकाल याद रखें क्योंकि वह महान् और

स्मरणीय था, लेकिन युवककी आंखें भविष्यकी ओर होनी चाहिये। हर देशके बाशिन्दे सोचते हैं विश्वमें उन्हें कुछ खास सन्देश वितरण करना है। इङ्गलैंड अपने साम्राज्यका बोझा लादे रखना चाहता है गोकि गुलाम अकृतज्ञ लोग आपत्ति करते हैं और विद्रोह करते हैं। फ्रांस सोचता है उसे संसारको सभ्य बनाना है, अमेरिका भगवानका अपना देश है, जर्मनीको Kultur (संस्कृति) फैलाना है, इटलीके पास फासिस्ज्म है और रूसके पास कम्युनिज्म है। सदासे ऐसा होता आया है। यहूदी देवताओंके प्रिय थे, अरबोंके लिये भी यही समझिये। क्या यह अचरज की बात नहीं है कि हर देश सोचता है कि उसे विश्वको सुधारना है, उसकी संस्कृतिको समृद्ध करना है! हर एक अपनेको परमात्मा का प्रियपुत्र समझता है।

व्यक्तिगत तौरसे आत्म प्रशंसा हमेशा खतरनाक है। राष्ट्रके लये भी यह खतरनाक है, क्योंकि इससे राष्ट्र सन्तुष्ट अथच निश्चेष्ट हो जाता है और दुनिया उसे छोड़कर आगे बढ़ जाती है। वर्तमान अवस्थासे सन्तुष्ट होनेका कोई कारण नहीं है। हमारे तौर तरीके विभिन्न हैं, हमारे अन्दर धार्मिक अतिरेक है, हमारी महिलाओंकी अवस्था अनुन्नत है और हमारे श्रमिकों की हालत दर्दनाक है। मृत भूतकालकी प्रशंसामें अपना वक्त बरबाद करनेसे हमारा क्या भला हो सकता है, जबकि वर्तमान हमें पुकार रहा है और काम हमारे सामने पड़ा हुआ है। दुनिया

बदलती है और तेजीसे बदल रही है और अगर हम इस स्थितिके अनुसार अपना समाज नहीं बनाते तो हमारा नाश होगा ही। हमने देखा है कि वर्षों नहीं महीनोंमें ही पुराणी प्रणालीको तोड़कर कमालपाशा और अमानुल्लाने क्या कर डाला। जो तुर्की और पिछड़े अफगानिस्तानमें हुआ वही भारतमें हो सकता है। लेकिन यह कमाल पाशा या अमानुल्लाके तरीकेसे किया जा सकता है, यह आपकी पसन्द पर निर्भर नहीं हो सकता कि आप धीरे धीरे सुधार करें या जल्दी-जल्दी, या तो आप फौरन अपना चुनाव कर लें और काम करने लगें अन्यथा विनाश अवश्यं-भावी है। तुर्की और अफगानिस्तानने अपना चुनाव कर लिया और वे आज महान् राष्ट्र माने जाते हैं, आप क्या चाहते हैं?

दुनियाकी हालत बहुत खराब है और चमकते हुए बड़े शहरोंके होते हुए भी भारतकी अवस्था संगीन है। युद्धकी अफवाहोंका बाजार गर्म है और भविष्यवाणीकी जाती है कि भावी महा संग्रामका परिणाम वर्तमान सभ्यताके लिये विनाशकारी हो सकता है।

इस देशमें और अन्यत्र भी, युग युगमें महापुरुषोंका मानव जातिकी सहायताके लिये जन्म हुआ है। लेकिन किसी भी महापुरुषसे बढ़कर वह आदर्श है जिसकी वह प्रतिष्ठा करना चाहता है और धर्मकी व्याख्या युग-युगमें बदलती रहती है, और

कोई भी सामाजिक प्रणाली जो किसी समय समाजके लिये हितकर रही हो, किसी समय नुकसानदेह भी हो सकती है। आज आप बैलगाड़ीमें बैठकर बम्बई नहीं जाते और न तीर-कमान लेकर लड़ते हैं। तब ऐसी प्रणालीके पीछे क्यों पड़ते हैं जो किसी समय बैलगाड़ी या तीर कमानके समय अच्छी थी।

जितने महापुरुष हुए हैं सबने वर्तमान प्रणालीके विरुद्ध विद्रोह किया है। २॥ हजार वर्ष पहले बुद्धने सामाजिक समानता की घोषणा की और पौरोहित्य तथा अन्य सुविधाओंके खिलाफ विद्रोह किया। वे जनताके पक्षमें और उन्हें शोषित करनेवालों के खिलाफ थे। फिर ईसा-मसीह आये और फिर अरबके मसीहा जिन्होंने हर एक चीज बदलनेमें जरा भी आनाकानी नहीं की। वे तथ्यके भक्त थे। आजके जमानेके 'अवतार' वे विचार हैं जिनका संसारके सुधारके लिये जन्म हुआ है, और आजका आदर्श है, सामाजिक समानता। मैं चाहे कमजोर हूं और जितना चाहूं उतना काम न कर सकूं और आप भी चाहे कम ही कर सकें किन्तु मैं और आप मिलकर बहुत कुछ कर सकते हैं और भारतके जाग्रत युवा प्राणोंकी सहायतासे हम बहुत कुछ कर सकते हैं। युवा ही देश और संसारकी रक्षा कर सकते हैं। मैं फासिस्टोंको पसन्द नहीं करता किन्तु उनके इस नारेको पसन्द करता हूं—Giovoniezza। मैं चाहता हूं आपका भी आदर्श वाक्य हो, खतरेके साथ खेलो। हमारे बड़े बूढ़ोंको सुरक्षित रहने दीजिये।

आप और मैं भारतीय हूं, और भारतके हम बहुत ऋणी हैं, लेकिन हम मानव भी हैं और हम मानवताके भी कर्जदार हैं। हमें युवा साम्राज्यका नागरिक बनाना चाहिये। बस यही एक साम्राज्य है जिसके अधीन हम रहना चाहते हैं, क्योंकि यही भावी विश्व-संघका पुरोहित है।

युवा-विद्रोह

—::○::—

मित्रो और साथियो !

मैं कांफ्रेंसोंसे कुछ ऊबसा गया हूँ और उनकी उपयोगितामें भी मुझे जरा सन्देह होने लगा है। कांफ्रेंसोंके प्रति मेरे अन्दर उत्साहकी कमी होने पर भी, युवकोंकी कांफ्रेंसकी तरफ मेरे हृदयमें आकर्षण बना हुआ है, क्योंकि यह वयोवृद्धोंकी सभाओंसे बिलकुल भिन्न है। आपमेंसे बहुतसे मुमकिन है, बड़े होनेपर आपमें जो उत्साह और लापरवाही तथा साहस है, उसे भूल जांय। लेकिन आज आप जवान हैं और उत्साहसे भरे हुए हैं और मैं जिसकी उम्र बढ़ती जा रही है, आपकी आशा और उत्साहमें साझीदार बनने आया हूँ ताकि अपने दैनिक कार्योंके लिये आपका कुछ उत्साह और आशा अपने साथ ले जा सकूं। मैं इसलिये आया कि युवकोंकी पुकार अदमनीय है, उनके आह्वानका प्रत्याख्यान कुछ ही लोग कर सकते हैं।

और जब यह आह्वान बम्बईके युवा स्त्री-पुरुषोंकी तरफसे आया, जो वर्तमान युवा-जागृतिके नेता रहे हैं तब मैंने इस सम्मानको पसन्द किया और स्वीकार किया।

लोग कांग्रेसोंमें क्यों जमा होते हैं? आप लोग यहां क्यों एकत्र हुए हैं? सिर्फ व्याख्यान देने या सुनने अथवा कामसे छुटकारा पा कर या अपने खेलसे छुट्टी पाकर, वक्त बितानेके लिये? मैं सोचता हूं आप लोग यहां इसलिये एकत्र हुए हैं कि जो कुछ इस वक्त है उसे आप पसन्द नहीं करते और बदलना चाहते हैं। क्योंकि आप यकीन करते हैं कि इस बेहतरीन दुनियामें जो कुछ है वह बेहतरीन नहीं है। क्योंकि आप अपने कन्धोंपर देशकी दुरवस्था और दयनीयताका बोझ अनुभव करते हैं और आपका विश्वास है कि अपनी युवावस्था जन्य साहस, स्वभाव और मनोबल द्वारा उस बोझको उठाकर फेंक सकते हैं, कमसे कम अपनी चेष्टा और विश्वाससे हलका कर सकते हैं। अगर मेरा अन्दाज ठीक है और इसी प्रेरणासे आप यहां आये हैं तो बहुत अच्छा है और आपके मिलने, बोलनेसे तथा आपके निर्णय द्वारा कुछ न कुछ लाभ अवश्य होगा। लेकिन अगर आप वर्तमान अवस्थासे असन्तुष्ट नहीं हैं, अगर आप वर्तमान परिस्थितिसे उद्विग्न नहीं हैं, अगर आप इस बेचैनीके कारण कुछ करनेके लिये तैयार नहीं होते तो आपमें और बुड्ढोंकी बैठकोंमें क्या फर्क है जो आपसमें मिलकर बातचीत और तर्क तो बहुत करते हैं किन्तु काम कम करते हैं। जो लोग बराबर अपनी

सुरक्षा और संरक्षणके फिक्रमें पड़े रहते हैं, वे संसारका सुधार नहीं करते, नहीं कर सकते। जिन्हें वर्तमान अवस्थासे कोई शिकायत नहीं है वे भला परिवर्तनके लिये क्यों चेष्टा करने लगे। लेकिन आप देखते हैं दुनिया बदलती है और तरक्कीकी तरफ बढ़ती है, क्योंकि दुनियामें ऐसे लोग हैं जो बुराइयों और अन्यायोंको सह नहीं सकते हैं।

समाजका आधार सुरक्षा और स्थायित्वके साधन हैं। सुरक्षा और स्थायित्वके बिना, समाज या सामाजिक जीवनका जन्म नहीं हो सकता, लेकिन आपके समाजमें आज कितनोंको सुरक्षा और स्थायित्व प्राप्त है? आप जानते हैं, लाखोंको ये प्राप्त नहीं है, उनके पास इतना भोजन तक भी नहीं है कि शरीर और आत्माको एक साथ रखा जा सके। उनके सामने सुरक्षाकी बात करना मक्कारी है। जब तक कि जनता सुरक्षामें भाग नहीं लेती, तबतक आप स्थायी समाजका निर्माण नहीं कर सकते। इसी-लिये आप देखते हैं कि विश्वके इतिहासमें एक क्रांतिके बाद दूसरी क्रान्ति होती है। इसका कारण यह नहीं है कि कोई व्यक्ति या दल खून खराबी पसन्द करता है, किसीको अराजकता या विशृंखला अच्छी लगती है, लेकिन इसका कारण अधिका-धिक जनताके लिये नहीं तो कमसे कम अधिकसे अधिककी भलाईके लिये प्रयत्नशील होना है, कुछ लोगों या दलोंके भलेसे वह बात नहीं आ सकती। वह उत्तम समय चाहे नजदीक भले ही न हो, पर यह समझ लें कि बराबर, कभी-कभी ध्यान जाते

हुए ही उसी तरफ बढ़ रहा है। और संघर्ष तथा वहां तक पहुंचने की इच्छा जितनी ही बड़ी होगी, समाजका उतना ही लाभ होगा। अगर यह इच्छा बिलकुल ही न रह जाय तो समाज निर्जीव हो जायगा और धीरे-धीरे उसका नाम निशान मिट जायगा।

इसलिये चूंकि दुनिया निर्दोष नहीं है, एक स्वस्थ समाज में विद्रोहका बीज अवश्य होना चाहिये। इस विद्रोहको क्रान्ति और विचारमें रद्दोबदल करनेवाला होना चाहिये। युवा स्त्री-पुरुषोंका काम है कि समाजको यह प्रभावशाली भावना दें, युवा स्त्री-पुरुषोंको ही जो कुछ बुरा है उसके विरुद्ध विद्रोहका झण्डा उठाना चाहिये।

आप लोगोंमेंसे बहुतसे आश्चर्य कर रहे होंगे कि मैं इस ढंगसे क्यों बोल रहा हूं। इसकी वजह यह है कि एक तो मैं व्याख्यान-दाता या प्लेटफार्मको हीरो नहीं हूं और दूसरा कारण यह है कि मैं अनुभव करता हूँ कि हमारी अधिकांश कठिनाइयां झूठे आदर्शवादके कारण है। विदेशी राजनैतिक, आर्थिक आधिपत्य काफी खराब है, लेकिन अपने शासकका आदर्शवाद स्वीकार कर लेना मेरी दृष्टिमें खराबसे भी खराब है क्योंकि यह हमारे सब प्रयत्नों पर रोक लगा देती है, और बिना लक्ष्यके ऐसी जगह भेज देती है जिससे बाहर निकलनेका दरवाजा नहीं है और जहां हम भटकते रहते हैं। इसलिये मैं चाहता हूं अपना दिमाग साफ रखूं और हर मसले पर साफ तौरसे सोचूं। मैं चाहता

हूँ आप भी ऐसा ही करें। आज कलके रोजमर्राके राजनैतिक शब्दोंके ग्रहण करनेसे कोई फायदा नहीं है जब तक हम यह न समझें कि हमारा कर्तव्य क्या है, हमारा लक्ष क्या है और किस तरह हम उस लक्ष्य तक पहुंचेंगे। मेरे साथ आप सहमत हों तो मैं इस सहमतिका स्वागत करूंगा किन्तु अगर इस सहमतिके पीछे विचार और विश्वास नहीं है तो उसका कुछ अर्थ नहीं है। मैं तो यह चाहता हूं आप दुनियाकी हालत देखें और समझें और उत्तम करनेकी अदम्य इच्छा उत्पन्न करें और सफाईसे यह जाननेकी चेष्टा करें कि क्या करना चाहिये और कैसे करना चाहिये। जो कुछ कहता हूं उसे अगर आप गलत सोचते हैं तो बिलकुल मत मानिये। लेकिन धर्म या समाज या प्रणालीसे स्वीकृत जो भी चीज आपको अनुचित और समय विरोधी जान पड़े उसे भी मत मानिये। क्योंकि धर्म जैसा कि चीनी कहावत है बहुत हैं, लेकिन कारण एक है।

आजकी दुनियामें हम क्या देखते हैं? जनताके बहुसंख्यक लोगोंकी दयनीय अवस्था जबकि कुछ ऐशसे जिन्दगी बसर करते हैं, बहुतोंको खाना कपड़ा तक नहीं मिलता और न उन्हें अपने विकाशके लिये सुविधायें मिलती हैं। दुनिया भरमें युद्ध और संघर्ष जारी है और जो शक्ति उत्तम समाज निर्माणमें लगनी चाहिये वह ज्यादातर आपसी प्रतिद्वन्द्विता या नाशमें खर्च होती है। जब सारी दुनियाकी यह हालत है तब हम अपने दुखी देशकी क्या बात कहें। विदेशी शासनने भारतको बिलकुल

कंगाल बना दिया है। और पुराने तौर तरीकों और विचारोंमें चिपके रहनेकी प्रवृत्तिके कारण उसमें जीवन नहीं रह गया है।

दर अस्ल दुनियामें ही कुछ गड़बड़ी है, इस गोलमाल और दुख-दर्दके पीछे दर अस्ल कोई मतलब भी है? पच्चीस सौ वर्ष पहले कुमार सिद्धार्थ (जो फिर महान् बुद्ध हुए) ने दुनियाकी यह दयनीय अवस्था देखी थी और अपनेसे ही सवाल किया था—

कैसे वह ब्रह्म—
संसारकी रचना कर, उसे दयनीय रख सकता है?
अगर वह सर्व शक्तिमान् होकर,
दुनियाको इस हालतमें छोड़ देता है, तो
वह अच्छा नहीं है। और अगर शक्तिमान नहीं है
वह भगवान नहीं है!

मनुष्यका अन्तिम उद्देश्य चाहे जो भी हो लेकिन हर एक मनुष्यका वर्तमान उद्देश्य होना चाहिये कि यह दयनीयता कम हो और उत्तम समाजका निर्माण हो और उत्तम समाजका लक्ष हो, एक राष्ट्रपर दूसरे राष्ट्रके आधिपत्यका विनाश, एक व्यक्तिपर दूसरेके आधिपत्यका सर्वनाश। इसको प्रतिद्वन्दिताके स्थान पर सहयोगकी स्थापना करना चाहिये।

आपने अक्सर ब्रिटिश साम्राज्यवादकी निन्दा की होगी क्योंकि आपको इसके अन्तर्गत दुख भोगना पड़ा। लेकिन क्या आपने सोचा है कि साम्राज्यवाद एक ऐसी सामाजिक प्रणालीका परिणाम है, और जो संसारके अधिकांश भाग पर अपना आधि-

पत्य जमाये हुए हैं जिसको पूंजीवाद कहते हैं। मेरा और आपका लक्ष होना चाहिये देशको विदेशी शासनसे मुक्त करना, लेकिन जो समस्या हमारे सामने है यह उसका एक भाग ही है। जब-तक साम्राज्यवादका खात्मा नहीं किया जाता तबतक मानव जातिका कुछ आदमियों द्वारा शोषण होता रहेगा। यह हो सकता है कि हममेंसे कुछ शोषकोंके पदतक पहुंच जांय, लेकिन उससे बहुतोंको स्वाधीनता नहीं मिलेगी। इसलिये हमारा लक्ष्य होना चाहिये सब तरहके साम्राज्यवादका विनाश और दूसरे आधारपर समाजका गठन। वह आधार पारस्परिक सहयोगका होना चाहिये। और यही समाजवादका दूसरा नाम है। इस-लिये हमारा राष्ट्रीय लक्ष होना चाहिये समाजवादी समाजकी रचना और अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष होना चाहिये, समाजवादी राष्ट्रोंका विश्वसंघ।

अपने आदर्श तक पहुंचनेके पहले दो विरोधी दलोंसे लड़ना होगा, एक दल राजनैतिक विरोधी होगा और दूसरा दल सामा-जिक विरोधी होगा। हमें विदेशी शासकोंको हटाना होगा और सामाजिक प्रतिक्रियावादियों पर विजय प्राप्त करनी होगी। भूतकालमें हमने देखा है कि जो राजनीतिमें सबसे उग्र थे, वेही लोग भी सामाजिक क्षेत्रमें प्रतिक्रिया शील थे। हमने देखा है, राजनैतिक माडरेट सामाजिक मामलोंमें काफी अग्रसर हुए हैं। लेकिन देशके राजनैतिक जीवनको सामाजिक जीवनसे अलग नहीं किया जा सकता। आप समाजका सुधार सिर्फ

उसके एक भागको सुधारकर नहीं कर सकते, एक भागके किटाणु दूसरे भागपर निश्चित रूपसे असर डालते हैं और रोगकी गहरी जड़ जमा देते हैं। इसलिये आपकी सामाजिक और राजनैतिक फिलासफी सम्पूर्ण एक होनी चाहिये और आपका कार्यक्रम ऐसा होना चाहिये जिसमें जीवनके सब अंगोंका समावेश हो।

भूतकालमें चाहे जो कुछ शक भी रहा हो मगर आज यह बिलकुल साफ है कि सामाजिक प्रतिक्रियावादी उनके साथी हैं जो भारतको परतंत्र रखना चाहते हैं। अगर इस स्वयमुसिद्ध सत्यके लिये किसी प्रमाणकी जरूरत थी तो वह पिछले महीनोंमें मिल गये। आप साइमन कमीशनका बायकाट देखा और उसमें काफी मदद भी दी। आपने यह भी देखा कि कुछ व्यक्तियों और कुछ दलोंने इस कमीशनके साथ कैसे सहयोग किया, और राष्ट्रकी इच्छाको न मानकर उसके स्वागतमें भाग लिया। वे लोग और दल कौन हैं? आप देखेंगे वे प्रतिक्रियावादी, सम्प्रदाय वादी या अवसर वादी हैं जो जातिके स्वार्थोंका बलिदान कर अपने लिये सुविधाएं चाहते हैं।

राजनैतिक और सामाजिक प्रतिक्रियाशीलताका इससे भी बढ़कर उदाहरण आपको भारत सरकारके वर्तमान रुखसे मिलता है जो उसने समाज सुधार सम्बन्धी साधनोंके प्रति अख्तियार कर रखा है। जनताके प्रतिनिधियों द्वारा सामाजिक बुराइयोंको मिटानेके जो प्रयत्न होते हैं उसपर सरकार पानी फेर देती है। सरकारी विरोधके कारण ही समाजकी काफी उन्नति नहीं हो

सकती और न समाज बदलती हुई अवस्थाके अनुकूल अपनेको बना सकता है। भारतकी ब्रिटिश सरकार भारतके हिन्दू मुसलमानोंके पुराने रीति-रिवाजों कि स्वनिर्वाचित संरक्षक बन गयी हैं। हालमें ही पबलिक सेफ्टी बिलके समय शुद्धि और तब लीगके सम्बन्धमें ईसाई गोरे साम्राज्यवादियोंकी लम्बी चौड़ी बातें सुनने लायक थीं, किन्तु उनकी बातोंसे यह नहीं मालूम होता था कि वे दोनोंसे किसकी तरफदारी ज्यादा करना चाहते हैं।

मनुष्यकी स्वतन्त्रताकी इच्छाको कम करनेके लिये पहले भी धर्मका बहाना लिया गया है। राजा और सम्राटोंने अपने लाभके लिये धर्मकी दुहाई देकर जनताको अपने अधीन रखा है, लोगोंमें विश्वास जमा दिया था कि उनपर शासन करनेका राजाओंको दैवी अधिकार है। पुरोहित, पुजारी या इसी तरहकी अन्य सुविधा प्राप्त जातियां, अपनी सुविधाओंके लिये दैवी स्वीकृतिका दावा करती रही हैं। धर्मके जरिये जनताके दिमागमें यह बात जमायी गयी है कि उनकी दुरवस्था उनके दुर्भाग्यके कारण है, ये सब उनके पूर्व जन्मके पापोंका फल हैं। धर्मके नामपर ही महिलाओंको भी दबाकर रखा गया है, और आज भी उसीके नामपर पर्दा जैसी बर्बर प्रथाके अधीन रखा गया है। दलित या अछूत जाति चिल्ला-चिल्लाकर कह रही है किस तरह उन्हें धर्मके नामपर मानवताके अधिकारोंसे वंचित रखा गया। धर्म अधिकार वादका स्रोत रहा है और चूंकि हमारे शासकोंने हमारी इस कमजोरीको समझ लिया है और चूंकि उनका शासन भी

इसी अधिकार वादके आधारपर अवस्थित है, इसीलिये वे इसके बुरेसे बुरे रूपको भारतमें फैलाये रखना चाहते हैं अगर पढ़े लिखोंकी भावना इस अवस्थाके प्रति विद्रोही हो उठे और भारत भरमें फैल जाय तो अधिकारवादकी नींव हिल जायगी और साथ ही ब्रिटिश शासनकी जड़ भी हिला देगी।

आज भारतमें और तमाम दुनियामें सामाजिक और आर्थिक मामलोंपर काफी तर्क वितर्क और बहस हो रही है। इन तमाम बहस मुबाहिसोंसे दो प्रकारकी विचार धारा प्रगट होती हैं। एक विचार धारा सुधारकोंकी है जो जिनके पास समाजकी सत्ता है उन सत्ताधारियों को रजामन्दीसे समाजका धीरे-धीरे सुधार करना चाहते हैं। यह विचारधारा मन्दगतिसे सामाजिक विकासका समर्थन करती है। राजनैतिक क्षेत्रमें यही अंगरेजोंकी रजामन्दीसे भारतके लिये औपनिवेशिक स्वराज्यकी स्थितिमें विश्वास करती है और आर्थिक क्षेत्रमें यह पूंजी पतियों और जमीन्दारोंकी रजामन्दीसे दरिद्रोंका भला करना चाहती है, यह रजामन्दी चाहे उत्साहके साथ और एकांगी हो। सामाजि क्षेत्र में भी जिन जातियों या दलोंको सुविधाएं प्राप्त हैं, उनसे उन्हें धीरे-धीरे वंचित किया जाय। दूसरी विचार धारा क्रान्तिकारी है जो शीघ्र परिवर्तन चाहती हैं, यह विश्वास नहीं करती कि सुविधा और सत्ताके अधिकारी जबतक मजबूर न हो जायेंगे अपनी स्वीकृति देंगी, यहां भी रजामन्दी है, पर यह स्वीकृति अनिच्छा पूर्वक मजबूरन स्वीकृति हैं।

ये दोनों प्रतिद्वन्द्वी धाराएं आधिपत्य कायम करनेके लिये आपसमें प्रतिद्वन्द्विता कर रही हैं। काफी हद्तक प्रगतिशील और क्रान्तिकारी साधन, अगल बगल काम करते हैं। किन्तु आदर्शमें जो फर्क है, वही मुख्य है इसीलिये यह आवश्यक है कि दो में से एक विचार धाराको चुन लें और जिसे आप चुने उसीके अनुसार कार्य करनेमें अपनी सारी ताकत लगा दें।

अगर आपमें कोई यह विश्वास करता हो कि जिनके पास सत्ता और सुविधा है, वे आपकी दलीलें और तर्कसे उन्हें छोड़ देंगे तो मैं कहूँगा कि आपने इतिहासका ठीकसे अध्ययन नहीं किया और भारतमें जो घटना घटी उनपर विशेष ध्यान नहीं दिया। हमारे सामने जो समस्या है वह शक्ति पानेकी है। हमारी कौंसिलों और असेम्बलियोंमें बढ़िया भाषण चाहे उनके शब्द कितने ही कड़े क्यों न हों सत्ताधिकारीपर प्रभाव नहीं डालते। हम वहां कारण और दलीलोंका बाहिरी प्रदर्शन देखते हैं फिर भी सरकार वक्ताका रुख कभी-कभी असह्य और अपमान जनक होता है। लेकिन आप बाहर आकर देखिये, जहां कहीं भी जनताकी इच्छा और सरकारकी मर्जीमें संघर्ष होता है, वहां जनता चाहे जितनी शान्त हो, मगर सरकार जनताके साथ तर्क और दलीलसे पेश नहीं आती बल्कि सैनिकोंके बायोनेट और पुलिसकी लाठियोंसे वह जनताको समझना चाहती है, उसकी भाषा बुलेट और मार्शल लाकी है। वर्तमान स्थितिका आधार इस्पातकी—बायोनेट और लाठी है। सख्त इस्पात और डण्डेसे

आप क्या तर्क वितर्क कर सकते हैं। आपको, अगर आप चाहें तो उनका सामना दूसरे तरीकोंसे करना होगा, वे तरीके ऐसी सामर्थ संग्रह करना है जो बायोनेट और लाठीसे तगड़ी हो।

सरकारको—कहा जाता है कानून और व्यवस्थाकी रक्षा करना ही है। इससे कोई मतलब नहीं है कि इसका परिणाम अधिक अव्यवस्था, मौत और जख्म हों। हर भारतीय जानता है कानून और व्यवस्थाके नामपर क्या अपराध किये जाते हैं, फिर भीकुछ लोग इसकी दुहाई देते हैं। कानून और व्यवस्था, प्रतिक्रिया वादियों और उन सत्ता धारियोंका अन्तिम अश्रय स्थल है जो अपनी सत्ता छोड़ना नहीं चाहते। जबतक स्वतन्त्रता नहीं आती, देशमें कानून और व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। फ्रेंचदार्शनिक Proudhon ने ठीक कहा है—स्वाधीनता—व्यवस्थाकी लड़की नहीं माता है।

सुधारवादी परिवर्तनके लिये सच्चाईसे जोर दार अपील करते हैं, वे अपने प्रतिद्वन्द्वियोंके खिलाफ कानूनी नुक्तोंमें विजय पाना चाहते हैं। लेकिन सरकारका विरोध अपनी जगहसे टससे मस नहीं होता और उनकी कोशिश बेकार होती जाती हैं, क्योंकि सत्ताधिकारी जानता है कि इनके तरीकोंसे उसकी सत्ताको कोई वास्तविक भय नहीं है, वह सख्त इस्पातके भरोसे बैठा रहता है। दुख तो यह है कि जिस सर्वसाधारणके लिये सुधारवादी इतनी चेष्टा करते हैं, उसपर भी उनके तर्कोंका प्रभाव नहीं पड़ता। सर्व-साधारण यह सब कुछ नहीं समझता और न उसे समझानेकी

कोशिश की जाती है। नेताओंमें समझौता करानेकी कोशिशोंमें तमाम शक्ति खर्च की जाती है और जनताकी उपेक्षा की जाती है। तब आश्चर्य क्या है कि जनता भी उदासीन रहती है और नेताओंकी पुकारका उसपर कोई असर नहीं पड़ता। राष्ट्रका सिर, धड़से इतनी दूर चला गया है कि दोनोंमें सम्बन्ध ही नहीं दिखता।

इसलिये इस समय देशमें एक आवाज, सिर्फ आवाज होनी चाहिये विद्रोह! लाखों, करोड़ों कण्ठोंसे एक ही थर्रा देनेवाली आवाज विद्रोहकी निकली चाहिये। जब करोड़ों कण्ठोंसे एक ही एक ही ध्वनि एक साथ निकलेगी तब इङ्गलैंड—जैसा कि उसने पहले किया है—अपना सर झुका देगा। लेकिन अगर राष्ट्रकी यह आवाज बुलन्द नहीं की गयी तो आप यह न समझें कि आप अंग्रेजोंसे किसी प्रकार सत्ता ले लेंगे।

जनताकी आवाज उसी हालतमें उठ सकती है जब आप उसके सामने ऐसा आदर्श और कार्यक्रम रखें, जिसका उसपर असर पड़ता हो और जो उसकी आर्थिक अवस्था सुधारता हो। और जनताकी आवाज उठनेके बाद वह तभी कार्यकरी होगी जबकि वह ध्येय, संगठन और बलिदान कर पाने योग्य हो।

मेरे प्रान्तके गवर्नरने ताल्लुकेदारोंको सलाह दी है। गवर्नरने उनसे कहा, वे अपने साथी बुद्धिमानीसे चुन लें। मैं भी आपको सलाह देता हूँ—अपनी साथी सावधानी और बुद्धिमानीसे चुनें। इन चुनावमें आपको यह देखना होगा कि भारतकी स्वाधीनता

से किनको लाभ होगा और अंग्रेजी राज कायम रहनेसे कौन फलता फूलता रहेगा। भारतकी स्वाधीनतासे जिनको लाभ होगा,आप उन्हीं का पक्ष लीजिये। देशकी जनता - किसानों और मजदूरोंका साथ दीजिये और स्वतन्त्र भारतका स्वप्न देखते समय उनका ही ध्यान कीजिये। तभी आपका कार्यक्रम जनता के हितका होगा और तब जनताकी इच्छा और शक्ति आन्दोलनके पीछे होगी। जनताकी स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटिश साम्राज्यवाद का ही नहीं, हर तरहके शोषणका अन्त होना है, और इसका लक्ष आर्थिक और सामाजिक सामनताके आधार पर समाजका पुनर्निमाण है।

भारतकी स्वाधीनता हम सबको प्यारी है। स्वाधीनताकी हमारी इच्छा शरीरसे कम और मनसे ज्यादा सम्बन्ध रखती है। किन्तु भारतकी जनताके लिये जिसका पेट खाली है, शरीर नंगा है और कमर खुली हुई है, स्वाधीनताका सवाल जीवनका सबसे बड़ा सवाल है। भारतकी दरिद्रता हो अत्यन्त आश्चर्य और दुखदायक है। यह भगवानका अभिशाप या समाजकी अवस्था का परिणाम नहीं है। भारत भूमिमें अपने बच्चोंके लिये काफी सामग्री है, अगर विदेशी सरकार और भारतके ही कुछ लोग सब चीजोंको हथिया कर जनताको उसके भागसे वंचित न करें। रस्किनने कहा है—गरीबी—गरीबकी प्राकृतिक कमजोरीके कारण नहीं है, और न यह ईश्वरीय देन है—गरीबीका कारण

नशेबाजी भी नहीं है—इसका असली कारण है कि दूसरेने उसकी पाकेट मार ली।

सारी सम्पत्तिपर कुछके अधिकारका अर्थ बहुतोंका दुख ही नहीं है, बल्कि यह जनमन पर भी अपना प्रभाव डालता है ताकि वह स्वाधीनता न चाहे। यही मानसिक दृष्टिकोण ही गरीबीको निसहाय बना देता है और यह पराजयकी भावना ही है जिसका आपको सामना करना है।

आप भारतके युवा आन्दोलनके नेता रहे हैं। और आपने एक शक्तिशाली संगठन खड़ा किया है। मगर याद रखिये संगठन और संस्थाएं तबतक आगे नहीं बढ़ सकतीं जबतक कि उसके पीछे शक्तिशाली विचार न हों। आप अपने सामने महान् आदर्श रखिये और उपेक्षणीय समझौते द्वारा उन्हें नीचा मत कीजिये। खेतों और कारखानोंमें काम करनेवालोंको देखिये और देखिये भारतकी सीमाके बाहर लोग कैसे अपने देशकी समस्याओंका सामना करते हैं। अपनी मातृभूमिके उद्धार के लिये राष्ट्रीय बनिये और अन्यायके बन्धनसे संसारको मुक्त करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय बनिये। महान् कार्य करने के लिये—एक फ्रेंच महापुरुषने कहा है आदमीको सोचना चाहिये कि वह कभी नहीं मरेगा। मौतसे कोई भी नहीं बच सकता मगर जवान इसका ख्याल तक नहीं करते, इसीलिये युवक मृत्युञ्जयी हैं और जो मौतको जीत चुका है वह सब कुछ कर सकता है।

साम्प्रदायिक दंगे
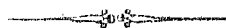
समय आ गया है कि हम इन सब दुःखपूर्ण घटनाओंको जो भारत भरमें हो रही हैं, खत्म करें। मुझे विश्वास है कि प्रत्येक भावनापूर्ण व्यक्ति चाहे उसके राजनैतिक विचार कुछ ही हों, इस महत्वपूर्ण कार्यमें सहयोग देगा।

धारा सभा इस बातको अनुभव करेगी कि यह मामला ऐसा है जिसने सारे देशमें उत्तेजना फैलाई है और उससे लोगोंके दिमागमें बेचैनी होना स्वभाविक है। इस मामलेको बिना वाद-विवादके उठाना कठिन है और इन वाद-प्रतिवादोंसे कटुता उत्पन्न होती है। मेरा उद्देश्य या इच्छा कुछ ऐसा कहनेकी नहीं है जिससे कटुतामें वृद्धि हो या इस धारा सभामें और कोई वाद-प्रतिवाद उत्पन्न हो जाय।

आगे चलकर नेहरूजीने समाचारपत्रोंमें प्रकाशित साम्प्रदायिक दंगोंके बारेमें अतिरञ्जित तथा उत्तेजक समाचारोंका

उल्लेख करते हुए कहा—"मैं आशा तथा विश्वास करता हूँ कि धारा सभा मेरी इस बातसे सहमत होगी कि हम सबका और विशेष कर धारासभाके सदस्योंका कर्त्तव्य है कि महासंकटके इन दिनोंमें हम ऐसी कोई बात न कहें या न करें जिससे लोग उत्ते-जित हों और स्थिति बदसे बदतर हो जाय। स्थितिका एक सबसे बुरा पहलू यह है कि अफवाहें जोरोंसे उड़ने लगती हैं और कभी-कभी वे बिल्कुल बेबुनियाद होती हैं। तरह-तरहकी अफवाहों पर जल्दी विश्वास कर लिया जाता है। हमें केवल अरक्षा तथा सार्वजनिक अशांतिको ही नहीं सहना पड़ता बल्कि उससे भी बुरी चीजको बर्दाश्त करना पड़ता है। यह चीज मानसिक अवस्था है जो कि इस प्रकारकी अवस्थाओंका पोषण करती है। जब हमारे सामने महान् सङ्कट उत्पन्न होता है तब हमें स्थितप्रज्ञता रखनी चाहिये।

जबसे अन्तःकालीन सरकारने कार्य भार सम्भाला तबसे इन साम्प्रदायिक दंगोंकी ओर उसे बहुत अधिक ध्यान देना पड़ा है। धारा सभाको यह याद होगा कि १६ अगस्तको कलकत्तामें जो नरमेध आरम्भ हुआ उसके बाद ही सरकारने काम सम्भाला, हमारे सब कार्योंपर इन घटनाओंका ग्रहण लग गया और हमने स्थितिको सम्भालनेकी पूरी कोशिश की।

धारासभा यह जानती है कि मौजूदा विधानके अन्तर्गत भारत सरकार प्रांतीय स्वशासनमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। मौजूदा विधानके अन्तर्गत यदि कोई हस्तक्षेप कर सकता है तो

वह गवर्नर जनरल न कि सर्वाधिपद् गवर्नर जनरल। फिर भी चूंकि, उत्तरदायी पदोंपर हम भारतीय मौजूद हैं और देश हमारी ओर पथ-प्रदर्शनके लिये देखता है। हमने सहायताकी पूरी कोशिश की। इस दुर्भाग्यपूर्ण कालमें, चाहे वह कलकत्तामें हो, भारतके किसी अन्य स्थानमें, नोआखाली में या पूर्वी बंगाल अथवा बिहारमें, सरकारको अपनी जिम्मेदारीका पूरा ख्याल रहा है और भारतको जिस खतरेने घेर लिया था उसे दूर करनेकी सरकारको बड़ी उत्कंठा रही है। ऐसा जान पड़ता है कि हम अकर्मण्य बैठे हैं और उसके लिये जनताने हमारी बहुत आलोचना की। लेकिन यह तो अनिवार्य था कि हम इस मामलेमें खुले तौर पर कार्य नहीं कर सकते थे। मैं समझता हूं कि यह आलोचना न्यायोचित नहीं थी।

आगे चलकर नेहरूजीने कहा, ऐसा जान पड़ता है मानो विभिन्न स्थानोंमें हत्याओं तथा नृशंसताके लिये प्रतिद्वन्द्विता चल रही है। यदि हमने इसे न रोका तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे देशका भविष्य अन्धकारपूर्ण बन जायगा। यद्यपि इन दंगोंको दबानेके लिये सशस्त्र फौजोंकी जरूरत हो सकती है किन्तु केवल उनसे ही काम न बनेगा। इसके लिये तो उन सब लोगोंको प्रयत्न करना चाहिये जिनका कि जनता पर प्रभाव है।

हालमें मैं बिहारके लोगोंके निकट सम्पर्कमें आया। तब मैंने देखा कि सीधे-सादे तथा भले किसान भी अपने विवेक तथा

अपने मानसिक संतुलनको खोकर कितना अन्धेर कर सकते हैं। मुझे यह ज्ञात हुआ कि कलकत्ताके नरमेधमें बहुतसे बिहारी मारे गये थे। उनके रिश्तेदार तथा बहुतसे शरणार्थी वापस आये और उन्होंने बिहारके देहातोंमें कलकत्ताके नरमेधकी कहानियां सुनाईं। इससे बिहारकी जनता बहुत उद्विग्न हो उठी। उसके बाद नोआखाली तथा पूर्वी बङ्गालके समाचार मिले। उपयुक्त कहानियों तथा विशेष कर स्त्रियोंके अपहरण, बलात्कार तथा बलात् विवाहके समाचारोंने जनताकी क्रोधाग्निमें घी का काम किया। कुछ समय तक वह केन्द्रीय सरकारकी ओर देखती रही और उसे आशा थी कि सरकार सहायता और संरक्षण देगी। जब उन्होंने ऐसी कोई मदद या संरक्षण मिलता न देखा तो वह बहुत क्रोधित हो उठी और अन्तकालीन सरकारकी बाह्य अकर्मण्यता की बड़ी आलोचना की।

आगे चलकर नेहरूजी ने कहा कि छपरा तथा भागलपुरकी घटनाओंने उत्तेजनामें वृद्धि की और गुण्डोंने स्थितिसे पूरा फायदा उठाया। गया तथा मुंगेर जिलोंमें दंगोंने जन-विद्रोहका रूप लिया। यह जन-विद्रोह करीब एक सप्ताह तक रहा। जितनी जल्दी यह शुरू हुआ था उतनी ही जल्दी दब गया। यह विद्रोह जो अन्य जिलोंमें भी फैलनेवाला था, रुक गया और यह एक आश्चर्य-जनक बात है। निश्चय ही बादमें फौज पहुंच गई और उसने शान्ति कायम करनेमें मदद दी, किन्तु शान्ति-स्थापनामें उन लोगोंने बहुत योग दिया। जो कि प्रधानतः बिहारी थे।

वे सब गांवों फैल गये और उन्होंने किसानोंको समझाया। गांधीजीके अनशनकी खबरका भी अच्छा प्रभाव पड़ा।

समाचार पत्रोंमें प्रकाशित बिहारके हताहतोंकी कुछ संख्याओं को बिलकुल गलत बताते हुए नेहरूजीने कहा—एक सप्ताह बाद बिहारमें स्थितिपर काबू कर लिया गया, और अब वहां शांति है। स्थितिके साधारण अवस्थाको पहुंचनेका लक्षण यह है कि लोग गांवोंको लौटना चाहते हैं। अब यहां सबसे बड़ी समस्या जनताके पुनर्निवास की है।

पूर्वी बंगालकी समस्याका उल्लेख करते हुए नेहरूजीने कहा— विश्वसनीय साक्षियोंसे वहांके बारेमें जो समाचार मिले हैं उन्होंने इस महत्वपूर्ण समस्याकी ओर ध्यान आकर्षित किया है कि अपहृत तथा बलात् धर्म-परिवर्तित स्त्रियोंको वापस किया जाय। यह प्रश्न स्वयंमेव ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि इसकी प्रतिक्रियाएं भी भारतमें व्यापक होंगी। अतएव यह अत्यावश्यक है कि जल्दी ही इन स्त्रियोंको लौटानेके लिये कार्रवाई की जाय, तभी बङ्गालमें पुनर्निवासका कार्य प्रारम्भ हो सकता है।

निःश्चय ही राज्यका कर्तव्य है कि वह इन उपद्रवोंसे पीड़ितोंको सहायता दे। मुझे आशा है कि प्रांतीय सरकारें पर्याप्त रूपमें इस कार्यको करेंगी। इससे जनतामें सुरक्षाकी भावना उत्पन्न होगी और साधारण जीवनके लिये उपयुक्त वातावरण पैदा होगा।

प्रश्नोत्तर

—::०::—

(१) क्या आप "भारतके लिए पूर्ण स्वाधीनता" शब्दोंकी व्याख्या करेंगे कि इसका अर्थ क्या है ?

उत्तर—

कांग्रेसके विधानमें पूर्ण स्वाधीनताका जो उल्लेख है, उसीसे इस प्रश्नकी उद्भावना हुई है, ऐसा मेरा अन्दाज है, मैं इसका जो आर्थिक रूप है, उसे छोड़कर जो राजनैतिक पहलू है, उसीका स्पष्टीकरण करता हूँ। यद्यपि कांग्रेस इसके आर्थिक पहलू और अन्य तरहके विकाश पर भी विचार करने लगी है और बहुतसे कांग्रेसी जिनमें मैं भी हूं, राजनैतिक स्वाधीनतासे भी अधिक आर्थिक स्वाधीनतापर जोर देते हैं। यह प्रत्यक्ष है कि आर्थिक स्वाधीनता में राजनैतिक स्वाधीनता भी शामिल है। लेकिन जैसा कि कांग्रेसके विधानमें है, इस वाक्यकी सिर्फ राजनैतिक व्याख्याकी जाय तो इसका अर्थ है, राष्ट्रीय स्वाधीनता—सिर्फ घरेलू ही नहीं

बल्कि विदेशी, आर्थिक और सैनिक स्वाधीनता होगी, यानी विदेशी मामलों और सैनिक मामलोंमें भारत पूर्ण स्वाधीन हो। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि हम भारतके एकाकी रहनेपर जोर देते हैं या हम इङ्गलैण्ड या अन्य किसी देशके साथ सम्बन्ध विच्छेद पर जोर देते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह जरूर है और इसीलिये स्वाधीनता शब्दका व्यवहार किया गया है कि यह खास तौरसे ब्रिटेनके साथ साम्राज्यवादी सम्बन्ध तोड़ना चाहता है. अगर इङ्गलैण्डमें साम्राज्यवाद बरकरार रहता है तो हमें इङ्गलैंडसे अवश्य अलग होना चाहिये। क्योंकि जबतक इङ्गलैंडमें साम्राज्य-वाद बना हुआ है तबतक भारत और इङ्गलैंडका सम्बन्ध, किसी न किसी रूपमें साम्राज्यका आधिपत्य कायम रखनेके रूपमें होगा। यह सम्बन्ध चाहे क्षीणसे क्षीण हो जाय और फिर क्रमश राजनैतिक दृष्टिसे चाहे दिखलाई भी न पड़े किन्तु फिर भी इसका शक्तिशाली आर्थिक रूप रहेगा। इसलिये साम्राज्यवादी ब्रिटेन के साथ भारतकी स्वाधीनताका अर्थ, भारतका इङ्गलैण्डसे सम्बन्ध विच्छेद है। व्यक्तिगत तौरसे मैं इङ्गलैण्ड और भारतके सहयोग का स्वागत करूंगा किन्तु उसका आधार साम्राज्यवाद नहीं हो सकता।

(२) संसारकी समस्याओंके साथ भारतकी समस्याका क्या सम्बन्ध है? क्या लीग आफ नेशन्स इस सम्बन्धमें सहा-यक है?

उत्तर—

मेरा खयाल है—यूरोप, भारत, चीन, या अमेरिकाकी प्राय: सब समस्याएं जिनका हमें सामना करना पड़ रहा है, एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और अन्य समस्याओंको बिना सोचे, किसी समस्या पर सोचना या उसे सुलझाना दर असल कठिन है। संसार के विभिन्न भाग आजके जमानेमें असाधारण रूपसे, तेजीसे एक दूसरेसे मिले जा रहे हैं। जो घटनाएं दुनियाके एक भागमें होती हैं, दूसरे भागमें तुरत ही उनकी प्रतिक्रिया या अन्तर-क्रिया होती है। अगर अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध जैसी कोई घटना होती है तो उसका प्रभाव समस्त दुनियापर पड़ता है। अगर कोई आर्थिक संकट आता है—ऐसा महान् आर्थिक संकट पिछले वर्षोंमें आया है, तो उसका प्रभाव सारी दुनियापर पड़ता है। इन बड़ी लहरों या आन्दोलनोंका प्रभाव विश्वपर पड़ता है, ऐसी हालतमें स्पष्ट है कि भारतीय समस्याका अन्य समस्याओंके साथ सम्बन्ध है। जो कुछ भारतमें होता है उसका असर राष्ट्रोंके ब्रिटिश गुट यानी ब्रिटिश साम्राज्य पर पड़ता है और जिसका असर ब्रिटिश साम्राज्य पर पड़ता है, उससे दुनिया प्रभावित होती है, क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद आजकी दुनियाकी राजनीतिमें महत्वपूर्ण तथ्य है। जहां तक भारतका सम्बन्ध है, यह अच्छी तरह जानी हुई बात है कि पिछले सौ वर्षोंमें भारतने ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति पर सर्वाधिक प्रभाव डाला है। नेपोलियनके युगमें भी भारतका महत्व बहुत था गोकि जब आप नेपोलियोनिक आन्दोलनके बारेमें

पढ़ते हैं तो उसका उल्लेख कम मिलता है, लेकिन भारत इसके पीछे था। चाहे क्रिमियन युद्ध हो या मिस्रके अधिकारका सवाल हो, इसकी जड़में भारतीय सवाल है। शायद आपमें से कुछको स्मरण होगा कि प्रथम महा युद्धकी समाप्तिके बाद भी मि० चर्चिल आदि द्वारा बढ़ाया गया मध्य पूर्वीय साम्राज्यका विचार फैला था, जिसकी शुरुआत भारतसे होती थी। सौभाग्यवश वह विचार कार्यरूप धारण नहीं कर सका। उस समय मध्यपूर्वीय भूभाग अंग्रेजोंके कब्जेमें था—परसिया, मेसोपोटामिया, पेलेस्टाइन, अरबका हिस्सा, कुस्तुन्तुनियापर ब्रिटिश अधिकार था। इसलिये मध्यपूर्वीय साम्राज्यका विचार उतना खयाली नहीं है जितना इस समय मालूम होता है। लेकिन यह कार्य रूपमें नहीं आ सका, इसका कारण अनेक घटनाएं हैं। एक तो सोवियट गवर्नमेंट, दूसरे तुर्की और परसियाकी घटनाएं इसका कारण थीं। इसके बाद भी बहुतसे परिवर्तन हुए, फिर भी ब्रिटिश सरकारका उद्देश्य था, भारतको जानेवाले पथ मार्गपर अधिकार रखना, क्योंकि मोटर और हवाई जहाजके विकासके कारण स्थल मार्गका महत्व बढ़ा। मोसलके प्रश्नपर तुर्की और इङ्गलैण्डमें झगड़ा हो जानेकी परिस्थिति पैदा हो गयी थी, इसका प्रधान कारण यही था कि मोसलका भारतके स्थल-मार्गमें विशेष स्थान है।

इसलिये अनेक दृष्टिकोणोंसे भारतका प्रश्न दुनियाकी समस्याओंपर बहुत अधिक असर डालता है।

लीग आफ नेशन्सके सम्बन्धमें यही कहा जा सकता है कि अगर इसके सामने भारतीय दृष्टिकोण रखा जाय तो वह भले ही सहायक हो, किंतु अभीतक लीग आफ नेशन्समें भारतके उपस्थित होनेके सिवा और कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं है। भारतके नामधारी प्रतिनिधि दर असल वहां ब्रिटिश सरकारका दृष्टिकोण ही उपस्थित करते हैं। आप कह सकते हैं कि वहां भारत अपना प्रतिनिधित्व नहीं करता बल्कि इस प्रकार ब्रिटिश सरकारको अतिरिक्त प्रतिनिधित्व मिल जाता है। भारतका प्रतिनिधित्व सचमुच हो तो भले ही कुछ भलाई हो सके किन्तु वास्तविकता यह है कि राष्ट्र संघ वर्तमान स्थिति कायम रखनेके लिये ही बनाया गया है, और भारतीय अपनी वर्तमान स्थिति बदलना चाहते हैं, इसलिये अगर भारतकी तरफसे कोई खास बात कही जायगी तो उसका यह कह कर विरोध किया जायगा कि यह ब्रिटिश साम्राज्यकी आन्तरिक नीतिमें दस्तन्दाजी करना है।

(३) साम्प्रदायिक समस्यामें आर्थिक अवस्थाका हाथ कहां तक है ?

उत्तर—

इस प्रश्नका गठन शायद ठीक नहीं हुआ है, कुछ हद्तक इसके लिये मैं जिम्मेदार हूं। इस मानेमें कि साम्प्रदायिक समस्याका प्रधान आधार आर्थिक नहीं है, इसका आर्थिक आधार भी है, जिसका इसपर कभी-कभी असर पड़ता है; किन्तु इसका मुख्य कारण राजनैतिक है। इसका कारण धर्म नहीं है।

धार्मिक युद्ध भावना या Antagonism के साथ साम्प्रदायिक समस्याका बहुत कम सम्बन्ध रहा है। साम्प्रदायिक समस्याका धर्मके साथ इतना ही सम्बन्ध रहा है कि पिछले वर्षोंमें जुलूस आदिको लेकर मुठभेड़ हो गयी है और कुछ सिर फूट गये हैं।

लेकिन वर्तमान साम्प्रदायिक समस्या धार्मिक नहीं है, गोकि कभी-कभी यह धार्मिक भावना उकसा देती है और यह मुश्किल है। लेकिन दर असल यह ऊंची मध्यम श्रेणीका राजनैतिक सवाल है, यह सवाल ब्रिटिश सरकारकी राष्ट्रीय आन्दोलनको कमजोर करनेकी नीतिके कारण उठ खड़ा हुआ है, दूसरा कारण भारतको जो राजनैतिक अधिकार मिलनेवाला है, ऊंची श्रेणी वाले उसमें भाग बटवारा चाहते हैं। इसका आर्थिक रूप यह है कि मुसलमान हिन्दुओंकी अपेक्षा गरीब हैं, कहीं कहीं कर्ज देनेवाला हिन्दू और कर्ज लेनेवाला मुसलमान होता है, कहीं कहीं जमींदार हिन्दू है और रियाया मुसलमान है, हिन्दू रियाया भी है और हिन्दू ही जन संख्यामें अधिक हैं। कभी कभी होता है कि महाजन और लेनदार जमींदार और रैयतमें झगड़ा है, लेकिन पत्रोंमें यह साम्प्रदायिक झगड़ेके रूपमें छपता है। दर असल यह साम्प्रदायिक समस्या ऊंची श्रेणीके हिन्दू मुसलमानोंका नये विधानके अनुसार मिलनेवाले काम और अधिकारके लिये झगड़ा है। इसका सर्वसाधारण पर असर नहीं पड़ता। एक भी साम्प्रदायिक मांगका आधार आर्थिक नहीं रहा है और न किसी भी मांगका जन साधारणके साथ कोई सम्बन्ध रहा है अगर आप

साम्प्रदायिक मांगों पर विचार करें तो आप देखेंगे कि वे सिर्फ धारा सभाओंकी सीटों और भविष्यमें मिलनेवाले कामोंका उल्लेख करते हैं।

(४) बंगाल और सीमा प्रान्तकी स्थिति ठीक करनेके लिये कौनसे अन्य तरीके आप व्यवहारमें लायेंगे ?

उत्तर ...

संक्षेपमें अन्य तरीके जो मैं सोचता हूँ समझाने बुझानेके हैं और कुछ हदतक आर्थिक अवस्था उन्नत करनेके हैं। सीमा प्रान्तवालोंकी प्रधान कठिनाई वस्तुओंकी कमी है। वे सख्त पहाड़ी देशके रहनेवाले हैं, वे वहांसे भोजन और लूटके लिये आते हैं। व्यक्तिगत तौरसे मैं नहीं सोचता कि फ्रांटियरका मामला बहुत मुश्किल है। अगर ठीक और दोस्ताना कदम बढ़ाया जाय तो मेरा खयाल है इसका समाधान सहज ही हो जाना चाहिये। मेरी अपनी धारणा है कि ऐसी ही समस्या यही नहीं ऐसी ही समस्याका सामना उन्नीसवीं सदीमें जारकी सरकारको करना पड़ा था क्योंकि रूसका सीमान्त बहुत करीब था और लगभग ऐसे ही लोगोंसे उसका पाला पड़ा था। जहां तक मैं जानता हूँ उन्हें किसी महान् कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ा। सौ वर्षोंमें ब्रिटिश सरकारको जो कठिनाइयां उठानी पड़ीं वे उसे नहीं उठानी पड़ीं। एक बात साफ है कि ब्रिटिश सरकारकी सीमा प्रांतीय नीति बिलकुल असफल रही। अगर वे युगोंतक चेष्टा करनेके बाद भी इस समस्याको सुलझानेमें असफल रहे, अगर साल दर साल

सैनिक अभियान और हत्या-काण्ड तथा बमबाजोंके बाद भी वे असफल रहे तो मानना होगा, उनकी नीति ही गलत है। जारकी सरकारको उन कठिनाइयोंका सामना नहीं करना पड़ा, जिनका ब्रिटिश सरकारको करना पड़ा, उसका कारण जहां तक मैं समझता हूँ यह है कि जारकी सरकारने फ्रांटियरके लोगोंके लिये स्वाभाविक शान्तिपूर्ण जीवन बसर करना संभव कर दिया, और इस बातकी कोशिश की कि वे देशमें बस जांये। मैं यह भूमिका सुझावके तौरपर रख रहा हूँ, मैं यह निश्चित रूपसे नहीं कह सकता कि ब्रिटिश सरकारको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा, जारकी सरकारको उनका सामना क्यों नहीं करना पड़ा। सीमा प्रान्तकी जन संख्या बहुत नहीं है, ऐसी हालतमें उनकी आर्थिक अवस्था सुधारना मुश्किल नहीं होना चाहिये था। लेकिन इस कार्यके लिये जो कदम बढ़ाया जाय दोस्ताना होना चाहिये। इटलीने अबसीनियामें जैसा कदम बढ़ाया वैसा नहीं। सीमान्तके लोग बहुत बहादुर हैं, वे इसकी ज्यादा पर्वा नहीं करते कि जिन्दा रहें या मर जांय, वे स्वाधीनता-प्रेमी लोग हैं, जैसे कि अक्सर पहाड़ी लोग हुआ करते हैं, ब्रिटिश सरकार उन्हें अपने अधीन नहीं कर सकी, समय समय पर वह उन्हें जीत भले ही ले पर उन्हें अपने अधीन नहीं कर सकती।

दोस्ताना प्रयत्नके सम्बन्धमें कुछ कहना चाहता हूँ। कुछ वर्ष पहले सीमाप्रान्त वालोंने महात्माजीको निमन्त्रण दिया था, वे गये भी पर उन्होंने सीमा पार नहीं की और एकदम उनके पास

नहीं पहुंच सके। वे दोनों सीमाओंमें काफी जनप्रिय हैं और उन्हें बराबर निमन्त्रण मिलते हैं किन्तु सरकार उन्हें उनसे मिलने के लिये नहीं जाने देना चाहती। वे सरकारी आज्ञा भंगकर जाना नहीं चाहते, क्योंकि वे इस प्रश्नपर संघर्ष नहीं चाहते, इसलिये वे जब जाना चाहते हैं, वायसराय या भारत सरकारसे कहते हैं — मुझे वहांसे बुलावा आया है और मैं जाना चाहता हूं और उन्हें बराबर एक ही जवाब मिलता है - "हम बड़े जोरोंसे वहां न जाने की सलाह देते हैं।" महात्माजीके बाद महान् फ्रांटियर नेता अब्दुल गफ्फार खांका वहां काफी प्रभाव है और वे काफी जन प्रिय हैं। वे इस क्षेत्रमें बहुत महत्व रखते हैं और यही कारण है कि सरकार उन्हें पसन्द नहीं करती। और वे अपना समय जेल में बितानेको मजबूर होते हैं इस समय वे जेलमें हैं। दो तीन साल बिना मुकदमा चलाये जेलमें रखनेके बाद वे पिछले साल जेलसे रिहा किये गये थे, पर यह रिहाई तीन महीने ही रही, और वे फिर दो सालके लिये जेल भेज दिये गये। खान साहब कांग्रेस कार्यकारिणीके मेम्बर हैं, वे सीमान्तमें ही नहीं समस्त भारतमें लोकप्रिय हैं। आप उनके नामसे समझ सकते हैं कि वे हिन्दू नहीं मुसलमान हैं। वे भारतकी जनताके महान् नेता हैं। इसलिये मैं सोचता हूँ कि अगर महात्मा गांधी और खान अब्दुल गफ्फार खां सीमान्त जांय तो उनका अपूर्व स्वागत होगा, वे वहां सीमान्तकी समस्याओंपर बातचीत कर सकते हैं। मैं नहीं समझता यह समस्या सुलझाना मुश्किल है। वहां जानेसे ही मुश्किलोंका

अन्त नहीं हो जायगा, किन्तु शान्ति और सुव्यवस्थाका रास्ता निकल जायगा और धीरे-धीरे सब मुश्किल आसान हो जायगी।

बंगालके आतंकवादको जो महत्व और विज्ञापन मिला है, वह बहुत ज्यादा है। बंगालमें आतंकवाद था, और अब भी एक हदतक है इससे इन्कार नहीं किया जा सकता लेकिन जब आप इस प्रश्नपर विचार करते हैं तो भारत जैसे देशमें और बङ्गाल जैसे बड़े प्रान्तमें, देखेंगे कि दो तीन सालमें एक या दो आतंकवादी कार्य हुए हैं, गोकि यह निन्दनीय है लेकिन यह इतना भीषण नहीं है। इस मामलेमें हमें घबराना नहीं चाहिये, यही बात मैं सर्व प्रथम कहना चाहता हूँ। जहां तक मैं जानता हूँ, इस समय बङ्गालमें कोई संगठित आतंकवादी दल नहीं है, गोकि जेलमें रहनेके कारण मुझे कोई प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है। पहले थे, किन्तु इस समय, बङ्गाल या भारतमें कहीं नहीं हैं। इससे मेरा यह मतलब नहीं है कि बङ्गाल या अन्य कहींके लोग हिंसात्मक तरीकोंमें विश्वास नहीं करते, बहुतसे हैं जो हिंसात्मक तरीकों और क्रांतिमें विश्वास करते हैं, लेकिन मैं सोचता हूं जो हिंसात्मक तरीकोंमें विश्वास भी करते हैं, वे इस वक्त उनका प्रयोग नहीं करते। पुराने आतंकवादी या उनमें से अधिकांश सत्तासे लड़नेके लिये सशस्त्र हिंसा आवश्यक समझते हैं और उसकी संभाव्य आवश्यकता पर भी सोचते हैं, पर वे बम फेंकने या

गोली मारनेकी बात नहीं सोचते। महात्मा गांधीके शान्तिपूर्ण आन्दोलनके कारण वे उस पथसे विरत हो गये। और जो बाकी रह गये वे भी इससे दूर हट गये क्योंकि आप जानते हैं, आतंक-वाद राजनैतिक आन्दोलनका बिलकुल शिशुकाल है। जब राष्ट्रीय आन्दोलन छिड़ता है तब उसके पीछे दो भावनाएं होती हैं निराशा और निसहायावस्था, यह भावना उत्तेजित युवकोंको आतंकवादी कामोंकी ओर ले जाती है, लेकिन जब आन्दोलनका विकाश होता है और वह बढ़ता है तब तो जनताकी शक्ति संग-ठित कार्यकी तरफ, जनकार्यकी ओर चली जाती है। यही भारत में हुआ और आतंकवादी आन्दोलन शेष हो गया किन्तु बङ्गालमें जिस प्रकारका भीषण दमन हो रहा है वह लोगोंको उत्तेजित करता है। मसलन, किसी शहरमें या किसीके मित्रके साथ कोई घटना घटनेसे कोई बेहद उत्तेजित हो सकता है। वहाँ पर भीषण काण्ड हो रहे हैं, ऐसी हालतमें एक या दो व्यक्ति, जिसने ये कार्य किये उसके खिलाफ कार्य करने पर उतारू हो सकते हैं। इससे संगठित आतंकवादसे कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन पिछले दो वर्षोंसे ऐसी घटना भी नहीं घटीं। प्रसिद्ध आतंकवादियोंको पुलिस लगभग जानती ही है। बहुतसे नजरबन्द कर दिये गये, बहुतोंको जेल भेज दिया गया, बहुतोंको फांसी दे दी गयी, फिर भी बहुतसे अभी भी हैं। दो तीन साल पहले उनमें एकके साथ मेरी मुलाकात हुई थी। आगत सज्जन पुराने जमानेके आतंकवादी आन्दोलनमें प्रधान थे, वे मेरे पास आये और बोले; मेरी यह

पक्की राय है कि आतंकवादके कार्य ठीक नहीं हैं। मैं अब वे कार्य नहीं करना चाहता। मैं अपने साथियोंसे कह रहा हूं कि वे अब ये कार्य न करें। लेकिन सवाल यह है कि अब मैं क्या करूं? पुलिस मेरे पीछे पड़ी है, मैं जगह जगह छिपता फिरता हूं। मैं जानता हूं जब भी पकड़ा जाऊँगा, फांसीपर लटका दिया जाऊंगा, लेकिन मैं यह नहीं चाहता, मैं जब पकड़ लिया जाऊंगा, आत्म-रक्षामें गोली चलाऊंगा। अक्सर ऐसा ही होता है, पुराने आतङ्क-वादी फांसी पर लटकनेकी अपेक्षा मार कर मरना पसन्द करते हैं।

मेरे कहनेका तात्पर्य यही है कि आतङ्कवादी आन्दोलन आक्रमणात्मक रूपमें नहीं चल रहा है; कोई उत्तेजनावश, या फँस जाने पर आत्म-रक्षाके लिये हिंसात्मक कार्य भले ही करे किन्तु आतङ्कवादके दिन बीत चुके, इन इक्के दुक्के कार्योंके भी कारण होते हैं, पर मार्शल ला आदिसे उनके दमनका प्रयत्न करना बिलकुल व्यर्थ है। साधारण सैनिक-मस्तिष्क किसी भी समस्याका हल मार्शललामें सोच सकता है और दुर्भाग्यवश भारतमें साधारण नागरिक मस्तिष्क, ज्यादातर सैनिकरूपमें चलता है। आतङ्कवादी अपने ही जीवनसे खेलता है, आतङ्क-पूर्ण कार्य करते हुए वह किसी भी समय अपनी जानसे हाथ धो सकता है। उदाहरणके लिये कोई व्यक्ति भीड़से भरे हालमें जाता है और किसीको गोली मारता, ऐसी हालतमें साफ है कि उसने अपने जीवनका मोह छोड़ दिया। मैं नहीं समझता कि जो

व्यक्ति अपना जीवन देनेके लिये तैयार है, किसी तरह मिलिटरी तरीकोंसे डराया नहीं जा सकता। अपना कार्य करते समय वह जानता है कि उसे मरना ही होगा, अक्सर वह जहर लिये रहता है और काम करनेके बाद खुद जहर खा लेता है।

(५) क्या भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनको लन्दनमें एक ऐसी एजेंसी नहीं रखनी चाहिये जो ठीक समाचार दे सके?

उत्तर—

मेरी समझसे यह बहुत ही आवश्यक वांछनीय कार्य है, सिद्धांतरूपमें इस विषयमें कोई आपत्ति नहीं कर सकता। आपको स्मरण रखना चाहिये कि पिछले छ वर्षोंमें भारतको असाधारण अवस्थासे गुजरना पड़ा। इन छ वर्षोंमें चार साल कांग्रेस गैर कानूनी संस्था थी। हम नहीं जानते थे कि कब हम गैर कानूनी करार दे दिये जांयगे, कब हमारे फण्ड जब्त कर लिये जांयगे, कब हमारी सम्पत्ति कुर्क कर ली जायगी, कब हमारी आफिसों पर सरकारी ताले पड़ जांयगे। इन सबने विदेशमें एजेंसीको सुचारु रूपसे चलाना जरा कठिन बना दिया था फिर भी यह कार्य वांछनीय है और मैं लन्दनमें सूचना दफ्तरकी स्थापना पसन्द करता हूँ, यह सिर्फ लन्दनमें ही नहीं यूरोपके अन्य भागोंमें भी खुलने चाहिये।

भारतीय राष्ट्रीय सेना

—— :o: ——

एक विषय मुझे कुछ समयसे कष्ट पहुंचा रहा था और परेशान कर रहा था, लेकिन अभी तक मैंने उसका उल्लेख नहीं किया था क्योंकि मेरे द्वारा उसका उल्लेख किया जाना, किसी क्षेत्र विशेषमें गलत समझा जा सकता था। लेकिन अब चूंकि युद्ध शेष हो गया है, अब इस विषय पर चुप रहनेका वैसा कोई कारण नहीं है। इसका सम्बन्ध बीस हजार या अधिक तथाकथित भारतीय राष्ट्रीय सेनाके कैदियोंसे है यह राष्ट्रीय सेना वर्मा और मलायामें गठित की गयी थी तीन साल पहिले मेरी राय थी और अब भी है कि इस सेनाके नेतागण तथा अन्य, गलत तरहसे परिचालित हुए थे और वे जापानके दुर्भाग्यपूर्ण साथके बड़े परिणामों पर पहुंचनेमें असमर्थ थे।

तीन साल पहले मुझसे कलकत्तेमें सवाल किया गया कि यदि सुभाष बोस भारतको आजाद करनेके नाम पर भारतमें प्रवेश करने वाली सेनाका नेतृत्व करें तो मैं क्या करूंगा. मैंने जवाब

दिया, मैं इसका प्रतिरोध करनेमें नहीं हिचकूंगा, गो कि मुझे इसमें जरा भी शक नहीं है कि श्री सुभाष और उनके भारतीय साथी तथा अनुगामी भारतकी स्वाधीनताकी कामनासे अनुप्राणित हुए हैं और किसी भी तरहसे वे जापानके हाथके कठपुतले भी नहीं हैं, फिर भी उन्होंने अपने आपको गलत पक्षकी तरफ कर लिया है और जापानके अनुकूल होकर काम कर रहे हैं। कोई भी व्यक्ति इस तरहसे भारतमें प्रवेश नहीं कर सकता। इसलिये भीतरी मतलब जो भी हो, उनका भारतमें और भारतके बाहर प्रतिरोध करना चाहिये।

लेकिन युद्धकी समाप्तिके साथ साथ अवस्था बिल्कुल बदल गयी और अब भारतीय राष्ट्रीय सेनाके बहुतसे अफसर और सैनिक कैदी हैं और कुछको तो दण्ड भी मिल चुका है।

गो कि उपयुक्त सूचनाका अभाव है किन्तु यह विश्वसनीय सूत्रों द्वारा कहा गया है कि किलों और कैदखानोंमें उनके साथ बहुत बुरा व्यवहार किया जा रहा है। बहुतसे तो मौतकी छाया में रहते हैं। कठोर सैनिक अनुशासनके कार्यमें मैं अंग्रेजोंकी शिकायत नहीं करना चाहता, वे विद्रोहियोंके साथ चाहे जैसा व्यवहार करनेके औचित्यकी वकालत कर सकते हैं। लेकिन एक भारतीयकी हैसियतसे, और इस मामलेमें, हर दृष्टिकोण, दल या गुटके भारतीयकी रायका प्रतिनिधित्व करने वालेकी हैसियतसे मैं कह देना चाहता हूं कि अगर ये अफसर और सैनिक दण्ड

देशके पक्षमें हमसे छीन लिये गये तो यह महान दुखदायी कार्य होगा।

भूतकालमें उनकी जो भी भावनाएँ हों, और वे बहुत गंभीर थीं, लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं है कि वह जवानोंका एक उत्तम दल था, उनके अफसर और सैनिक उत्तम थे और उनका प्रधान उद्देश्य, भारतकी स्वाधीनताका प्रेम था। किसी भी वक्त उनके साथ सख्तीका व्यवहार करना गलत है, और इस वक्त — जब कि कहा जाता है, भारतमें महान परिवर्तन होने जा रहे हैं, यह भारी गलती होगी—जिसके परिणाम बहुत दूर व्यापी होंगे, अगर उनके साथ मामूली विद्रोहियों जैसा व्यवहार किया गया। उनको सजा देना दरअसल सारे भारतीयोंको सजा देना होगा जो करोड़ों हृदयोंमें गहरा घाव कर देगा। सौभाग्यवश इस मामले में साम्प्रदायिकता नहीं है, अफसर और सैनिकोंमें हिन्दू, मुसलमान, सिख सभी हैं।

जो कुछ समाचार मुझे मिले हैं उनसे मालूम होता है कि जब सिंगापुर जापानियोंसे घिर गया और ज्यादातर ब्रिटिश आर्मी बोटोंसे चली गयी तब सिंगापुरमें भारतीय राष्ट्रीय सेनाका उद्भव हुआ। मलायामें भारतीय आर्मी बिलकुल जापानियोंकी दयाके भरोसे रह गयी थी।

इस समय ब्रिटिश इण्डियन आर्मीके जुनियर अफसर सरदार मोहन सिंह जापानी कमाण्डके सम्पर्कमें आये और भारतीय फौजोंके अवशिष्ट सैनिकोंको लेकर, जिनकी संख्या लगभग ७

हजार थी, एक सेना संगठित की। गो कि मोहन सिंहने किसी हद तक जापानियोंके साथ सहयोग किया, फिर भी उन्होंने जापानियोंको कई तरीकोंसे रोका और उनकी कठपुतली बननेसे इनकार कर दिया। कई महीनों बाद, मामला बहुत संगीन हो गया और मोहन सिंह जो बहुत होशियार और काबिल संगठन कर्ता साबित हुए, जापानियों द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये।

इस उदाहरणसे राष्ट्रीय सेनाकी विचित्र और असाधारण स्थितिका आभास मिलता है और मालूम होता है कि किस प्रकार इस सेनाके अफसर, जापानियोंके साम्राज्यवादी स्वार्थोंके साधन में भारतीय राष्ट्रीय सेनाका उपयोग न हो इस बातकी बराबर चेष्टा करते थे। वे अपने प्रयत्नमें कहां तक सफल हुए मैं नहीं जानता। लेकिन इससे उनका आन्तरिक उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है और यही महत्वपूर्ण है।

इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए, मैं तहे दिलसे विश्वास करना चाहता हूं कि इन युद्ध बन्दियोंके सम्बन्धमें ऐसा कुछ नहीं किया जायगा जिससे कि भारतके दिल और दिमागमें एक नयी वेदना उत्पन्न हो। लड़ाईकी समाप्तिके साथ साथ युद्धावस्था भी चली गयी और इस मामलेमें अन्य विस्तृत विचारोंको प्रधानता मिलनी चाहिये।

भारतीय राष्ट्रीय सेनाके साथ व्यवहारके सम्बन्धमें भारत सरकारके कम्युनिकका उल्लेख करते हुए पण्डित जवाहरलालजीने कहा ;—मुझे प्रसन्नता है कि मलायामें १९४२ में स्थापित भार-

तीय राष्ट्रीय सेनाके बन्दियोंके साथ कैसा व्यवहार किया जायगा, इस सम्बन्धमें भारत सरकारने विज्ञप्ति प्रकाशित की है। अबतक इस विषय पर जो पर्दा पड़ा हुआ था, वह उठा लिया गया, किन्तु तथ्य अभी तक छिपे हुए हैं। मैं चाहता हूं वे तथ्य या उनमेंसे अधिकांश जनताके सामने पेश किये जाने चाहिये। मालूम होना चाहिये कि भारतकी जेलों, किलों, कैम्पोंमें इस सेनाके अफसरों और कैदियोंकी संख्या कितनी है? अभी तक किसीके भी खिलाफ क्या कार्यवाही की गयी है और किन मौलिक परिस्थितियोंमें इस सेनाकी स्थापना हुई थी।

ऐसा कहा गया है, किस अधिकारसे यह मैं नहीं जानता कि वे लोग वहां अपनी मर्जीसे इधर-उधर जानेके लिये छोड़ दिये गये थे। इस सम्बन्धमें बहुतसे कानूनी सवाल भी पैदा होते हैं और उन पर भी विचार होना चाहिये और उनके द्वारा होना चाहिये जो इस तरहके कानूनोंके विशेषज्ञ हैं। यह कहा जा सकता है कि इस तरहकी कोई भी सेना इस समयकी परिस्थितियोंमें संगठित और विदेशी शक्तियों द्वारा स्वतन्त्र सेनाके रूपमें स्वीकृत, युद्धरत सेनाकी स्थिति पा लेती है, और इसके बन्दियोंके साथ साधारण युद्ध-बन्दियोंका-सा व्यवहार होना चाहिये। मैं इस तरहके कानूनका विशेषज्ञ नहीं हूं कि अपनी राय दे सकूं, लेकिन इस विषयमें निश्चिन्त हूं कि यह विषय सहृदिलसे विचार करने योग्य है।

फिर भी मुख्य बात, कानूनी पहलूकी नहीं है। दर-अस्ल यह प्रश्नको देखनेके पहलू पर निर्भर करता है। क्या यह पूर्ण अंग्रेजी या अभारतीय पहलू है या इस प्रश्नका भारतीय पहलू भी है? मैं अंग्रेजी पहलूको समझ सकता हूं मगर भारतीय पहलूको सिर्फ समझ ही नहीं सकता बल्कि गहरे ढंगसे अनुभव भी कर सकता हूं। मैं समझता हूं यह हमारा भारतीय पहलू सिर्फ नागरिक जनतामें ही नहीं बल्कि ब्रिटिश भारतीय सेनाके व्यक्तियोंमें भी समझा और अनुभव किया जाता है।

यह हम सबके लिये प्रसन्नताकी बात है कि लड़ाई बन्द हो गयी और अब समस्याका सामना, युद्धकी स्थितिमें नहीं बल्कि शान्तिकी स्थितिमें किया जाना चाहिये। कठिन सजाके जो राजनैतिक परिणाम होंगे उन पर भी अवश्य विचार करना चाहिये, और इसमें कोई शक नहीं कि ये राजनैतिक परिणाम काफी गहरे और सुदूर व्यापी होंगे। इस विषयमें सम्भव साम्य तुलना फ्रांसके मार्किससे की जा सकती है। जब जर्मनोंने मार्किसोंके साथ विद्रोहियोंके समान व्यवहार करना चाहा, तब पेताकी सरकार और जनरल आइसेन हूवरने जर्मनोंको बहुत ठीक, कड़ी चेतावनी दी कि इनके साथ युद्धरत सेनाका-सा व्यवहार किया जाना चाहिये और इन्हें युद्ध बन्दियोंकी सब सुविधाएं दी जानी चाहिये।

इसमें जरा भी शक नहीं है कि यह भारतीय राष्ट्रीय सेना, नियमित, संगठित, अनुशासित, सुसज्जित सेनाकी तरह काम

करती थी। इस सम्बन्धमें कोई भी भूल नहीं है। यह दुर्भाग्य-पूर्ण था कि उसमें अधिकांश गलत तरीके पर चले गये थे, किन्तु यह बिलकुल न भूलना चाहिये कि जिस पक्षमें वे थे, उसका समर्थन करनेका उनका इरादा या इच्छा न थी, उनका ही उद्देश्य एक ही था और वे उसीसे अनुप्राणित थे - वह था भारतकी स्वाधीनता। इसमें मुझे जरा भी शक नहीं है कि ब्रिटिश भारतीय सेनाके सैनिक और अफसर यह पसन्द करते हैं कि पुराने साथियोंके साथ उदार व्यवहार किया जाय।

मध्यवर्ती सरकार और लीग

लीग जबसे मध्यवर्ती सरकारमें शामिल हुई है, अंग्रेजोंके समर्थनका प्रयास किया है। मैंने एक बार मिस्टर जिन्नाको लिखा कि केन्द्रीय सरकारमें कांग्रेस और लीगके मतभेद बिना वायसरायकी दस्तन्दाजीके आपसमें तय होने चाहिये। मिस्टर जिन्नाने एकदम इस सुझावको रद्द नहीं किया, किन्तु सरकारमें शामिल होनेके बादसे लीग दल अपनेको King's party के रूपमें स्थापित करनेकी चेष्टा कर रहा है। ब्रिटिश सरकार भी अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिये इस स्थितिसे फायदा उठा रही है। इसके सिवा लीग और उच्च ब्रिटिश अफसरोंमें दिमागी मत-साम्य भी है।

मिस्टर जिन्नाने वायसरायको जो पत्र दिया है, उससे प्रगट है कि वह मन्त्रि-मण्डलके १६ मईके प्रस्तावको स्वीकार नहीं करते, ऐसी हालतमें केन्द्रीय सरकारमें लीगी प्रतिनिधियोंके लिये कोई स्थान नहीं रह जाता। गो कि हम उनके विधान परिषदमें

शामिल होनेका स्वागत करते हैं, किन्तु हम यह बात स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि वे आवें या अलग रहें हम आगे बढ़ते जायेंगे। मैं इस विधान परिषदपर फिदा नहीं हूं, लेकिन हमने इसे स्वीकार कर लिया है और हम कार्य करेंगे और इसका पूरा लाभ उठायेंगे। मैं इस विधान परिषदको अन्तिम विधान परिषद नहीं मानता। यह सम्भव हो सकता है कि पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त करनेके बाद भारत, फिर दूसरी विधान परिषद बनावे।

इस विधान परिषदमें सिर्फ एक अच्छाई यह है कि ब्रिटिश शक्ति इसमें प्रत्यक्ष रूपसे उपस्थित नहीं है, गोकि पिछले दरवाजे से अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्वको हम भले ही न रोक सकें। लेकिन हम विधान परिषदमें मामूली बातोंपर झगड़ने नहीं जा रहे हैं, बल्कि हम वहां भारतीय रिपब्लिककी स्थापना करने जा रहे हैं।

पांच महीने तक परिषदको स्थगित करनेके मिस्टर जिन्नाके सुझावके सम्बन्धमें पण्डितजीने कहा, इसका वास्तविक अभिप्राय यह है कि परिषदकी बैठक कभी हो ही नहीं।

मध्यवर्ती केन्द्रीय सरकारमें शामिल होनेपर सरकारके सब मंत्रियोंको लेकर कार्य करनेके सम्बन्धमें हमने जो स्थायी समझौते किये थे वे अवरुद्ध कर दिये गये।

केन्द्रीय सरकारके गठनमें दो आधारभूत सिद्धान्त थे, एक तो सब एक टीमकी भांति कार्य करें दूसरा यह कि मुस्लिम लीग सरकारमें शामिल तभी हो सके जब वह दीर्घ कालीन योजना-

स्वीकार करे। लीगने दोनों ही सिद्धान्त स्वीकार कर लिये, लेकिन अब मुस्लिम लीग कहती है, केन्द्रीय सरकार न तो केबिनेट है और न संयुक्त है और उसके सदस्योंने एक अलग "ब्लाक" बना लिया है। मैंने मि० जिन्नाको लिखा कि केन्द्रीय सरकारमें लीग और कांग्रेसके मतभेद आपसी समझौतोंसे मिटा लिये जांय, वायसरायको बीचमें न डाला जाय. लेकिन अभी तक यह सुझाव अस्वीकृत है।

देशकी राष्ट्रीय शक्तियोंकी मुखालिफतमें लीगने हमेशा ब्रिटिश सरकारका साथ दिया है यही नीति अभी भी चालू है और ब्रिटिश सरकार अपनी स्वार्थ सिद्धिके लिये इसका फायदा उठा रही है।

मि० जिन्नाके वक्तव्यसे साफ है कि लीग सरकारमें काम करनेके लिये शामिल नहीं हुई है बल्कि उसे भय हो गया था कि अगर वह सरकारमें शामिल न हुई तो कमजोर हो जायगी। परिस्थिति बहुत ही संगीन है, फिर भी कांग्रेसके सदस्योंको सरकारमें अवश्य रहना चाहिये, मगर यह नहीं कहा जा सकता कि कबतक।

कांग्रेस सबजेक्ट कमेटी मेरठमें अपने उक्त भाषणके समर्थनमें, पण्डित जवाहरलालजीने वह पत्रव्यवहार प्रकाशित करवा दिया जो मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेके सम्बन्धमें उनमें और वायसरायमें हुआ था। उन पत्रोंका सारांश नीचे दिया जाता है।

४ अक्तूबरको वायसरायने मि० जिन्नाको निम्नाशयका पत्र लिखा—

संयुक्त (Coalition) सरकारमें नीति विषयक प्रधान मामलों का फैसला करना असम्भव है, जब कि संयुक्त सरकारकी एक प्रधान पार्टी प्रस्तावित कार्यवाहीके सख्त खिलाफ हो मेरे वर्तमान साथी और मैं सहमत हूँ कि केबिनेटमें प्रधान साम्प्रदायिक मामलोंका निर्णय वोट द्वारा करना घातक होगा। मध्यवर्ती सरकारकी कार्यकारिता और सम्मान इस बातपर निर्भर करेगा कि केबिनेटकी बैठकोंके पहले मित्रतापूर्ण विचार विनिमय द्वारा इस तरहके मतभेदोंको मिटा लिया जाय। संयुक्त सरकार अगर काम करती है तो वह आपसी समझौतेके आधारपर ही करत है, अन्यथा कार्य नहीं करती।

चूंकि केबिनेटमें भाग लेनेका आधार १६ मईका वक्तव्य स्वीकार किया जाना है, मैं मान लेता हूं कि लीग कौंसिल अपने बम्बईके प्रस्तावपर पुनर्विचार करनेके लिये अति शीघ्र बैठक बुलायगी।

वायसरायको लिखे गये पण्डित जवाहरलाल नेहरूके १४ अक्तूबरके पत्रका सारांश।

यह हमारे लिये महत्वपूर्ण है कि हम ठीक ठीक समझ लें कि (मि० जिन्ना) कैसे मध्यवर्ती सरकारमें शामिल होना चाहते हैं, और वे क्या शर्तें हैं जिनका वे उल्लेख करते हैं। अखबारों और खासकर मुस्लिम लीगके प्रमुख पत्रमें जो वक्तव्य निकल रहे

हैं वे बेहद विशृंखल हैं। हमारा पिछला अनुभव हमें उत्साहित नहीं करता कि हम स्पष्ट और भ्रांतिपूर्ण वाक्यावलियोंपर भरोसा करें। इससे बादमें भ्रान्त धारणाएं पैदा होती हैं और अनिश्चित तर्क वितर्क खड़ा होता है। इसलिए इस मामलेमें सावधान होना आवश्यक है और यह जानना जरूरी है कि दर असल हम कहां हैं ?

पिछले अगस्तके आपके ब्राडकास्टकी शर्तोंको हम जानते हैं, और आपने ४ अक्तूबरको मि० जिन्नाको जो खत लिखा है उसे देखा है, लेकिन १२ अक्तूबरको आपने जो पत्र उन्हें लिखा उसे मैंने नहीं देखा। मैं विश्वास करता हूँ कि १२ तारीखके पत्रमें ऐसी कोई बात नहीं होगी जो अगस्तके ब्राडकास्ट या ४ अक्तूबरके पत्रमें नहीं है। अगर ऐसा है तो हमें इसकी सूचना मिलनी चाहिये ताकि हम जान सकें कि वास्तविक स्थिति क्या है ?

जैसा कि मैं समझता हूँ—अगस्तके ब्राडकास्टमें आपने जो आफर लीगको दिया था वह यह था कि मध्यवर्ती सरकारमें पांच स्थान लीग द्वारा लिए जा सकते हैं। आपने अपने ४ अक्तूबर के पत्रमें यह स्पष्ट कर दिया कि संयुक्त सरकारको एक टीमकी भांति कार्य करना ही चाहिये, यह दो प्रतिद्वन्दी दलोंका एक साथ होना नहीं है जो एक उद्देश्यके लिये सहयोग न करते हों। आपने अपने पत्रमें आगे लिखा है कि केबिनेटमें भाग लेनेका मतलब, १६ मईके मन्त्रिमण्डल मिशनके वक्तव्यको स्वीकार करना है।

हमें यह अधिक उत्तम मालूम होता है कि कोई भी संभव गलत फहमी हो तो इस अवस्थामें दूर कर दी जाय ताकि वह भविष्यमें हमारे रास्तेमें न आवे। हमें एक कठिन स्थितिका सामना करना है। जहां तक हमारा सवाल है, हम एक टीमकी तरह सहयोग पूर्वक काम करनेकी हर प्रकारसे चेष्टा करेंगे। पिछले ६ सप्ताहोंमें हमने काफी सफलतापूर्वक यही किया है और उससे हमें हमारे काममें भी सुविधा हुई है। हमारा लगभग हर फैसला, उसका सम्बन्ध किसी भी विभागसे क्यों न रहा हो संयुक्त विचार और समझौते द्वारा हुआ है।

इसने हमें एक हद तक विभिन्न विभागोंके कामोंके लिये जिम्मेदार बना दिया और किसी एक खास विभागका बोझा भी दूसरोंने बटाया। हम इसी तरह काम करना चाहते हैं। मुस्लिम लीगके सदस्य हमारे विचारसे कहां तक सहमत हैं मैं नहीं जानता दूसरा कोई भी तरीका विभिन्नता पैदा करेगा और काममें देर करेगा। किसी भी हालतमें हम समझते हैं कि हमारे लिये यह जानना जरूरी है कि १३ अक्टूबरके पत्रमें मिस्टर जिन्नाने किन शर्तोंका उल्लेख किया है। अगर अगस्तके ब्राडकास्ट या ४ अक्टूबरके पत्रसे वे शर्तें भिन्न हैं या उनमें और कोई शर्तें जोड़ी जाय तो उनकी सूचना हमें मिलनी चाहिये।

इस पत्रके जवाबमें वायसरायने १५ अक्तूबरको पण्डित जवाहरलाल नेहरूको यह पत्र लिखा—

कलके पत्रके लिये धन्यवाद, मैंने १२ अक्तूबरको मि० जिन्नाको जो पत्र दिया, उसकी नकल पत्रके साथ है। अगस्तके ब्राडकास्ट, ४ अक्तूबरके पत्रके परे कोई भी सफाई या आश्वासन मि० जिन्नाको नहीं दिया गया।

पण्डित जवाहरलालने २३ अक्तूबरको वायसरायको जो पत्र लिखा, उसका सारांश

मेरे साथ आपका जो पत्र व्यवहार हुआ उसमें और आपने मुझे और मि० जिन्नाको जो पत्र लिखा उसमें यह साफ कर दिया गया था कि मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेका अर्थ १६ मईको प्रकाशित मन्त्रि मिशनके वक्तव्यकी दीर्घकालीन योजनाको स्वीकार किया जाना है। विभिन्न पत्रोंमें इस विषयका जो स्पष्ट उल्लेख हुआ है, उसे उद्धृत कर मैं आपको व्यर्थ कष्ट नहीं देना चाहता। उस समय यह ध्यान दिलाया गया था कि चूंकि लीगने अस्वीकृतिका प्रस्ताव पास कर रखा है इसलिये, इस प्रकारका निर्णय करनेके लिये लीगकी बैठक बुलाना [illegible] फिर भी यह साफ कर दिया गया था कि लीगकी कार्यकारिणी खुद ही इस योजनाको स्वीकार किये जानेकी सिफारिश करेगी और इसके बाद ही लीग इसे स्वीकार कर लेगी। इसी आधार पर हम आगे बढ़े थे

इसलिये हम इन दो [illegible] का खुलासा चाहते हैं।

(१) १६ मईके वक्तव्यके अनुसार लीगका दीर्घ कालीन योजना स्वीकार किये जानेमें, सिर्फ कौंसिल आफ लीगकी

Formal स्वीकृति भर बाकी है, जिसकी बैठक जितनी जल्दी हो बुलायी जायगी, कहा गया है, इसलिए उसकी तारीख निश्चित होनी चाहिये।

(२) मध्यवर्ती सरकारके सम्बन्धमें लीगका रूख खासकर राज गजनफर अली खां और मि० लियाकत अली खांके हालके भाषणसे व्यक्त करते हैं या नहीं ?

अगर यह स्पष्टीकरण सन्तोषजनक है तो दूसरा काम विभागों का वितरण है, लेकिन पहले कदमके पहले, दूसरा कदम नहीं उठ सकता, क्योंकि यह पहलेपर निर्भर करता है और पहला कदम ही दूसरेको नियंत्रित करता है।

पिछले अनुभवसे आप समझ सकेंगे कि यह स्पष्टीकरण और सावधानी भावी दिक्कतोंको दूर करनेके लिये आवश्यक है। यह और भी आवश्यक है, इसलिये है कि मुस्लिम लीग कांग्रेससे समझौता करनेके लिये सरकारमें शामिल नहीं हो रही है। फिर भी हम उसके शामिल होनेका स्वागत करते हैं, किन्तु इस प्रवेश की कीमत मामूली है, बल्कि यह प्रवेश सबके लिये हानिदायक हो भी सकता है, अगर दरअसल यह भीतरी और बाहिरी संघर्षकी भूमिका हो।

वायसरायने २३ अक्तूबरको पण्डित जवाहरलाल नेहरूको जो पत्र लिखा उसका सारांश—

मैंने मि० जिन्नासे आज मुलाकात की और उनसे साफ कह दिया कि मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेकी यह शर्त

है कि वह केबिनेट मिशनके २५ मईके वक्तव्यकी योजनाको स्वीकार करे। और यह भी साफ कह दिया कि वे इसे माननेके लिये अपनी कौंसिलको यथाशीघ्र बुलावें।

जैसा कि मैंने आपसे कहा, मि० जिन्नाने मुझे विश्वास दिलाया है कि मुस्लिम लीग मध्यवर्ती सरकार और विधान परिषद्में सहयोग करनेके इरादेसे आ रही है। पूर्व बङ्गालके दंगोंके लिए उन्हें आपकी तरह ही अफसोस है और वे आपकी तरह ही उनकी निन्दा करते हैं।

एटली-नेहरू

एक कदम आगे बढ़ा कर, फिर दूसरा कदम आगे न बढ़ा कर पीछे रखनेकी जो पुरानी साम्राज्य नीति है उसीके अनुसार सोशलिस्ट नामधारी ब्रिटिश सरकार आचरण कर रही है। राष्ट्रीय कांग्रेस और साम्प्रदायिक लीगकी एकता कायम करनेके नाम पर, भारतीय मामलेमें अपनी बन्दर बांट मनोवृत्ति चरितार्थ करनेके लिए कांग्रेस और लीगके नेताओंको लन्दन बुलाया गया था। लीगने अपने आश्रय दाताओंके निमंत्रणको प्रसन्न चित्तसे स्वीकार कर लिया, किन्तु कांग्रेसका कहना था कि भारतकी समस्याका निर्णय भारतीय, भारतमें करेंगे और जिन मामलोंके बारेमें निर्णय हो चुके हैं, उनपर फिरसे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है तथा ए० बी० सी० विभागोंमें जानेपर भी प्रान्त अपना विधान बनाने तथा गुटमें शामिल होने, न होने या शामिल होकर भी अलग हो जानेके लिये स्वतन्त्र हैं, कांग्रेसकी

यही व्याख्या है और वह अपनी व्याख्यापर दृढ़ है, अगर किसीको इस विषयमें संदेह हो तो वह भारतके सर्वोच्च संघ न्यायालयमें जा सकता है और कांग्रेस संघ न्यायालयका फैसला माननेको तैयार है।

कांग्रेसके इतने स्पष्ट रुखके बावजूद भी प्रधान मन्त्री एटलीने जवाहरलालजीसे लन्दन आनेका विशेष आग्रह किया और भलमन साहतके खयालसे पंडित जवाहरलालजी लन्दन गये। लन्दन जानेके पहले इस सम्बन्धमें जो पत्र व्यवहार हुआ, वह इस प्रकार है।

२६ नवम्बरको पंडित जवाहरलाल नेहरूने वायसरायको निम्नोक्त पत्र लिखा।

प्रिय लार्ड वावेल !

आज आपसे मेरी जो मुलाकात हुई इसमें बातचीतके दरमियान आपने हमें इस सप्ताह लन्दन जानेका एच० एम० जी का निमंत्रण दिया। मैंने मेरे साथियोंसे सलाह की है और हमने इस सुझाव पर सावधानीसे विचार किया है, लेकिन हम महसूस करते हैं कि हम इस अवस्थामें लन्दन जानेकी व्यवस्था नहीं कर सकते। भारतमें ब्रिटिश सरकारके जो प्रतिनिधि हैं उनसे बातचीत करनेके लिये हम रजामन्द हैं।

हमें ऐसा लगता है कि, ब्रिटिश केबिनेट डेलीगेशनके भारतमें आनेके बादसे जो विभिन्न निर्णय हुए हैं, उनको नये सिरेसे छेड़ कर, उनपर विचार करना, इस सुझावमें निहित है। मुस्लिम

लोगने सरकारमें जो स्थान ग्रहण किये, वे इस स्पष्ट समझौतेके आधारपर थे कि वे लोग १६ मईके केबिनेट मिशनके सुझावोंको शर्तोंको स्वीकार करते हैं, और किसी तरहसे वे सरकारमें शामिल नहीं हो सकते थे। लेकिन अब लीगने बिलकुल निश्चित रूपसे घोषणा कर दी है कि वह विधान परिषद्में भाग न लेगी।

हम निश्चित तारीख यानी नौ दिसम्बरको विधान परिषद्के आरम्भ किये जानेको बहुत महत्व देते है, यह आप जानते हैं। ऐसी अवस्थामें लन्दन जानेका निमन्त्रण, हमारी दृष्टिमें उस सम्पूर्ण समस्याको फिरसे सामने लानेके लिये हैं, जिसका काफी हद्तक समाधान, केबिनेट मिशनके वक्तव्य और मध्यवर्ती सरकारकी स्थापनसे हो गया। हमारी रायसे जनताके मनमें यह धारणा होना कि इन निर्णयोंपर फिर विचार होगा, घातक होगा। इसलिए हम जनताके कल्याणकी दृष्टिसे यह आवश्यक समझते हैं कि इस बातपर जोर दिया जाय कि चूंकि समस्याएं तय हो गयी हैं इसलिए निश्चित तारीखको विधान परिषद्का आरम्भ होना चाहिए।

यह स्मरण रहना चाहिए कि विधान परिषद्के प्रतिनिधियोंके चुनावके महीनों बाद यह तारीख रखी गयी थी। वर्तमान अवस्थामें अब और अधिक कालतक इसका प्रारम्भ स्थगित करना, इस योजनाको त्याग देनेके रूपमें होगा, जिसमें सब ओर अनिश्चयका वातावरण फैल जायगा यह वातावरण इस समय अवांछनीय ही नहीं है बल्कि, दरअस्ल यह इस वक्त विभिन्न हिंसात्मक प्रचारको प्रोत्साहित करेगा।

वर्तमान अवस्थामें कुछ कालके लिए भी देश छोड़कर जाना हमारे लिए बहुत मुश्किल है। विधान परिषद्के आरम्भका समय दो सप्ताहसे भी कम है, हमें उसके लिए तैयारी करनी है।

इन दिक्कतोंके रहनेपर भी विदेश जानेसे दर असल कोई फल होनेकी आशा होती तो हम जाते। हमारा विश्वास है कि इस समय हमारे भारत छोड़नेका अर्थ होगा कि लीगके निर्देशसे केबिनेट मिसनकी योजना छोड़ी जा रही है या उसमें काफी परिवर्तन होनेवाला है, और हम इस तरहके कार्यमें शामिल हैं। पहले इस बातका निश्चय होना चाहिए कि जिन योजनाओं पर मतैक्य हो चुका है वे कार्यरूपमें लायी जायंगी और नीतिमें सिलसिला होगा। अभी भी काफी सन्देह है, अब इसमें और कुछ जोड़ा गया तो वह सम्पूर्ण योजनाको ही भंग कर देगा। और इसकी जगह दूसरीको देना असम्भव हो जायगा। इसलिए हम महसूस करते हैं कि हम इस समय लन्दन नहीं जा सकते। लेकिन जब भी आवश्यक हो हम भारत स्थित ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोंसे सलाह करनेके लिये तैयार हैं। इङ्गलैंडको संक्षिप्त यात्रा कोई फल नहीं दे सकती, बल्कि इसका परिणाम उल्टा हो सकता है। इसलिये हमें अफसोस है कि आपके द्वारा हमें एच० एम० जीका जो निमंत्रण मिला है, उसे हम स्वीकार नहीं कर सकते। मुझे विश्वास है कि इस पत्रकी विषय वस्तुसे आप एच० एम० जीको अवगत करा देंगे।

प्रीमियरका
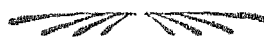
भारत मन्त्री लार्ड पैथिक लारेंसने वायसरायकी मार्फत निम्नोक्त समुद्री तार भेजा। भारत मंत्रीने लिखा कि कृपया प्रधान मन्त्रीके तरफसे यह तार नेहरूजीके पास पहुंचा दीजिये।

मुझे बहुत आशा है कि आप लन्दन आनेके लिए राजी हो आयंगे क्योंकि भारतमें तीन महीनेसे अधिक बितानेके बाद मेरे साथियोंके लिए, या मेरे लिए इस समय भारत आना संभव नहीं है।

हमलोगोंकी बातचीतका आधार विधान-परिषद्की बैठकको जो ९ दिसम्बरको हो रही है सफल बनानेकी चेष्टा होगी। विधान परिषद्के आरम्भ करनेके निर्णयको त्यागनेका कोई इरादा नहीं है और न केबिनेट डेलिगेशनकी योजनाको छोड़नेका इरादा है। इच्छा योजनाको त्यागने या बदलनेकी नहीं है बल्कि पूर्णरूपसे इसे कार्यमें लानेकी है। इसी कारण हम, आप और आपके

साथियोंको लन्दन बुला रहे हैं। मन्त्रि-मिशनके तीनों सदस्योंने व्यक्तिगत और सामुहिक रूपसे मुझसे कहा है कि मैं, हमारे मिलने की सर्वाधिक आवश्यकता पर जोर डालूं ताकि भारतमें और कोई अवांछनीय कार्य होनेके पहले हम इस विषयपर विचार विमर्श कर लें।

भारतीय स्वाधीनताके लक्ष्यकी ओर तेजी और तथा शान्ति-पूर्वक बढ़नेके लिये, हम आपसे मदद चाहते हैं, भारतीय जनता का जो उक्त लक्ष है उसमें हम पूरे दिलसे शामिल हैं।

२८ नवम्बरको वायसरायने भारत मन्त्रीको निम्नोक्त तार भेजा।

[कृपया पंडित जवाहरलालका यह सन्देश प्रधान मन्त्रीको पहुंचा दें]

मैं आपके सन्देशके लिये धन्यवाद देता हूँ और दिसम्बर तथा उसके बाद विधान-परिषद्की सफल बैठकके लिये आपने जो इच्छा प्रगट की है, उसकी तारीफ करता हूँ। हम सब उत्सुक हैं कि विधान परिषद निश्चित तिथिको हो और अपना कार्य पूरा करने के लिये वह सब सदस्योंके साथ आगे बढ़े, इस मामलेमें हम, दूसरोंके सहयोगसे जो कुछ संभव होगा, वह सब कुछ करनेकी पूरी कोशिश करेंगे। जैसा कि हमने बार बार कहा है, हमने केबिनेट मिशनकी योजनाको उसके पूर्णरूपमें स्वीकार किया है। कुछ व्याख्याओंके सम्बन्धमें हमने मन्त्री मिशनके सामने अपनी स्थिति साफ कर दी थी और तबसे हमने उसीके अनुसार

काम किया है। हमने यह भी कह दिया कि व्याख्याओंमें भेद होनेपर मामला फेडरल कोर्टको सौंपा जाय और हम कोर्टके निर्णयको मानेंगे। कल पार्लामेंटमें ब्रिटिश सरकारकी तरफसे जो वक्तव्य दिया गया, उससे मालूम होता है कि जिस दृष्टि बिन्दुपर विचार होगा, वह सिर्फ यह व्याख्या है। इस व्याख्या के सम्बन्धमें हमारी स्थिति बिलकुल साफ है, और हम इससे बंधे हुए हैं। हम इसे बदल नहीं सकते, और न हमें ऐसा करने का अधिकार है। इसलिए इस कार्यके लिये हमारा लन्दन आना अनावश्यक है।

विधान-परिषद्की प्रारम्भिक बैठकमें, उसकी कार्यवाहीके तरीकोंका निर्णय तथा विभिन्न कमेटियोंकी नियुक्ति होगी। इस-लिये आगेकी कार्यवाहीकी व्याख्याका सवाल इस समय नहीं उठता। इसलिये हम सबके लिये यह सहज सुलभ है कि हम इस बैठकमें सहयोग करें और अगर आवश्यकता आ जाय तो जिस मामलेपर समझौता न हो सके उसे फेडरल कोर्टके सिपुर्द कर दें।

विधान-परिषद्की प्रथम संक्षिप्त बैठकके बाद आवश्यक हो तो हमारा लन्दन आना अधिक उपयुक्त और सुविधा जनक होगा, क्योंकि उस समय विचार विमर्शके लिए अधिक समय मिल सकेगा।

इस सब पर विचार करते हुए और फिलहाल भारत छोड़ने में जो महान् दिक्कतें हैं उनके कारण हमसू महस करतेहैं कि

इस समय हमारा लन्दन आना सुफल दायक न होगा। लेकिन इन सब बातोंके बावजूद भी, या किसी अन्य विषयपर विचार करनेके लिये आप चाहते हैं कि हम आवें ही तो हम आनेकी चेष्टा करेंगे, लेकिन विधान-परिषद्‌की ६ तारीखकी बैठकके पहले हमें भारत लौटना होगा।

२८-११-४६ को वायसरायने भारत मन्त्रीका तार पाया।

आपका तार मिला, कृपया प्रधान मन्त्रीका यह तार पंडित नेहरूको पहुंचा दें।

आपके सन्देशके लिये धन्यवाद। कांग्रेसकी स्थितिके सम्बन्धमें आपने जो लिखा उसे मैंने नोट कर लिया, फिर भी हम महसूस करते हैं कि विधान परिषद्‌की बैठकके पहले आपका आगमन बहुमूल्य होगा, इस मामलेमें आपकी रजामन्दीकी हम प्रशंसा करते हैं। ६ दिसम्बरसे पहले आपकी वापिसीका इन्त-जाम किया जायगा।

विधान परिषद्

—:*:—

भारतीय "विधान परिषद् स्वयं आदेश देनेवाली और स्वयं निर्णायक संस्था होगी, जो किसी बाहरी हस्तक्षेपको बर्दाश्त न करेगी।" पं० जवाहरलाल नेहरूने लन्दनसे प्रस्थानसे पूर्व डार-केस्टरके होटलमें भारतीय पत्र प्रतिनिधियोंके सामने भाषण करते हुए कहा।

नेहरूजीने आगे कहा, ब्रिटिश अखबारोंके पढ़नेसे किसीका भी यह गलत ख्याल बन सकता है कि हिन्दुस्तानमें कोई जबर-दस्त अफसोसनाक वाकया होनेवाला है, और किसी जादू भरे समझौतेसे उसे रोकनेके लिये हमें यहां लन्दन बुलाया गया है।

कई तरहसे हिन्दुस्तानकी हालत अफसोसनाक हो रही है, लेकिन उससे किसीके परेशान हो उठनेकी जरूरत नहीं है। यह एक दर्दनाक हालत है, जिसके पीछे काफी लम्बा इतिहास है। किसी जादूकी छड़ीसे उसे ठीक नहीं किया जा सकता। इसके लिए कुछ वक्तकी जरूरत होगी। यह कोई कानूनी नुक्तेका सवाल

नहीं है, जिसे इधर या उधर करके हल किया जाय, इसके लिए आम लोगोंका ख्याल बदलना होगा।

बातचीतकी कामयाबी और नकामयाबीके सवालका कोई मतलब ही नहीं है। असली सवाल यह है कि विधान परिषद् तीन दिनके अन्दर बैठ रही है। मुस्लिम लीग उसमें शरीक नहीं होगी। उसके लिये यह नामुमकिन है कि वह तीन दिनके वक्तमें शामिल हो सके।

परिषद्का शुरूका इजलास करीब एक दर्जन दिन चलेगा, जिसमें आवलेकी और रस्मियाँ बात तय होगी। परिषद्का पूरा इजलास तीन महीने बाद होगा इस दौरानमें कमेटियां अपना काम करती रहेंगी।

हम ज्यादासे ज्यादा सहयोग हासिल करनेकी कोशिश करेंगे।

जो बात ख्यालमें रखनेकी है वह यह है कि विधान परिषद् की बैठक हो रही है यह बात दूसरी है कि उसमें सब मेम्बर शरीक नहीं हो रहे हैं।

विधान परिषद् एक नई तरहकी संस्था है, जो एक बार शुरू हो जाने पर स्वयं शासित और स्वयं निर्णायक है और जो बाहरके किसी शख्ससे हिदायतें हासिल न करेगी। इसके साथ ही वह एक खास ढांचेमें काम करेगी। उसकी स्वयं निर्णायक शक्तिको असलमें जो चीज सीमित कर सकती है वह बाहरी ताकत नहीं बल्कि स्थिति पर प्रभाव डालने वाली अन्दरूनी

चीजें हैं। अगर अन्दरूनी तौरपर वह कामयाब नहीं हो सकती तो वह आगे नहीं बढ़ सकती।

हम इस बातको महसूस करते हैं और इस लिये हम उसे अन्दरूनी तौर पर कामयाब बनाना चाहते हैं। विधान परिषद्के बारेमें यह बात महत्वकी रही है और है कि एक ऐसी चीज पैदा कर दी गई है कि जिसकी शुरुआत कितनी ही छोटी होनेपर भी वह अपनेमें बढ़नेकी ताकत रखती है और जिस तरफ जाना चाहे जा सकती है।

हिन्दुस्तानके लिये आमतौर पर जो बात सबसे जरूरी है वह यह है कि बाहरी किसी भी तरहका दखल न हो, क्योंकि बाहरी किसी भी तरहके दखलकी मुखालिफत होगी और उससे पेचीदगियां पैदा हो जायंगी।

हिन्दुस्तानका कोई भी सवाल वहांके लोगोंको खुद हल करना होगा। अगर दूसरे लोग उसे हल करनेकी कोशिश करेंगे तो नतीजा यह होगा कि हालत और बदतर हो जायगी। किसी भी चीजके जबरदस्ती लादे जानेका विरोध होगा और जो मन्त्रि मिशनकी योजनाके बहुत बड़ी हद तक स्वभाग्य निर्णयके मुख्य गुणको मिटा देगा।

विधान परिषद्की योजनाके सिवा अन्तःकालीन सरकारके काममें भी बाहरी दखलसे बचना जरूरी है, क्योंकि दोनों ही एक दूसरेसे जुड़े हैं। अगर हिन्दुस्तानको जल्दी ही आजाद होना

है, जोकि वह हो रहा है तो अब अन्तः कालीन सरकारके कामोंमें उसका परिचय मिलना चाहिये।

पोलिटिकल डिपार्टमेंट, जो कि देशी रियासतोंके साथ व्यवहार करता है अभी तक भारत सरकारसे जुदा बना हुआ है, जो कि परस्पर-विरोधी चीज है। इस स्थितिसे रोजाना परेशानियां पैदा होती रहती हैं।

ये सब सवाल इतनी नजदीकीसे जुड़े हैं कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता न एकको दूसरेसे जुदा समझा जा सकता है।

अंग्रेजी सरकारका वक्तव्य

कराची हवाई अड्डेमें एकत्रित पत्रप्रतिनिधियोंके सामने अपनी लंदन यात्राके बारेमें छोटासा वक्तव्य देते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरूने कहा कि लंदनसे हमारे रवाना होनेके पहले शामको ब्रिटिश सरकारके वक्तव्यका मशविदा पढ़कर हमें सुनाया गया। मैंने कल हवाई जहाजमें वह वक्तव्य पढ़ा तो मालूम हुआ कि उस मशविदेमें कुछ परिवर्तन किया गया है और जोड़ा भी गया है। यह तो स्पष्ट है कि वह वक्तव्य महत्वपूर्ण है और इसपर ध्यानपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। मैं अपने सहयोगियों से बिना परामर्श किये अधिक कहना उचित नहीं समझता।

उन्होंने बताया कि इस वक्तव्यसे महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होते हैं। यह वक्तव्य एक तरह से ब्रिटिश मन्त्रि दलके १६

मईकी घोषणामें संशोधनके रूपमें है या उसमें जोड़-सा दिया गया है। जैसा कि १६ मई की घोषणाके स्पष्टीकरणके रूपमें है लेकिन यदि १६ मई की घोषणा में थोड़ा भी परिवर्तन हुआ तो उसका असर पूरी घोषणा पर होगा। और उसी दृष्टिसे उसपर विचार करना होगा। विधान परिषद्की बैठक कल हो रही है जिसमें निसन्देह सारी स्थिति पर विचार किया जायगा।

विधान परिषद्की विशेषता यह है कि वह स्वयं शासित और स्वयं निर्णय करनेवाली संस्था है। उसमें बाहरके किसी तरहके दबावको सहन नहीं किया जायगा। हम प्रारम्भसे ही इस बात की चेष्टा करते रहे हैं कि विधान परिषद्में देशके अधिकसे अधिक दलोंका सहयोग प्राप्त हो किन्तु यदि दुर्भाग्यसे कुछ लोग इसमें न आयं तो विधान परिषद्का कार्य रुकना नहीं चाहिये।

उनसे पूछे जानेपर कि क्या लन्दन जाना उचित था उन्होंने बताया कि मैं लन्दन जाना नहीं चाहता था लेकिन ब्रिटिश प्रधान मन्त्री श्री एटलीकी व्यक्तिगत अपीलके कारण गया। मुझे वहां पुराने मित्रोंसे मिलकर बड़ी खुशी हुयी। इस दृष्टिसे मेरी लन्दन यात्रा अच्छी रही अन्यथा नहीं।

भारतमें विदेशी व्यापारी

---:o:---

पंडित जवाहरलाल नेहरूने एसोसियेटेड चेम्बर आफ कामर्सकी बैठकमें भाषण देते हुए दूसरे देशोंके साथ स्वाधीन भारतके सम्बन्धोंका विस्तृत विश्लेषण किया। पण्डित नेहरूने कहा कि आप लोगोंमेंसे अधिकांश स्वाधीन भारतके भविष्यकी जानकारीके लिये उत्सुक हैं, जिसकी अभी हम योजना प्रस्तुत कर रहे हैं। आज अभी यह स्पष्ट नहीं है कि स्वाधीन भारतकी रूप-रेखा कैसी होगी। सिर्फ यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतका दूसरे देशोंसे कैसा सम्बन्ध कायम होगा। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि विदेशोंसे हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध रहेगा।

जहां तक इङ्गलैंडका सम्बन्ध है, भारतमें पिछले १५० वर्षोंके ब्रिटिश शासन [illegible] बावजूद भी हम लोगोंके बीच प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सम्पर्क सभी दृष्टियोंसे विद्यमान हैं, जिसका अचानक अन्त नहीं हो सकता। इङ्गलैंडके साथ भारतका सम्बन्ध

यदि इस रूपमें भङ्ग न हो जिससे भविष्य विपाक्त रूप धारण कर सके, तो सैकड़ों उपायोंसे स्थापित सम्बन्ध कायम रहेगा। किन्तु जो देश पहलेसे भारतके साथ मैत्रीभाव रखते हैं, उनके प्रति विशेष आकर्षण निश्चित है। पण्डित नेहरूने आगे कहा कि आजके विश्वकी स्थितिमें, मैं कह सकता हूं कि, भारत शक्तिशाली है और राजनीतिक, आर्थिक तथा व्यापारिक दृष्टिसे अवश्य ही बहुत मजबूत है।

मैं यह साफ साफ कह सकता हूं कि भारत मोलतोलकी सुदृढ़ स्थितिमें है। भौगोलिक दृष्टिसे भारतकी जैसी स्थिति है, उसे दृष्टिगत रख उसकी बिना इच्छाके चाहे व्यापार अथवा रक्षा तथा अन्य मामलोंमें सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशियामें मुश्किलसे कोई घटना हो सकती है। भारतकी अन्तर्निहित शक्ति सुदृढ़ है और आर्थिक शक्ति बहुत बड़ी है। भारत परिवर्तन काल समाप्त होते ही अग्रसर होकर विश्वमें अपना उचित स्थान ग्रहण करेगा। व्यापारिक दृष्टिसे हम बहुत ही अच्छी स्थितिमें हैं और औद्योगिक साधन सम्पन्न अमेरिकासे भी व्यवहार बढ़ा सकते हैं। आज भारतके समक्ष अनेक समस्यायें न केवल राजनीतिक बल्कि खासकर आर्थिक उपस्थित हैं। हमें शीघ्रता करनी पड़ेगी, यदि हम इन्हें हल करना चाहते हैं। यदि हम इनका समाधान नहीं करेंगे, तो ये हमारा समाधान करनेकी धमकी देती हैं। आज सृष्टि और विनाश तथा विश्वके निर्माण और उत्तरोत्तर नये संकट पैदा करनेवाली शक्तियोंके बीच होड़-सी दिखाई पड़ रही है।

पंडित नेहरूने आगे कहा कि राजनीतिक सम्बन्धोंके अतिरिक्त भारत तथा इङ्गलैंडके बीच औद्योगिक तथा औपनिवेशिक देशका सम्बन्ध रहा है। औपनिवेशिक अर्थनीतिमें कुछ परिवर्तन हुआ है। किन्तु अभी भी बहुत कुछ परिवर्तन शेष है। इसी अर्थनीतिके संरक्षण में यहां ब्रिटिश उद्योगोंका विकाश हुआ है। आज भी ब्रिटिश उद्योगोंकी रक्षाके विभिन्न साधन मौजूद हैं। यद्यपि इनकी भिन्न-भिन्न शब्दोंमें व्याख्या की जाती है तथापि मतभेद अवश्य है। वास्तवमें यह सुरक्षा भारतमें ब्रिटिश स्वार्थों तथा उद्योगोंकी रक्षाके लिये है। भारतमें इसका बहुत बड़ा विरोध हुआ है। पिछले वर्ष भारत सरकारने यह प्रश्न उठाया था, जो इसका अन्त करना चाहती थी किन्तु कुछ कारणवश उच्चाधिकारियोंके विरोध करने पर मामला स्थगित हो गया। यह बिलकुल स्पष्ट है कि कोई भी भारतीय सम्भवतः किसी भी व्यक्तिके लिये सुरक्षा अथवा रक्षाकी स्वीकृति प्रदान नहीं कर सकता। इसका अन्त होने वाला था और अब निश्चय ही होकर रहेगा।

पण्डित नेहरूने अंग्रेजोंके व्यापार और अन्य मामलोंमें राजनीतिक दांव पेचोंका जिक्र करते हुए कहा कि क्योंकि ब्रिटेनकी औपनिवेशिक आर्थिक नीति और उसमें अंग्रेज व्यापारियोंके स्वार्थ बहुत ही विचित्र हैं, अतः गत डेढ़ सौ वर्षोंके दौरानमें इस नीतिका मेल राजनीति या व्यापारिक मामलोंमें नहीं बल्कि प्रत्येक आवश्यक मामलोंमें दांवपेचके साथ चलता रहा है। स्वभावतः

राजनीतिक पहलू व्यापारिक पहलूसे पृथक होता है और अभी भी आप देख सकते हैं कि राजनीतिक पहलू पृथक है।

पंडितजीने मि० टाउनसेण्टके इस दावेका कि अंग्रेजोंने व्यवस्थापिकाके मामलेमें बहुत बड़ा कार्य किया है, जिक्र करते हुये कहा कि बंगाल और आसाममें अंग्रेज व्यापारियोंको अत्यधिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। किसी भी अन्य देश में विदेशियोंको वोट देनेका अधिकार नहीं प्राप्त है लेकिन भारत में विदेशियोंको मामूली नहीं बल्कि उन्हें औसतन लगभग दश हजार वोट प्राप्त हैं। मैं बङ्गालकी राजनीतिके बारेमें थोड़ी बातें जानता हूं और मैं यह भी जानता हूं कि इन लोगोंने बङ्गालकी राजनीतिको अत्यधिक प्रभावित किया है और यहाँ सरकारके गठन और पतनमें उनका हाथ रहा है। इस प्रकार अंग्रेजोंके औद्योगिक और व्यापारिक कार्योंके प्रति लोगोंमें भावना पैदा हो गयी है।

पंडित नेहरूने भारतमें ईसाई मतकी प्रगतिका जिक्र करते हुए कहा है कि दक्षिण भारतमें यह बहुत दिनोंसे है और इसका प्रचार अंग्रेजी राजसे पहले हुआ था। लेकिन भारतमें अंग्रेजोंके आनेके बाद फैला। इस प्रकार ईसाई मत अंग्रेजी शासनका राजनीतिक प्रतीक बन गया। आपके व्यापार और उद्योग पर जैसा राजनीतिक आवरण है उससे गुण और दोषका पता नहीं लगाया जा सकता।

वीर आदमी ही बता सकता है कि भविष्यमें दो एक वर्षके भीतर भारतमें क्या होने वाला है क्योंकि हम युगके सन्धिकालमें हैं, लिहाजा निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते। मुझे भी नहीं मालूम है कि आगामी एक दो वर्षके भीतर क्या होगा। लेकिन युग सन्धिकाल जो भी हो, कुछ होनेमें एक वर्ष या अठारह महीने लग सकते हैं पर नवीन भारत, स्वतन्त्र और भारतीय जनताके प्रतिनिधियों द्वारा नियन्त्रित होगा। वे प्रतिनिधि क्या करेंगे मुझे नहीं मालूम। वस्तुतः मुझे नहीं मालूम है कि नयी ताकतें आने पर क्या होगा। यह भी हो सकता है कि पुराना नेतृत्व खत्म हो जाय लेकिन मुझे कमसे कम इसका भय नहीं है। मैं जानता हूं कि जब एक राष्ट्र आगे बढ़ता है तब ऐसा होता है और भारत इसी प्रकार आगे बढ़ेगा।

पंडित नेहरूने कहा कि यह बिलकुल असम्भव है कि सरकार व्यापारमें हस्तक्षेप न करे। उसने अतीतमें भी हस्तक्षेप किया है और भविष्यमें भी अत्यधिक करेगी। आज समाजकी भलाईके लिये सरकारी हस्तक्षेपकी ओर विश्वमें अधिक रूझान देखा जा रहा है क्योंकि आखिर राज्य समाजकी भवनाओंका प्रतीक तो है ही।

मुद्राप्रसारके सम्बन्धमें पंडितजीने कहा कि इस मामले पर भारतका ध्यान आकर्षित हुआ है लेकिन यह आसान काम नहीं है। हमने खाद्यान्नका मूल्य कम रखनेका प्रयास किया है लेकिन मैं आपसे कहूं कि मैं इसे पसन्द नहीं करता क्योंकि मैं

सोचता हूं किसानको जिसके साथ अतीतमें अन्याय किया गया है अच्छे दाम मिलें। आमतौर पर हम शहरों और नगरोंकी बातें सोचा करते हैं और अपने देहाती अञ्चलोंकी उपेक्षा करते हैं। यह अच्छी बात है कि हमारे किसान इस वक्त अपने कर्ज चुकानेमें कुछ समर्थ हुए हैं लेकिन जब अपेक्षाकृत उनकी हालत अच्छी है तब हमसे जो कुछ कहते हैं वह उनके लिये करना चाहिये। कंट्रोलके बारेमें पंडितजीने कहा कि कंट्रोलसे चोर बाजारको प्रोत्साहन मिलता है और सरकारी कर्मचारी तथा नागरिकोंमें भ्रष्टाचार तो फैलता है, साथ ही आज कंट्रोल बिना काम चलना कठिन है। लेकिन जब हम देखेंगे कि बिना कंट्रोलके काम चल सकता है तो हम युद्धकालीन कंट्रोल उठा देंगे।

पंडितजीने कलकत्ते जैसे शहरोंकी बस्तियों और गन्दे मुहल्लोंका जिक्र करते हुए कहा कि इनको बर्दाश्त करना हमारे नगरोंके लिये बहुत शर्मकी बात है। मैं कल्पना नहीं कर सकता हूं कि यहां इन्सान कैसे रहता है। म्युनिसिपैलिटी और कारपोरेशनकी जिम्मेवारी है लेकिन मालिकोंके बारेमें क्या किया जाय? मैंने कलकत्ता और बम्बईकी कुछ बस्तियोंका निरीक्षण किया है। मैं जानता हूं कि वहां रहनेवाले मजदूर उन कारखानोंमें काम करते हैं जो अच्छे डिवीडेंट अदा करते हैं। यह स्थिति बदनामीका कारण है

एक ओर युद्ध और उसके बाद कुछ लोगोंके हाथमें अपार धन-राशि आयी है और दूसरी ओर अधिकांश लोगोंको खाने

तकका सामान नहीं है। यह शिकायत की जाती है कि युद्ध-कालमें इनकम टैक्सकी भरमार थी। अब तक वे टैक्स मौजूद हैं। मैं पूछता हूं ऐसा होनेपर भी यह धनराशि कहांसे आयी? मैं इन सब मामलोंकी जांच करवाना पसन्द करता हूं। ऐसी बात अच्छी नहीं कि मुट्ठी भर धनी हों और ज्यादातर लोग गरीब हों। इसके अन्दर कुछ गलती है उसे नियन्त्रणमें लानेकी आवश्यकता है।

विधान परिषदके लक्ष्य और उद्देश्य
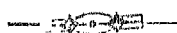
भारतीय विधान-परिषद्में परिषद्के उद्देश्य और लक्ष्योंके सम्बन्धमें अपना प्रस्ताव पेश करते हुए पण्डितजीने महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया। पंडितजीका प्रस्ताव कहता है कि भारतका लक्ष्य स्वतंत्र स्वाधीन रिपब्लिक सरकार है।

पण्डितजीने कहा, यह प्रस्ताव जो विधान हम रचने जा रहे हैं, उसका भाग नहीं है, इसलिये इस प्रस्तावको विधानका एक भाग समझ कर उसपर विचार नहीं करना चाहिये। इस परिषद्को पूर्ण स्वाधीनता है कि वह चाहे जैसा विधान बनावे और दूसरे जिन्होंने अभी परिषद्में भाग नहीं लिया है, उन्हें भी जब वे परिषद्में शामिल हों तो, पूर्ण हक है कि वे विधानको चाहे जैसा रूप दें।

दर असल यह प्रस्ताव दो अन्तिम छोरोंके बीचमें है, यानी बहुत ज्यादा कहना या बहुत कम कहनाके बीचमें है अर्थात् न बहुत अधिक कहता है न बहुत कम। यह प्रस्ताव कुछ महत्व पूर्ण मूल भित्तियोंको उपस्थित करता है, जिनके बारेमें किसी दल पार्टी या व्यक्तिको शायद ही कुछ उज्र हो।

मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि जहां तक इस प्रस्ताव या घोषणका सम्बन्ध है, यह विधान-परिषद्के भावी कार्यमें किसी तरह दखल नहीं देता, या न यह प्रस्ताव परिषद्की किसी भावी चर्चा या दो दलोंके वार्तालापमें दस्तन्दाजी करता है। सिर्फ एक तरहसे, अगर आप पसन्द करें तो यह हमारा काम सीमित करता है, अगर आप इसे सीमित करना कह सकें, वह यह कि प्रस्तावमें जो आधार भूत भित्तियां निहित हैं हम उन्हें मानते हैं, और मैं विश्वास करता हूँ कि ये आधारभूत भित्तियां किसी भी अर्थमें सचमुच विवादास्पद नहीं है। भारतमें उन्हें कोई चुनौती नहीं देता, किसीको उन्हें चुनौती नहीं देना चाहिये। फिर भी अगर कोई चुनौती देता है तो हम उसे स्वीकार करते हैं। और हमने जो स्थिति ग्रहण की है, उसपर कायम रहते हैं।

मैं आशा करता हूँ — जो नयी दिक्कतें सामने आ गयी हैं, हर शख्स जानता है कि ये दिक्कतें इसलिये उठ खड़ी हुई हैं कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल और जो इस समय अधिकार पूर्वक बोल सकते हैं, उन्होंने हालमें ही खास तरहके वक्तव्य दिये हैं, मगर मैं आशा करता हूँ, जैसा कि मैंने पहले कहा है कि ये दिक्कतें हमारा रास्ता बन्द न कर सकेंगी और हम जो यहां इस समय उपस्थित हैं और जो अभी यहां नहीं हैं, उन सबके सहयोगसे आगे बढ़नेमें समर्थ हो सकेंगे।

हममेंसे अधिकांश, पिछले वर्षोंमें—एक पीढ़ीसे भी अधिक काल तक मृत्यु-छायाकी उपत्यकासे गुजरे हैं और अगर फिर जरूरत हो तो, फिर उसी रास्तेसे गुजरनेके लिये तैयार हैं।

फिर भी जो कुछ वक्त गुजर गया, उस गुजरे वक्तमें हम उस समयकी बात सोचते थे, अब हमें सिर्फ युद्ध करने, सिर्फ विध्वंश करनेका अवसर ही नहीं मिलेगा, बल्कि रचना और विकाशका अवसर भी प्राप्त होगा। और अब ऐसा लगता है कि स्वतंत्र भारतमें निर्माण कार्यका समय सामने आ रहा है, हम इस मुहूर्त का उत्साहसे स्वागत करते हैं, और ऐसे सुन्दर अवसर पर जब हमारे सामने नयी दिक्कत पेश की जाती है, वह हमें चोट पहुंचाती है। यह जाहिर करता है कि इस दिक्कतके पीछे जो भी ताकत हो, इसके पीछे जो हैं, वे योग्य, चालाक और बुद्धिमान होने पर भी किसी न किसी प्रकार कल्पनासे रहित हैं, जिसका कि इतने उत्तर दायित्वपूर्ण पदोंपर बैठनेवालोंमें अभाव नहीं होना चाहिये। क्योंकि यदि आपको जनताके साथ व्यवहार करना है तो आपके लिये आवश्यक है कि आप जनताको काल्पनिक, बौद्धिक, भावुकतापूर्ण दृष्टिसे समझ सकें।

हमारे सामने पिछले महीनोंमें जो कठिनाइयां आयी हैं उनके बावजूद भी हमने पारस्परिक सहयोगका वातावरण उत्पन्न करनेकी ईमानदारीसे काफी चेष्टा की है। हम अपनी चेष्टा बराबर जारी रखेंगे, लेकिन मुझे भय है कि दूसरी तरफसे अगर हमारे प्रयत्नोंका उत्तर न मिला तो वातावरण खराब हो जायगा।

फिर भी चूंकि हम महान कार्यकी सिद्धिके लिये दृढ़ संकल्प हैं, मुझे विश्वास है कि हम अपना वह प्रयत्न बराबर जारी रखेंगे और मुझे आशा है कि हम लगातार कोशिश करते रहे तो हम, आखिर सफल होंगे।

हां, हमें यह चेष्टा बराबर जारी रखनी चाहिये, उस हालतमें भी, जब कि हमारी दृष्टिमें हमारे कुछ देश भाइयोंने गलत रास्ता पकड़ लिया है, क्योंकि आखिरकार हमें इस देशमें ही एक साथ रहना है, हमें एक साथ ही काम करना है, और हमें सहयोग करना ही है, चाहे आज न सही, कल—परसों सही। इसलिये फिलहाल हमें इस तरहकी हर चीजसे दूर रहना है, जो उस भविष्यके निर्माणमें नयी कठिनाई पैदा करें जिसके लिये आज हम मेहनत कर रहे हैं।

जहां तक हमारा अपने देशवासियोंके सहयोगका सम्बन्ध है, हमें उनका अधिकाधिक सहयोग पानेके लिये अपनी पूरी ताकत लगानी चाहिये।

लेकिन सहयोगके माने यह नहीं हो सकते, न हैं और न होंगे कि हम जिन आधार भूत सिद्धान्तोंपर खड़े हैं, जिन सिद्धान्तोंपर राष्ट्रको खड़ा रहना चाहिये, हम उन्हींका परित्याग कर दें, क्योंकि किसी रचनाके लिये यह सहयोग पाना नहीं है, बल्कि जिसने हमारे जीवनको अर्थ दिया है, उसका परित्याग करना है।

इस सहयोगके अलावा, इस हालतमें भी हम इङ्गलैण्डका सहयोग चाहते हैं। हम अनुभव करते हैं कि इङ्गलैण्डने अगर सहयोग देना अस्वीकार किया तो वह भारतके लिये भले ही हानिकर हो, निश्चय ही कुछ हदतक नुकसानदेह होगा, किन्तु भारतसे भी अधिक खुद इङ्गलैण्डके लिये नुकसानदेह होगा, और कुछ हदतक सारी दुनियाके लिये।

एक महायुद्धसे छुट्टी पानेके बाद, आजकल हम ऐसे जमानेमें रह रहे हैं, जब कि लोग आनेवाले युद्धोंके बारेमें अस्पष्ट मगर जोरदार बातचीत करते हैं। ऐसे अवसर पर नव भारतका जन्म हो रहा है। निर्भय, दृढ़, नव भारतका फिर अभ्युदय हो रहा है। विश्वकी अशान्तिके बीचमें ही नव भारतका नवाभ्युदय, शायद श्रेयस्कर है।

लेकिन इस मौकेपर हमारी दृष्टि साफ होनी चाहिये, हमारे सामने विधान बनानेका महान् कार्य है। हमें वर्तमानके महान् दायित्वको भी सम्भालना है और भविष्यके कठिन दायित्व को भी निभाना है। ऐसे मौकेपर हमें इस या उस दलके छोटे-मोटे फायदेमें अपने आपको नहीं भुला बैठना है।

कुछ लोगोंने मेरा ध्यान इस बातकी ओर खींचा कि प्रस्तावमें 'रिपब्लिक' शब्दका होना, भारतीय रियासतोंके शासकको शायद कुछ खफा कर दे। मुमकिन है, यह शब्द उन्हें नाखुश करे। लेकिन मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं व्यक्तिगत तौरसे कहीं भी राज्यतन्त्रको पसन्द नहीं करता और आजकी

दुनियामें राज्यतन्त्र तेजीसे मिटता जा रहा है। लेकिन इस मामलेमें मेरे व्यक्तिगत विश्वासका सवाल नहीं उठता।

रियासतोंके सम्बन्धमें आजसे नहीं वर्षोंसे हमारी यह सर्वोपरि राय रही है कि आनेवाली स्वाधीनतामें रियासतोंकी जनताको भी हिस्सेदार होना चाहिये। यह कैसे हो सकता है कि विभिन्न रियासतोंकी प्रजाओंमें स्वाधीनताकी मात्रा और रूपमें भारतकी जनताके मुकाबिले विभिन्नता हो? रियासतें भी युनियनका भाग होंगी।

हम चाहे भावी विधानमें उल्लेख कर दें या आपसमें सहमत हो जायं कि स्वाधीनताका रूप देशी रियासतों और भारतमें समान होना चाहिये, लेकिन मैं व्यक्तिगत तौरसे यह पसन्द करता हूं कि भावी रियासती सरकारोंकी रचना और रूप भी एक सा हो। मैं मानता हूं कि यह इस तरहका प्रश्न है कि जिसपर देशी रियासतोंसे बातचीत की जायगी और जिनके सहयोगसे इस प्रश्नको हल किया जायगा। न तो मैं चाहता हूँ और मेरा अनुमान है कि यह परिषद भी नहीं चाहेगी कि देशी रियासतोंकी इच्छाके खिलाफ कोई चीज उनपर लादी जाय। अगर किसी खास रियासतकी प्रजा किसी खास तरहका शासन चाहती है तो, फिर वह शासन चाहे राजतन्त्रीय क्यों न हो, यह वहांकी प्रजाकी मर्जीपर है कि वह वही शासन तन्त्र अपनावें।

परिषद् जानती है, बहुतसे सदस्य उपस्थित नहीं हैं, बहुतसे सदस्य जिन्हें यहां आनेका अधिकार है, वहां नहीं आये। हमें इसका दुःख है क्योंकि हम भारतके अधिकाधिक भागों, और अधिकाधिक दलोंके प्रतिनिधियोंसे मिलना चाहते हैं। हमने एक महान् कार्यका उत्तर दायित्व ग्रहण किया है, और इस कार्यमें हम सबका सहयोग चाहते हैं, क्योंकि भारतके जिस भविष्यकी हमने कल्पना की है, वह किसी धार्मिक, प्रान्तीय या अन्य प्रकार के दलका भविष्य नहीं है। बल्कि इसमें भारतकी सम्पूर्ण ४० करोड़ जनता है। इसलिये हमें कुछ खाली बेंचोंको देखकर दुःख होता है, हमारे जो साथी यहां उपस्थित हो सकते थे, उनकी अनुपस्थिति पर हमें खेद है।

इस समय हमारे ऊपर एक पवित्र कर्तव्यका भार है, वह यह कि अनुपस्थित साथियोंका हमेशा स्मरण रखना, हमेशा यह याद रखना कि हम यहांपर किसी एक पार्टीके लिये कार्य करनेके लिये नहीं हैं, बल्कि हमेशा सारे भारतका खयाल रखना और हर काम भारतके चालीस करोड़ देशवासियोंको मद्दे नजर रख कर करना।

और मैं सोचता हूं कि अब वह समय आ गया है जब कि हम इस परिषद्के कार्यमें, जहांतक हमसे हो सके, अपने दलगत और व्यक्तिगत भेद भावसे ऊपर उठकर रहें और हमारे सामने जो समस्याएं उपस्थित हों, उनपर विस्तृत दृष्टिसे, सहिष्णुता पूर्वक, उत्तम ढंगसे विचार करें ताकि जो कुछ भी हम रचना करें भारत

के अनुकूल हो, और दुनिया इस बातको मान ले कि इस महान् अवसरपर हमने वैसा ही कार्य किया, जैसा हमें करना चाहिये था।

और एक व्यक्ति है जो अनुपस्थित है, गो कि जैसे वह मेरे दिलोदिमागमें है, वैसे ही बहुतोंके दिलो दिमागमें होगा, वह व्यक्ति हमारी जनताका महान् नेता, हमारे राष्ट्रका पिता, इस परिषद्‌का निर्माता, और जो बीत चुका और जो बीतनेवाला है उसका सिरजनहार है। वह हमारे बीचमें नहीं है, क्योंकि अपने आदर्शोंकी प्राप्तिमें वह भारतके एक सुदूर कोनेमें कार्यरत है। लेकिन मुझे जरा भी शक नहीं है कि उनकी आत्मा हमारे साथ है, और हमारे कार्यको आशीर्वाद दे रही है।

हम भारतके लिये एक विधान बनाने जा रहे हैं, और यह प्रत्यक्ष है कि हम भारतमें जो करने जा रहे हैं, बाकी दुनिया पर उसका काफी असर होगा। आज भी जबकि हम स्वाधीनताके दरवाजेपर ही हैं, भारत संसारके मामलोंमें महत्वपूर्ण भाग लेने लग गया है, दिनोंदिन इसमें वृद्धि होगी, इसलिये भारतका विधान बनानेवाले विस्तृत अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोणको सामने रखें यह जरूरी है। हमारा सारी दुनियासे बन्धुत्वका नाता है। हम सब देशोंके साथ मित्रता चाहते हैं, भूतकालमें संघर्षका लम्बा इतिहास रहनेके बावजूद भी हम इङ्गलैण्डके साथ भी मित्रता चाहते हैं।

ब्रिटिश सरकार और लीगको चेतावनी

विधान सम्मेलनमें हम जिस विधानका निश्चय करेंगे वही स्वतंत्र भारतका विधान होगा, उसे ब्रिटेन मानें या न मानें। इस पर भारत माताकी जय ध्वनि हुई। काशीके टाउनहालकी सभा में लगभग एक लाख मनुष्य उपस्थित थे।

पंडित नेहरूने कहा कि अंग्रेज सरकार यह सोच रही है कि विधान सम्मेलनका निर्णय उसके लिये मान्य नहीं है। पर हमने विधान सम्मेलनमें इस लिये प्रवेश नहीं किया है कि हम अपने निर्णय एक चाँदीकी तश्तरीमें सजा कर अंग्रेज सरकारके पास लेजाकर नाचते फिरें कि वह उसे स्वीकार करे। हमने अब लन्दनकी ओर देखना भी छोड़ दिया है। हम जानते हैं कि हमारे भीतर कुछ आपसी मतभेद हैं, पर हम स्वयं उनका फैसला कर लेंगे। हम किसी बाहरी हस्तक्षेपको सहन नहीं कर सकते, और न करेंगे।

पंडित नेहरूने कहा कि भारतके सम्बन्ध अब ब्रिटेनसे इसी पर निर्भर रहेंगे कि वह इस समय कैसा व्यवहार करता है। हम सब देशोंसे मैत्री रखना चाहते हैं, और ब्रिटेनसे भी हमारी मैत्री उसी हालतमें रहेगी यदि वह हमारी स्वतन्त्रतामें बाधा न पहुंचायेगा। ब्रिटेनका व्यवहार यदि खराब रहा तो वह अच्छे फलकी आशा नहीं कर सकता। हम स्वतन्त्रताके पथपर इतना आगे बढ़ चुके हैं कि अब हमारे लिये पीछे कदम हटाना सम्भव नहीं है।

संसारकी दृष्टिमें भारतकी मर्यादा बढ़ी है। संयुक्त राष्ट्रोंके संघमें भारतने अफ्रीकाके विरुद्ध महान् सफलता प्राप्त की है। भारत कई राष्ट्रोंसे अपने सम्बन्ध स्थापित कर रहा है और अपने राजदूत वहां भेजे हैं। इन सबसे यही मालूम होता है कि संसार भारतके राष्ट्रोंमें उच्च स्थान प्राप्त करेगा।

पंडित नेहरूने आगे कहा कि कांग्रेसने लगभग २६ वर्ष ब्रिटिश सरकारसे लड़ाई लड़ी है पर किसी अवसर पर भी उसने ब्रिटिश जनताके विरुद्ध घृणाका प्रचार नहीं किया। हमारी लड़ाई शासकोंके विरुद्ध है।

मुस्लिम लीग कह रही है कि उसका प्रत्यक्ष अन्दोलन कांग्रेस और ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध है पर वास्तवमें उसके द्वारा सम्प्रदायोंके बीच घृणा फैली है और बंगाल, बिहार तथा बम्बईमें निरपराध मनुष्योंकी हत्याएँ हुई हैं। मैं पूछता हूं कि ऐसे प्रत्यक्ष आन्दोलनसे मुस्लिम लीगी पाकिस्तानके लक्ष्य तक

कैसे पहुँचेंगे ? लीग वालोंने कुछ भी नहीं प्राप्त किया, उन्होंने केवल उन लोगोंमें घृणाके भावोंका प्रचार किया जो अनेक शताब्दियोंसे शान्तिपूर्वक रहते थे। पंडित नेहरूने आगे कहा—

पाकिस्तानसे समस्या ठीक तरह हल नहीं हो सकती, क्योंकि करोड़ों हिन्दू और मुसलमान पाकिस्तान और हिन्दुस्तानमें बिना नागरिक अधिकारोंके रहेंगे। और साम्प्रदायिक समस्या ज्यों की त्यों बनी रहेगी। जनताका तबादला एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें करना हास्यजनक है।

पं० नेहरूने अन्तमें मि० चर्चिलके उस भाषणकी ओर संकेत किया जो उन्होंने हालमें पार्लियामेन्टमें दिया था और जिसमें उन्होंने यह कहा था कि ब्रिटिश फौजोंसे एक सम्प्रदायके लिये दूसरे सम्प्रदायको न दबाया जाय। नेहरूजीने कहा कि कांग्रेसने पहले अनेक अवसरों पर यह कहा है कि हमें भारतमें ब्रिटिश फौजोंकी जरूरत नहीं है। कांग्रेस तो यह चाहती है कि ये शीघ्रसे शीघ्र यहाँसे चली जाय, क्योंकि उनके जाने पर भारतकी बहुतेरी कठिनाइयां स्वयं ही दूर हो जायंगी।

छात्र और [illegible]-संग्राम

भारतमें हम संघर्ष और संग्रामके बीच जीवन-यापन करते हैं, हो सकता है कि बाहिरी व्यक्तिकी नजरमें यह संघर्ष और संग्राम उतना प्रत्यक्ष न हो। जब देश स्वतन्त्रतासे वंचित कर दिया जाता है, तब उसके सामने दो ही रास्ते रह जाते हैं, एक रास्ता स्थितिको स्वीकार कर लेना और दूसरा अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये संघर्ष और संग्राम करना। इसके बीचका कोई मार्ग नहीं है, और जो देश दासताको स्वीकार कर लेता है उसमें आत्मा या आत्म-बल नहीं रहता। संघर्ष और संग्रामके रास्ते बहुतसे हो सकते हैं, लेकिन मुख्य बात यह है कि जनताकी मनोभावना दासताके विरुद्ध विद्रोहशील होनी चाहिये, यह विद्रोह कैसा रूप ग्रहण करेगा, या कौनसे तरीके इस्तेमाल किये जायंगे, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

इसलिये आप भारतमें आज कुछ विचित्र-सी स्थिति देखते हैं कि हममेंसे कुछ केन्द्रीय सरकारसे सम्बन्धित हैं, कुछ प्रान्तीय

सरकारें चला रहे हैं, लेकिन फिर भी हम वर्तमान सरकारके खिलाफ हैं। क्योंकि हमें स्वाधीनताका संग्राम जारी रखना है।

मैं नहीं जानता, आनेवाले कुछ महीनोंमें क्या होगा, मैं नहीं जानता, स्वाधीनता प्राप्त करने या उसपर जोर डालनेके लिये देश कौन-सा कदम आगे बढ़ावेगा, मगर एक बात निश्चित है कि फिलहाल हम स्वाधीनताके संग्राममें रत हैं।

आपका स्वाधीनताका आदर्श शायद रास्तेमें जुलूस निकाल कर नारे लगाने तक सीमित है, यह किसी मौकेपर हो सकता है, और भी इसी तरहकी चीजें किन्हीं मौकोंपर मौजूं हो सकती हैं, किन्तु याद रखिये, जब एक राष्ट्र संघर्ष करता है, जब दो शक्तियां आपसमें गुंथ जाती हैं, तब सिर्फ नारे ही नहीं लगाये जाते। मैं पहले कह चुका हूं, संघर्षके बहुतसे तरीके हैं और मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आज भारतमें स्वाधीनता संग्राम उतने ही जोरोंसे चल रहा है जितने जोरोंसे पहले चल रहा था। आपको इस वास्तविकताको अच्छी तरह समझ लेना है, आप किसी भावी समयकी प्रतीक्षामें न बैठे रहें कि जब संग्रामके लिये आह्वान होगा तब आप रास्तों खेतों या मिलोंमें प्रदर्शन करेंगे। आजके संग्राम का रूप विभिन्न हो सकता है, कलसे वह अपना रूप बदल सकता है। हम अन्य तरीकेसे काम कर रहे हैं, इसकी वजह यह है कि हमारा देश बहुत आगे बढ़ गया है।

अक्सर कहा जाता है कि हम स्वाधीनताकी सीमापर हैं, दर असल हम स्वाधीनताकी सीमा पर हैं। लेकिन यह याद रखिये, आपने अक्सर उस किलेकी दीवालके पास युद्ध किया है, जिसपर आप अधिकार करना चाहते हैं, वही दीवाल फिर आपके सामने आ सकती है और आपको प्राणपणसे जूझना पड़ सकता है। आपको सिर्फ एक बात याद रखनी चाहिये आप संग्राम का अर्थ सिर्फ सार्वजनिक प्रदर्शन या इसी तरहके ढंगमें न लेवें।

अगर आप देशका काम करते हैं, अगर आप अपना संगठन करते हैं, तो यह भी संग्रामका एक भाग है, अगर आप अन्याय को स्वीकार करनेसे इन्कार करते हैं तो यह भी संग्रामका एक भाग है। संग्रामका शेष रूप जो भी हो, लेकिन संग्रामका शेष रूप तभी आपके सामने आयगा, जब आप जी लगाकर लड़ेंगे। स्वाधीनताका संग्राम आज भी जारी है, गो कि आज मैं भारत सरकारमें हूँ, लेकिन फिर भी मैं संग्रामको उसी प्रकार चला रहा हूं, जिस प्रकार जीवनमें पहले कभी चलाता रहा था।

आज भारतकी जो स्थिति है, उसीके अनुसार संग्रामके विभिन्न रूप और तरीके हैं। आप देखते हैं प्रतिक्रियाशील शक्तियां विदेशी शक्तियोंके साथ मिलकर, स्वाधीनताका रास्ता रोकना चाहती हैं। उनकी इस चेष्टाको व्यर्थ करना संग्रामका ही एक भाग है। इसलिये आपको पूरी तस्वीर सामने रखना चाहिये और आपको संगठित, अनुशासित ढंगसे उसके लिये पूरी तैयारी करनी चाहिये।

पण्डितजीने कहा, संसारमें सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह होने जा रहा है कि एशियाका पुनर्जन्म हो रहा है। एशियावासियों को इस समय सब तरहके दुख-दर्द, दिक्कतें और संघर्ष, संग्रामोंका सामना करना पड़ रहा है, किन्तु इन सबके बावजूद भी जो एक चीज बिलकुल साफ दिखलायी पड़ती है, वह यह है कि महा-देशोंके प्राचीन पिता एशिया महादेशका पुनर्जन्म हो रहा है। मैं भारतसे बाहरके देशोंसे आये हुए मित्रोंको सिर्फ एशियाकी स्वाधी-नताकी ही नहीं बल्कि एशियाकी एकताका सन्देश देना चाहता हूँ। किन्तु यह एकता, किसी महादेश, देश या जातिके खिलाफ नहीं है, अगर आवश्यकता पड़ जाय तो यह एकता अपनी रक्षाके लिये अवश्य है, किन्तु हमारी एकताका वास्तविक उद्देश्य, मित्रता पूर्वक शान्तिसे रहना और दूसरोंके सामने यह मिसाल पेश करना कि हम प्राचीन संस्कृतिके साथ प्रगतिका कैसा सुन्दर समन्वय कर सकते हैं।

एशियाके देशोंकी सांस्कृतिक एकताका उल्लेख करते हुए पण्डितजीने कहा, भारत भाग्यवस, पूर्वीय और पश्चिमीय ग्रूपके बीचमें अवस्थित है। चाहे आप रक्षाके दृष्टिकोणसे या व्यापार वाणिज्य अथवा सांस्कृतिक दृष्टिकोणसे देखिये, भारत मुख्य स्थान ग्रहण करता है। इसलिये यह बिलकुल वाजिब है कि एशियाके छात्र आन्दोलनके विकासमें हम प्रमुख भाग लें। मैं यह शुभ अवसर पानेके लिये आपको बधाई देता हूं और आशा करता हूँ कि आप एशियाकी वह एकता स्थापित करनेमें समर्थ होंगे, जो हम चाहते हैं।

छात्रोंके अनुशासन हीन होनेके सम्बन्धमें आखिरमें पंडितजी ने कहा, अगर आधारभूत सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें मतभेद हो तो कोई बात नहीं, क्योंकि भारत जैसे महादेशमें विभिन्नतामें ही एकता होनी चाहिये, लेकिन मैं देखता हूँ कि झगड़ोंकी तहमें मूलभूत सिद्धान्त नहीं, बल्कि व्यक्तिगत स्वार्थ रहते हैं।

कितनी ही बार मुझसे कहा गया है कि अगर मैं हुकूम दूं तो छात्र एक सेनाकी तरह अनुशासन पूर्वक मार्च करनेके लिये तैय्यार हैं। लेकिन मैं आपको याद दिला देना चाहता हूं कि किसी भी सेनाकी सफलताके लिये सबसे अनिवार्य शर्त है—सेनाके सैनिकों की एकता और अनुशासन ! मुझे दुख है कि मैं छात्रोंमें इन दोनों का अभाव देखता हूँ। एक महान् उत्तर दायित्व आपके कन्धोंपर आनेवाला है, क्या आप उस उत्तरदायित्वको निभानेके लिये तैयार हैं ?

परिमाणु शक्ति और भारत

पुसामें National Physical Laboratory की नींव डालते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरूने कहा—

परिमाणु शक्तिकी छानबीनमें फिलहाल हमें दूसरे देशोंका अनुसरण भले ही करना पड़े, किन्तु यह अनुसरण परिमाणु बम बनानेमें न होगा। लेकिन इस मामलेमें हम किसीसे पीछे नहीं रहना चाहते, क्योंकि यह बहुत ही महत्वपूर्ण है, भावी दुनियाकी रूप-रेखा निश्चित करनेमें यह परिमाणु शक्ति विस्तृत और प्रधान भाग लेगी। परिमाणु शक्ति द्वारा रचनात्मक कार्य किये जा सकते हैं, यानी इसे विध्वंशात्मक कार्योंमें न लगाकर, रचनात्मक कार्योंमें लगाया जा सकता है। इसके द्वारा उद्योग धंधोंका चाहे जहां तक विकास हो सकता है।

परिमाणु शक्ति गृह उद्योगोंमें भी सहायक होगी, अगर आपके हाथमें परिमाणु शक्ति हो तो छोटे २ उद्योग भी आप सफलता

और सुन्दरता पूर्वक चला सकते हैं। हमें परिमाणु शक्तिकी बड़े पैमानेपर छानबीन करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

पण्डितजीने आशा की कि नेशनल फिजीकल लेबोरेटरी शीघ्र ही कार्य करने लग जायगी और उसके साथ ही अन्य अनेक अन्वेषण शालाएं भी काम करेंगी और देशके स्त्री पुरुष दिलसे इस कार्यको करेंगे ताकि देश और संसारकी सच्ची सेवा कर सकें।

पिछले महीनोंमें भारतके विभिन्न भागोंमें जो बहुतसी अन्वेषण शालाएं खोलनेकी योजनाएं बनायी गयी हैं, उनमेंसे बहुतोंको मैंने पढ़ा है और बहुतोंकी गतिविधिपर नजर रखी है। कुछ योजनाओंकी मैंने जांच पड़ताल भी की है, जिनमें नदी, नद, नहर आदि की योजनाएं मुख्य थीं! कुछ योजनाएं तो टेनेसीवेली योजनासे भी बढ़कर हैं, मेरे मस्तिष्कमें इन योजनाओंके पूर्ण होनेपर भारतकी जो उन्नत अवस्था होगी, उसकी तस्वीरें घूम रही हैं। आजकी हलचलमें मेरी दृष्टिमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य इस तरहकी योजनाओंका प्रारम्भ करना है क्योंकि यही वृहत्तर भारत के भावी विकासकी नींव है।

भारतकी द्रुततर प्रगतिमें धनकी कमीके कारण उतनी रुका-वट नहीं पैदा हुई है, जितनी योग्य व्यक्तियोंके अभावके कारण। हम धनके अभावकी बहुत ज्यादा शिकायत करते हैं, किन्तु आदमी जब कोई काम करनेपर उतारू हो जाता है तब धनकी कमी नहीं रहती, युद्धके लिये क्या धनकी कमी पड़ी? सिर्फ

रचनात्मक कार्यक्रमके लिये ही धनकी कमीकी बातें कही जाती हैं। मेरा विचार है कि जिन योजनाओंसे भारतका विकाश होता हो, उनके लिये धनकी कमी हर्गिज नहीं होनी चाहिये।

हमें शिक्षित व्यक्तियोंको वैज्ञानिक कार्योंकी समुचित शिक्षा देना चाहिये, मेरे सामने ऐसे उदाहरण भी हैं कि विश्वविद्यालयोंसे ऊँची डिग्रियां प्राप्त व्यक्तियोंको जीवन-निर्वाहके लिये जब उपयुक्त कार्य और स्थान नहीं मिला तो उन्हें अन्य कार्य और स्थान स्वीकार करना पड़ा। कुछ लोग सुरक्षित विभागोंमें काम करना पसन्द करते हैं जहाँ कार्यकालमें स्थायित्व होता है वस्तुतः समृद्धिकी भावना ही उन्हें इस दिशामें ले जाती है और इस प्रकार देश, देशवासियोंकी निपुणतासे वञ्चित हो जाता है और देशकी निपुणता, कुर्सियोंपर बैठकर बिलकुल गैर जरूरी कार्य करनेमें नष्ट हो जाती है।

व्यक्तियोंको कार्यके उपयुक्त बनानेके लिये बहुत कुछ करना है, लेकिन जिन्हें हम कार्यकी शिक्षा दे रहे हैं, उन्हें कार्य-शिक्षाके समय भी काम करनेका मौका देना चाहिये।

भारतमें हमारे देश और देशवासियोंके सम्बन्धमें प्रामाणिक आँकड़ों और सूचनाओंका काफी अभाव है। लेकिन जब तक इस तरहके आँकडे एकत्र न कर लिये जांय, तब तक हम कार्य आरम्भ न करें यह नहीं हो सकता। क्योंकि हमें कुछ करना है, हमें कुछ करना चाहिये और जो अत्यन्त अनिवार्य तथा महत्वपूर्ण है उसे ही करना चाहिये। इसलिये हमें अन्वेषण-शालाओं

को खोलना चाहिये। हम जो भी काम करें, हमें बड़े पैमानेपर चालक शक्ति चाहिये, हमें अपने देशकी चालक-शक्तिको बढ़ाना होगा। इस समय हमारे पास चालक-शक्ति बहुत कम है, पर हमारे देशमें चालक-शक्ति प्राप्त करनेके विस्तृत और बड़े-बड़े स्रोत हैं, यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि भारत इस मामलेमें संसारके समस्त देशोंसे समृद्ध है, असलियत यह है कि सब चीजें हमारे पास हैं, उन्हें प्राप्त कर, कार्यमें लगानेका सवाल है।

यह सब होनेके साथ साथ भारतका रूप भी तेजीसे बदल जायगा। विज्ञानने पहले भी समाजके रूपमें काफी परिवर्तन किया है, समाजके बिना जाने ही विज्ञानने उसका रूप काफी परिवर्तित कर दिया है और कुछ हद तक समाजने जान बूझकर निश्चयपूर्वक अपना रूप बदला है।

मैं मानता हूँ कि भारतमें फिलहाल हमें बहुतसी दिक्कतोंका सामना करना है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि हम उन दिक्कतों से जल्दीसे छुटकारा नहीं पा सकते। मेरा खयाल है, हम भारतमें तेजीसे इस ओर बढ़ सकते हैं। मैं दिक्कतोंकी चर्चा करता हूँ तो मेरा मतलब सिर्फ टेकनिकल दिक्कतोंसे ही नहीं होता, बल्कि उन अनेक तरहकी दिक्कतोंसे भी होता है, जिन्हें वैज्ञानिक नहीं सोचते किन्तु जिनके बारेमें मुझे काफी सोचना पड़ता है। सबसे विचारणीय यह बात है कि देशमें हम जो कुछ करते हैं, उसकी देशकी जनतापर क्या प्रतिक्रिया होती है।

जब तक जनताकी सद्भावना, कमसे कम हम जो कुछ करते हैं उसके प्रति आंशिक सहानुभूति न होगी, हम अधिक आगे न बढ़ सकेंगे। जनता हमें ब्रेककी तरह रोक देगी। इसलिये यह बहुत जरूरी है कि हम जो कुछ भी करते हैं, वह देशकी जनताको बतलायें और समझायें।

बहुतसे लोग हैं जो सामाजिक आचार-विचार और रहन-सहनके सम्बन्धमें सीमित हैं और पुराने दृष्टिकोणको अपनाये हुये हैं। विज्ञानने पहले भी कुछ हद तक मनुष्यों को देवताओं के त्राससे मुक्त किया है, इस मामलेमें अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है, विज्ञान इस मामलेमें हमारी सहायता करे यह हम जरूर चाहेंगे। लेकिन देवी देवताओं के भयसे भी भयङ्कर, और एक भय है, वह भय, स्वयम् आदमीका अपना ही भय है। इस मामले में भी विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण सहायक हो सकता है।

कभी-कभी मैं सोचता हूं, खास कर विकसित भारतकी भावी मनोरम तस्वीर जब मेरे सामने खींचता हूँ, कि काश मैं जरा अधिक जवान होता। मेरे सामने भारतकी वह तस्वीर रहती है जब कि उसके युवा और युवतियां आनेवाले महान् भारतको गढ़ रहे हैं, जिसका हम ख्वाब देखते रहे हैं। फिर भी राष्ट्र-गठनके कार्य में भाग लेना काफी गौरवजनक है, बहुतों को इससे काफी सन्तोष मिला है। इस महान् कार्य में थोड़ी बहुत सहायता कर सकनेका आनन्द मुझे आन्दोलित कर देता है।

अन्वेषणशालाके मुहूर्तमें शामिल होनेके लिये आये हुए श्रमिक और सर्वसाधारणको सम्बोधित करते हुए पण्डितजीने कहा; इस अन्वेषणशालाका लक्ष्य भारतकी दरिद्रता दूर करना है, इसलिये उनकी सहानुभूति और सहयोग वांछनीय है।

६ दिसंबरकी घोषणा और कांग्रेस

६ दिसम्बरको ब्रिटिश सरकारने अपनी नयी घोषणा द्वारा भारतकी स्वाधीनताके कार्यमें और स्वाधीन भारतके विधान निर्माणमें एक नयी रुकावट पैदा कर दी। ब्रिटिश सरकारने ग्रूप सम्बन्धी कांग्रेसकी व्याख्या ही अस्वीकार नहीं की, बल्कि संघ न्यायालय द्वारा उसका निर्णय हो यह भी स्वीकार नहीं किया और अपनी तरफसे एक नयी बात जोड़ दी कि बी० या० सी० विभाग प्रान्तीय या ग्रूप सम्बन्धी विधानका निर्माण या और कोई निर्णय बहुमतसे कर सकते हैं, साथ ही ऐसा निर्णय किसी अनिच्छुक भागपर नहीं लादा जा सकता, यह कहकर इस गुत्थी को और भी उलझा दिया।

कांग्रेसके सामने एक नयी समस्या पैदा हो गयी। उसके नेताओंने गम्भीर विचार विमर्श और महात्मा गांधीसे सलाह लेनेके बाद, प्रान्त या प्रान्तके किसी भागके आत्म-निर्णयके सिद्धान्तको अक्षुण्ण रखते हुए विभागोंके कार्य निर्वाहके

सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारने ६ दिसम्बरको जो वक्तव्य दिया, उसे स्वीकार करनेके लिये अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने एक प्रस्ताव रखा। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने कांग्रेस कार्य कारिणीका प्रस्ताव रखते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरूने कहा; कांग्रेसको यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिये यह सीधा और स्पष्ट प्रस्ताव है।

हमारे सामने मुख्य प्रश्न यह है कि किस प्रकार विधान परिषद्को जीवित रखा जाय और उसके द्वारा देशकी अधिकाधिक भलाई की जा सके। ६ दिसम्बरका वक्तव्य मानकर हम लीग के लिये विधान परिषद्में आकर अपना दृष्टिकोण पेश करनेके लिये दरवाजा खुला रखते हैं। अगर हम ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार नहीं करते तो, ब्रिटिश सरकारको मौका मिल जाता है कि वह १६ मईके वक्तव्यको वापिस ले ले या बदल दे, जिसका परिणाम यह हो सकता है कि विधान परिषद्का रूप बिलकुल ही बदल जाय, पहले भी विधान परिषद्के बीचमें रोड़े अटकाये गये हैं, हमने उन दिक्कतोंको दूर कर लिया। अब भी हमें वैसी ही दिक्कतोंको दूर करना है, ताकि विधान परिषद्के महान् हथियारको कुण्ठित करनेका प्रयत्न असफल हो जाय और हम इसका उपयोग अपने देशके लिये कर सकें।

मैंने मेरठमें, मध्यकालीन सरकारमें जो संकट आनेवाला है, उसका जिक्र किया था, मैंने कहा था कि ब्रिटिश सरकारका रुख मध्यकालीन सरकारके कार्योंपर बुरा असर डाल रहा है। जो

कुछ उस समय कहा गया था, और जो भय प्रकट किया गया था वह अब सामने आ रहा है। उस समय तक ब्रिटिश सरकार हमारा काम रोकनेमें सफल होनेकी घोषणा नहीं कर सकी थी, लेकिन अब ब्रिटिश सरकार यह दावा कर सकती है और उसपर जोर दे सकती है। ब्रिटिश सरकारके कार्योंने झंझट पैदाकर दिये हैं, एक गम्भीर स्थिति उत्पन्न कर दी गयी है। और बड़ी सावधानीसे तैयार किया गया जो प्रस्ताव हाउसके सामने है, वह साफ सीधा और उस स्थितिका माकूल जवाब देनेवाला है।

हाउसको निर्णय करना है कि ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार किया जाय या नहीं। इस प्रश्नने बहुतोंके सरमें दर्द पैदा कर दिया है। हमारी यह आदत नहीं है कि जो चीज हमारे ऊपर लादी जाय उसे हम मंजूर कर लें। हमारी इच्छा होती है कि वक्तव्यमें जो चुनौती है उसे हम स्वीकार करें और अपनी पूरी ताकतसे उसका मुंहतोड़ जवाब दें। लेकिन हमारी भावुकताके विजयी होनेमें जो खतरा है, हमने उसे महसूस कर लिया है।

इस समय बहुत सी शक्तियां हमारे खिलाफ खड़ी हो गयी हैं, ऐसे संगीन मौकेपर हमें खूब सावधानीके साथ आगे बढ़ना है ताकि हम उन शक्तियोंका मुकाबिला कर सकें और उनपर हावी हो सकें। बस, यही एक खयाल है, जिसके कारण कार्यकारिणीने यह प्रस्ताव आपके सामने रखा है।

यह प्रस्ताव ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार करता है। कुछ महसूस कर सकते हैं कि यह एक तरहसे अपनी कमजोरी स्वीकार

करना है लेकिन मैं इसे स्वीकार नहीं करता। विधान परिषद्के अस्तित्वमें आनेके साथ साथ हमारे युद्धने एक नया रूप ग्रहण कर लिया है। अब हमारा लक्ष्य होना चाहिये कि विधान परिषद् न तो स्थगित हो और न उसका कार्य बन्द होने पाय। परिषद्ने अभी तक अपने पूर्ण रूपमें कार्य करना आरम्भ नहीं किया है, लेकिन मुझे आशा है कि दो सप्ताह बाद जब इसकी बैठक फिर आरम्भ होगी तो वह अपने पूर्ण रूपमें कार्य करने लगेगी। परिषद्के सम्बन्धमें महत्वपूर्ण नुकता यह है कि चाहे वह सर्वाधिकारिणी हो या न हो, परिषद्को ब्रिटिश सरकार भङ्ग नहीं कर सकती, सिर्फ शक्तिका उपयोग करके ही ब्रिटिश सरकार उसे जबरन भंग कर सकती है। जब ब्रिटिश सरकार इस प्रकार ताकतसे उसे भंग करना चाहेगी तब हमारे लिये वह मौका आयेगा जब हम निर्णय करेंगे कि उसका मुकाबिला कैसे किया जाय ?

मुख्य बात स्मरण रखनेकी यह है कि ९ दिसम्बरसे विधान परिषद कार्य करने लगी, और यद्यपि यह विधान परिषद हमारे आदर्शोंके अनुरूप नहीं है, फिर भी हमारी स्वाधीनता प्राप्त करनेके हथियारके रूपमें व्यवहृत की जा सकती है। इसलिये यह बहुत आवश्यक हो गया है कि परिषद्को स्थगित करने या बन्द करनेके प्रयत्नोंको रोका जाय। विधान परिषद्में जीवन है और यह हमें स्वाधीनताके पथपर बहुत दूर तक ले जा सकती है।

हमारे विरोधियोंके इसे बन्द करनेके प्रयत्न असफल हो गये। इसलिये अब उन्होंने इसके रास्तेमें रुकावटें डालनेका प्रकारान्तर ग्रहण किया है, इसीका फल है कि ६ दिसम्बरका वक्तव्य प्रकाशित किया गया। सन् १९१९ से ही हम हमेशा अपनी ताकतके भरोसे ही रहे हैं और भारतकी जनताकी ओर ही देखा है, हमने कभी अपना लक्ष्य प्राप्त करनेमें ब्रिटेनकी ओर नहीं ताका, न आज ताकेंगे। लेकिन हमारे संग्रामके इस संगीन मौकेपर हम अपने दुश्मनोंकी संख्या बढ़ाना नहीं चाहते।

लोग चाहती थी कि विधान परिषद्का कार्य जारी न रहे और देश आठ नौ महीने पहलेकी अवस्थाको फिर पहुंच जाय। अगर लीगकी यह इच्छा पूरी हुई तो जैसा हम वाजिब समझेंगे, उस स्थितिका सामना करनेके लिये निर्णय करेंगे। लेकिन फिलहाल हमारी तमाम ताकत, शक्ति और दृढ़तापूर्वक विधान परिषद् का कार्य बढ़ानेमें लगनी चाहिये। मुमकिन है कि हमें बिलकुल भिन्न मोर्चे पर जूझना पड़े, हमें उसके लिए भी तैयार रहना चाहिये। इस प्रस्तावको पास कर हम दुनियाको दिखलायेंगे कि हमने ऐसा इसलिये किया कि कोई यह न कहे कि हमने किसीके लिये दरवाजा बन्द कर कार्य किया। यह जाहिर करने के लिये कि हम दरवाजा खुला रखना चाहते हैं, हमने बहुतसी बातें की हैं और बहुतसे निर्णयोंको स्थगित कर दिया है, जिनके सम्बन्धमें हम चाहते थे कि अविलम्ब फैसला हो जाय। हम नहीं चाहते कि किसीको यह कहनेका मौका मिले कि हमने ब्रिटिश योजना भंग की।

आसामके निर्वाचित प्रतिनिधियोंने आसामको विभाग और ग्रूपमें न शामिल होनेका आदेश दिया है, अगर आसाम चाहे तो इस नुक्तेपर लड़ सकता है। लेकिन मैं यह याद दिला देना चाहता हूं कि एक या दो व्यक्तियोंके बहादुराना कार्योंसे ही युद्ध नहीं जीता जाता, बल्कि युद्धमें हजारोंके सहयोग तथा सब शक्तियोंके संग्रह और उचित उपयोग द्वारा ही विजय प्राप्त होती है। इस समय हमारा वर्तमान लक्ष होना चाहिये कि हम अपने विरोधियोंको परास्त कर दें। ऐसा मौका आ सकता है, जब आसामकी युद्ध करनेकी इच्छा पूरी हो, लेकिन वह युद्ध आसाम अकेला नहीं लड़ेगा, बल्कि सारा भारत उसके पीछे होगा।

मेरठमें मैंने कहा था, मैं नहीं जानता, कब तक मैं और मेरे साथी मध्यकालीन सरकारमें रहेंगे। मैं अब भी नहीं जानता हम कितने काल तक वहां रहेंगे। लोग स्वाधीनताके अन्तिम संग्रामकी चर्चा कर रहे हैं। लेकिन मैं सोचता हूँ कि स्वाधीनताका संग्राम अभी भी चालू है। मुमकिन है, इस संग्रामको निकट भविष्यमें हमें और भी जोरदार करना पड़े, लेकिन वर्तमान समयका तकाजा है कि हम अपनी वाणी संयत रखें और नया कार्य करनेके पहले ठण्डे दिलसे निर्णय करें।

भारतका भावी विधान

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भावी-विधान सम्बन्धी प्रस्तावके सम्बन्धमें बहसका जवाब देते हुए कहा ;—"जो लोग विधान सभामें शामिल होना चाहते थे, उन्हें काफी मौका दिया चुका है। बदकिस्मतीसे उन्होंने अभी तक शामिल होनेका कोई निर्णय नहीं किया। मुझे इसका खेद है। अब तो मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूं कि भविष्यमें वे जब भी आना चाहें, हम उनका स्वागत करेंगे। वे आना चाहें तो आ सकते हैं, मगर अब हम साफ किये देते हैं कि भविष्यमें किसीके आने अथवा न आनेका इन्तजार नहीं किया जायगा और गाड़ी रुकेगी नहीं। हमने काफी इन्तजार किया, ६ सप्ताहके लिए नहीं, कुछने सालों तक और देशने कई पीढ़ियों तक इन्तजार किया। आखिर-कार हम कब तक इन्तजार करें? यदि हममेंसे कुछ खुशहाल लोग इन्तजार कर सकते हों तो करें, लेकिन प्रश्न यह है कि देश के भूख-नंगे लोग कब तक इन्तजार करें।

रियासतोंकी सर्वोच्च सत्ताके प्रश्नका जिक्र करते हुए नेहरूजी ने कहा—"इस प्रस्तावमें सर्वोच्च-सत्ता प्रजामें निहित होनेका

प्रतिपादन है। किंतु कुछ रियासतोंके नरेश इसमें सहमत नहीं हैं। यह आक्षेप आश्चर्यजनक है। कहना न होगा कि यदि कोई नरेश अथवा कोई मन्त्री अथवा कोई और व्यक्ति ऐसा ऐतराज वस्तुत: गम्भीरतासे उठाता है तो हमें समूची रियासती प्रणाली तथा नरेशों व मन्त्रियोंकी एक साथ निन्दा करनी पड़ेगी। किसी भी व्यक्तिका आज यह कहना निन्दनीय है कि उसे मनुष्यों पर राज्य करनेका दैवी अधिकार प्राप्त है, फिर चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो। किसी भी व्यक्तिके ऐसे मन्तव्यको सहन नहीं किया जा सकता। यह एक ऐसी चीज है जिसे यह हाउस कभी स्वीकृत न करेगा। मुझे आशा है कि यदि यह चीज हाउसके सामने पेश की गई तो वह उसे रद्द कर देगा।

"राजाके दैवी-अधिकारके सम्बन्धमें हमने काफी सुना है। हमने अतीत कालके इतिहासमें भी इसके बारेमें काफी पढ़ा है। हमारा यह खयाल था कि इसका खात्मा हो चुका है और इसे चिरकालके लिये दफना दिया जा चुका है। लेकिन आज भारतमें यदि कोई इस प्रश्नको फिर उठाता है तो उससे प्रकट होता है कि भारतमें कुछ हिस्से और कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो वर्तमानका खयाल किये बिना अतीतमें सराबोर हैं। अतएव मैं उनसे एक मित्रके नाते निवेदन करूँगा कि यदि वे अपनी इज्जत चाहते हैं तो उन्हें उक्त खयाल अपने दिमागमें भी नहीं लाना चाहिये। इस सम्बन्ध में किसी किस्मका समझौता नहीं किया जा सकेगा।"

"यदि रियासतोंके प्रतिनिधि विधान-सभामें शामिल नहीं हैं तो इसमें हमारा कोई कसूर नहीं! यह कसूर उस योजनाका है, जिसके अनुसार हमें कार्य करना पड़ रहा है। अब हमें चुनाव करना है कि क्या कुछ व्यक्तियोंके यहां न आ सकनेके कारण हम अपना काम बन्द कर दें? रियासती प्रतिनिधियोंके यहां न आ सकनेके कारण इस प्रस्ताव पर ही नहीं, अपितु अन्य विषयों पर भी विचार करना बन्द कर देना खतरनाक होगा। जहाँ तक हमारा ताल्लुक है, हम चाहते हैं कि वे जितनी जल्दी आना चाहें आ सकते हैं। यदि वे अपनी २ रियासतोंके ठीक-ठीक प्रतिनिधि होकर आयेंगे तो हम उनका स्वागत करेंगे।"

"इस प्रस्तावमें हमने यह दावा किया है कि हमलोग सर्वतंत्र भारतके लिये प्रजातन्त्रके आधारपर विधान तैयार करेंगे। भारत के लिए हम और क्या चाह सकते हैं? कोई भी हालत क्यों न हो, हमलोग सिवा प्रजातन्त्री भारतके और किसी चीजकी कल्पना भी नहीं कर सकते।

"अब प्रश्न यह है कि उस प्रजातन्त्रका इङ्गलैंड, ब्रिटिश राष्ट्र समूह तथा अन्य देशोंके साथ कैसे सम्बन्ध रहेंगे? चिरकालसे हमलोग स्वाधीनता दिवसपर यह प्रतिज्ञा लेते आ रहे हैं कि भारत को ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध विच्छेद कर लेना चाहिये, क्योंकि यह सम्बन्ध ब्रिटिश गुलामीका प्रतीक है। हमने कभी यह खयाल नहीं किया कि हम विश्वके दूसरे देशोंसे अलग-अलग रहें अथवा उन देशोंका विरोध करना शुरू कर दें जो अब तक हमपर शासन

करते रहे हैं। आज हमलोग आजादीकी देहलीपर खड़े हैं। इस नाजुक घड़ीमें हम किसी भी देशके साथ संघर्ष मोल न लेंगे। हम सबके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेंगे। हमलोग ब्रिटिश जनता व ब्रिटिश राष्ट्र समूहके साथ भी मैत्री स्थापित करना चाहते हैं।

"मैं अपना यह प्रस्ताव न केवल इसहाउस अपितु समूचे विश्व के सामने प्रस्तुत कर रहा हूं। इस प्रस्ताव द्वारा हम यह साफ कर देना चाहते हैं कि हम सबके साथ मैत्री चाहते हैं, हम किसीके साथ बैर-विरोध नहीं करेंगे। हमने अतीत कालमें काफी संघर्ष किया है और शायद हमें भविष्यमें भी कोई संघर्ष करना पड़े, लेकिन एक महात्माके नेतृत्वमें हमलोगोंने सबके साथ और यहाँ तक कि अपने विरोधियोंके साथ भी मैत्री व सद्भावनापूर्ण व्यवहार करनेकी सोची है। आज इस विधान सभामें हम लोग एक महान् आदर्शको लेकर उपस्थित हैं। इस प्रस्तावमें भी उसका जिक्र कर दिया गया है। मुझे आशा है कि हमारी आजादीसे एशियाके दूसरे देश भी आजाद हो जायेंगे। हमलोग एक तरह एशियाई देशोंकी आजादीके नेता हो चुके हैं।